जीव-विज्ञान मिश्रित
की
प्रारम्भिक पुस्तक
A BOOK OF ELEMENTARY BIOLOGY

(हाई स्कूलों की कक्षा ९ व १० के लिए)

प्रकाशक—

नन्दकिशोर एण्ड ब्रदर्स,

बनारस ।

द्वितीय संशोधित संस्करण

१९४९

मूल्य २॥)

पूज्यपाद स्वर्गीय पिताजी

की

पुनीत स्मृति में,

जिनके आशीर्वादों तथा शुभकामनाओं से ही
मेरी शिक्षा सम्भव और सफल हुई ।

प्रणेता ।

प्रथम संस्करण का वक्तव्य

संयुक्तप्रान्त के हाई स्कूल के पाठ्य विषयों में साधारण विज्ञान को सम्मिलित कर लेने के समय से अब तक किसी ऐसी उपयुक्त पाठ्यपुस्तक (विशेष कर हिन्दी में लिखी हुई पाठ्य-पुस्तक) के प्रणयन तथा प्रकाशन के लिए, जो हाई स्कूल तथा इण्टरमीडियेट शिक्षा बोर्ड के लिए विदित प्राणिशास्त्र के पाठ्य-क्रम की आवश्यकताओं की पूत सैद्धान्तिक तथा प्रमाणात्मक दोनों दृष्टियों से कर सके, बहुत कम प्रयत्न हुए हैं। इस प्रकार प्रतिवर्ष सामान्य विज्ञान को अपना पठन विषय बनाने वाले विद्यार्थियों की संख्या में वृद्धि के साथ साथ एक अच्छी पाठ्य-पुस्तक की मांग में भी वृद्धि हो गई है। इस मांग की पूर्ति के लिए इस छोटी सी पुस्तक के प्रणयन का प्रयास, मेरे सहयोगी पं० गङ्गाशरणजी भार्गव, बी० एस० सी०, एल० टी० की प्रेरणा से किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक में वैज्ञानिक ढंग से उन विभिन्न प्रसंगों का निरूपण किया गया है जो प्राणिशास्त्र तथा वनस्पतिशास्त्र के अध्ययन के लिए अलग अलग पाठ हो सकते हैं। विषय का निरूपण पूर्ण तथा युक्ति संगत है, और रुचिकर ढंग से प्राणियों तथा वनस्पतियों के अध्ययन के अन्तर्भूत विविध प्रसंगों तथा उनके अन्योन्याश्रय को प्रस्तुत करता है। सारी पुस्तक में व्यव-हृत भाषा सरल हिन्दी है जो उत्तरी भारत में बोली और समझी जाती है। परन्तु, विद्यार्थियों को कालेज की ऊँची कक्षाओं में

प्राणिशास्त्र तथा वनस्पतिशास्त्र के अध्ययन को जारी रखने में समर्थ बनाने के अभिप्राय से उन्हें पारिभाषिक शब्दों के अंग्रेजी तथा हिन्दी दोनों रूपान्तरों से परिचित रखने के लिए हर प्रकार का प्रयत्न किया गया है। जहाँ हिन्दी समानार्थक शब्द नहीं मिल सके वहाँ अंग्रेजी पारिभाषिक शब्द ही हिन्दी में लगा दिये गये हैं।

जीव-विज्ञान के अध्ययन को अधिक सजीव तथा रुचिकर बनाने के लिए प्रस्तुत पुस्तक में प्रसंगानुकूल साफ़ सुथरे १५७ रेखाचित्र दिये गये हैं जो विद्यार्थियों में विषय के प्रति स्थायी रुचि उत्पन्न कर सकेंगे। उनमें से कुछ तो उत्कृष्ट श्रेणी के तथा अपने ढंग के अनुपम हैं।

प्रत्येक अध्याय के अन्त में कुछ चुने हुए प्रश्न दिये गए हैं, जिनमें से कुछ यू० पी० बोर्ड की हाई स्कूल परीक्षा से लिये गये हैं। यह आशा की जाती है कि ये प्रश्न विद्यार्थियों की मेधाशक्ति की जाँच कर लेंगे और उन्हें अपनी अन्तिम परीक्षा की तैयारी में सहायता प्रदान करेंगे।

इस अवसर पर मैं पं० गङ्गाशरण जी भार्गव के प्रति अपनी कृतज्ञता का प्रकाशन करना अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक की तैयारी में बहुमूल्य सुझाव तथा संशोधन प्रस्तुत किये हैं। मैं श्री नन्दकिशोर एण्ड ब्रदर्स का आभारी हूँ जिन्होंनेइस पुस्तक के प्रकाशन का भार उठाया है। श्री लालबहादुर सिंहजी, एम्० एस्० सी० को इस पुस्तक को पर्याप्त वैज्ञानिक रूप देने में सहायता प्रदान करने के निमित्त तथा श्रीलाल सिंह जी, एम्० ए० को पाण्डुलिपि के पर्यवेक्षण के लिए भी मैं धन्यवाद देता हूँ।

अन्त में मैं आशा करता हूँ कि यदि प्रस्तुत पुस्तक से उन विद्यार्थियों को वास्तविक लाभ होता है, जिनके लिये इसका प्रणयन हुआ है तो मैं अपने श्रम को सफल समझूँगा। पुस्तक को और उपयोगी बनाने की दृष्टि से सामान्य विज्ञान के शिक्षकों द्वारा भेजे हुए सभी सुझाव कृतज्ञता पूर्वक स्वीकृत किये जायँगे।

बनारस
२२ दिसम्बर, १९४१

बाँके बिहारी श्रीवास्तव

द्वितीय संस्करण का वक्तव्य

मानव सुलभ अनेक त्रुटियों से पूर्ण रहने पर भी मेरी इस छोटी सी पुस्तक को विद्यार्थियों तथा शिक्षकों की ओर से जो आदर तथा प्रोत्साहन मिला है, वह मेरे लिए हर्ष तथा संतोष का विषय है। इस नवीन संस्करण में प्रसंगानुकूल कतिपय उपयोगी संशोधन तथा परिवर्धन किये गये हैं। भाषा को भी अधिक रुचिकर तथा सरस बनाने का प्रयत्न किया गया है। कुछ और चित्र तथा रेखा-चित्र जोड़ दिये गये हैं। प्रथम संस्करण की सभी त्रुटियों से यह नवीन संस्करण मुक्त है।

आशा है कि विद्यार्थीगण तथा शिक्षक मेरे प्रयत्न को सदा की भाँति ही प्रोत्साहन देते रहेंगे।

बनारस
१४ जनवरी, १९४९

बाँके बिहारी श्रीवास्तव

विषय-सूची (Contents)

PART I

प्रा णि शा स्त्र

अध्याय

Elementary Physiology of Human Body

Animals in Relation to Man

PART II

वनस्पति-शास्त्र

प्रस्तावना

Introduction.

इस संसार में जितनी चीजें हम देखते हैं वे दो भागों में बाँटी जा सकती हैं—(1) जीवधारी (Living organisms) और (2) निर्जीव (Non-living things)। साधारणतया सब लोग इन दोनों में भेद मालूम कर सकते हैं यद्यपि यह बताना कठिन है कि जीवन क्या है अथवा जीवधारियों की उत्पत्ति कैसे हुई। यदि विचार किया जाय तो इन दोनों में निम्नलिखित वैज्ञानिक भेद हैं।

जीवधारी और निर्जीव (Living and Non-living)— (१)जीवधारी चलते-फिरते रहते हैं, तथा उनमें गति होती है जो उनकी इच्छा के अनुसार होती है, लेकिन निर्जीव स्थिर रहते हैं। कुछ ऐसी निर्जीव वस्तुएँ हैं, जैसे इंजिन, मोटरकार, हवाई जहाज इत्यादि जिनमें गति तो होती है, परन्तु यह उनकी इच्छा पर निर्भर नहीं रहती और इनमें जो शक्ति (Energy) कोयले या पेट्रोलके द्वारा उत्पन्न की जाती है उसे वे स्वयं पूरी नहीं कर सकते।

(२) जीवधारी भोजन करते हैं और बढ़ते रहते हैं, पर यह बात निर्जीवों में नहीं पाई जाती। परन्तु कुछ निर्जीव ऐसे हैं जैसे रवा (Crystal) आदि जिनको यदि उनके संपृक्त घोल (Saturated solution) में रख दिया जाय तो वे बढ़ जाते हैं। केवल भेद यह है कि रवे का बढ़ना ऊपर के जोड़ से होता है, परन्तु जीवधारी का बढ़ना अन्दर से बाहर की ओर होता है।

(३) जीवधारी सर्वदा साँस लेते रहते हैं अर्थात् ऑक्सीजन (Oxygen) लेते हैं और कारबन डाई-ऑक्साइड (Carbon di-oxide) छोड़ते है। इसके बिना कोई जीवधारी जीवित ही नहीं रह सकता। निर्जीव में यह बात नहीं पाई जाती।

(४) जीवधारी प्रोत्साहन (Stimulus) के प्रति इन्द्रियविशिष्ट (Sensitive) होते हैं—जैसे मच्छड़ के काटने पर उसको उड़ा देना, तने का रोशनी की ओर जाना, फूल का खिलना इत्यादि; लेकिन निर्जीव जैसे ईंट, पत्थर आदि में ऐसा नहीं होता। तो भी पटाका आदि कुछ निर्जीव पदार्थों को यदि चिनगारी से प्रोत्साहन दिया जाय तो उनमें गति विस्फोट के रूप में दिखलाई पड़ती है, परन्तु ऐसा करने में उसका अस्तित्व ही नष्ट हो जाता है।

(५) जीवधारी में परिपाचन (Nutrition) और उसके साथ साथ मल, हानिकारक वस्तुओं, या पानी का त्याग और शोषण (Assimilation) करने की शक्ति होती है, परन्तु यह निर्जीव में नहीं होती।

(६) जीवधारी में जनन करने (Reproduction) की शक्ति व इच्छा रहती है, परन्तु निर्जीव में ये बातें नहीं होतीं।

(७) जीवधारी में समाज (Society) और लेन-देन की प्रथा रहती है, परन्तु निर्जीव में यह नहीं होती।

(८) जीवधारियों में जीवन प्रदान करनेवाली वस्तु प्रोटोप्लाज्म (Protoplasm) पाया जाता है, जो निर्जीव में नहीं होता।

जीवविद्या (Biology)—जीवधारियों के बारे में वैज्ञानिक ढंग से पढ़ने को जीवविद्या (Biology) कहते हैं। इसके दो भाग हैं—(१) प्राणिमात्र (Animals) और (२) वनस्पतिमात्र (Plants)। प्राणिमात्र के बारे में विज्ञानानुसार पढ़ने को प्राणिशास्त्र (Zoology) कहते हैं और वनस्पतिमात्र के बारे में अध्ययन को वनस्पतिशास्त्र (Botany) कहते हैं।

प्राणीमात्र व वनस्पतिमात्र—वैज्ञानिक दृष्टि से प्राणिमात्र व वनस्पतिमात्र में कोई विशेष भेद नहीं है क्योंकि दोनों जीवधारी हैं और प्रोटोप्लाज्म (Protoplasm) जो जीव का मुख्य अंग है दोनों में पाया जाता है। प्रोटोप्लाज्म एक अर्ध-तरल (Semi-fluid) पदार्थ है जो प्रत्येक जीवधारी के हर एक कोष्ठ (Cell) में पाया जाता है; इसी पर इनका जीवन निर्भर है। इसके अतिरिक्त प्राणिमात्र और वनस्पतिमात्र में ऑक्सीजन

क लेना और कारबन डाई-ऑक्साइड का देना यानी साँस का लेना, भोजन करना, जीव उत्पन्न करना इत्यादि देखा जाता है। तथापि इन दोनों में निम्नांकित भेद हैं।

(१) प्राणिमात्र चलते-फिरते रहते हैं और वनस्पतिमात्र एक जगह स्थायी रूप में रहते हैं। परन्तु कुछ छोटे प्राणी जैसे मूँगे (Corals) स्थायी रूप में ही रहते हैं और कुछ छोटे वनस्पति जैसे लेदार (Spirogyra) और एक कोष्ठ वाले पौधे (Unicellular plants) चलते फिरते रहते हैं।

(२) प्राणि-मात्र में अपने शरीर के अन्दर कोई भोजन बनाने का यंत्र नहीं होता, परन्तु वनस्पति अपना भोजन स्वयं हरी पत्तियों के द्वारा बनाती हैं।

(३) प्राणि-मात्र का भोजन ठोस पदार्थ है जिनमें मुख्यतः सजीव पदार्थ (Organic substances) होते हैं, जैसे प्रोटीन (Protein), कार्बोहाइड्रेट (Carbo-hydrates), चर्बी (Fats) इत्यादि, परन्तु वनस्पतिमात्र का भोजन केवल निर्जीव या जड़ पदार्थों (Inorganic substances) का होता है जो तरल (Liquid) अथवा गैस (Gas) के रूप में होते हैं जैसे पानी में घुला हुआ खाद, कार्बन डाइ-आक्साइड (Carbon di-oxide) इत्यादि।

(४) प्राणिमात्र के शरीर के प्रत्येक कोष्ठ किसी झिल्ली द्वारा पृथक् पृथक् नहीं होते परन्तु वनस्पतिमात्र के शरीर के प्रत्येक कोष्ठ पृथक् पृथक् होते हैं (चित्र १)।

चित्र १—वनस्पतिमात्र का एक कोष्ठ और उसका भाग।

इन भेदों के होते हुए भी कुछ छोटे छोटे जीव-धारियों को वनस्पति या प्राणिमात्र कहने में वैज्ञानिकों का कभी कभी आपस में मतभेद हो ही जाता है।

अध्ययन के भिन्न भिन्न रूप (Various Aspects of Study)—प्रत्येक जीवधारी का निरीक्षण (Study) कई रूपों (Aspects) में होता है। किसी जीवधारी के बाहरी रूप, भीतरी व बाहरी बनावट इत्यादि के पढ़ने को मॉर्फोलॉजी (Morphology) कहते हैं। मॉर्फोलॉजी के उस भाग को जिसमें केवल भीतरी अंगों का ही वर्णन होता है, एनॉटॉमी (Anatomy) कहते हैं और कुछ छोटे छोटे भागों को अनुवीक्षण यंत्र या खुर्दबीन (Microscope) की सहायता से देखकर पढ़नेको हिस्टॉलॉजी (Histology) कहते हैं। किसी जीवधारी के बारे में इन तीनों रीतियों से ज्ञान प्राप्त करने पर ही उसको जीवधारियों में सच्चा व ठीक स्थान दिया जाता है।

इसके अतिरिक्त जीवधारियों की उत्पत्ति (Development) के विषय में जानकारी प्राप्त करने को एम्ब्रियॉलॉजी (Embryology) कहते हैं। इनके हर एक अंगों के काम (Functions) के बारे में जानने को फीजियॉलॉजी (Physiology) कहते हैं। इन पाँचों रीतियों से जानकारी प्राप्त करने पर ही हम भलीभाँति उसके बारे में विज्ञानानुसार ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

दोहरा नामकरण (Binomial Nomenclature)—प्राणिशास्त्र के बारे में ज्ञान प्राप्त करने के लिए हम मुख्यतया मेढ़क (Frog) व मनुष्य (Human beings) और वनस्पतिशास्त्र के सम्बन्ध में सेम (Bean) और सरसों (Mustard) के बारे में पढ़ेंगे। ऐसे तो मेढ़क, सरसों इत्यादि कई प्रकार के होते हैं ; जैसे—(१) पानी का मेंढ़क, पेड़ का मेंढ़क और टोड (Toad) इत्यादि, (२) लाल सरसों, सफेद सरसों इत्यादि। लेकिन अन्य मेढ़कों से पानी के मेंढक को पहिचानने के लिए उनको दोहरे नाम से पुकारा जाता है। जैसे, साधारण मेंढ़क (Common Indian Tiger Frog) को रैनाटिग्रिना (Rana tigirna) और सेम को डॉलीकॉस लेब लेब (Dolichos lab-lab) कहते हैं। इन नामों में पहला अक्षर उस जीवधारी का मुख्य वर्ग (Genus or Community) और पिछला अक्षर उसकी जाति (Species or

Sub-caste) बतलाता है। इस तरह के नाम देने को दोहरा नाम देना (Binomial nomenclature) कहते हैं।

यह भी बतला देना यहाँ आवश्यक होगा कि जीवविद्या का प्रारम्भ मेंढ़क के अध्ययन से ही क्यों होता है। मेंढ़क एक ऐसा जीव है जो संसार के सभी बसे हुए भागों में सरलता से प्राप्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त इस के शरीर के सभी अंग सरलता के साथ पहचाने और देखे जा सकते हैं। परन्तु सबसे मुख्य कारण तो यह है कि इसके शरीर के सभी अंगों के अध्ययन करने पर मनुष्य के शरीर का अध्ययन करना सरल हो जाता है, क्योंकि इनके अंग बहुत कुछ आपस में मिलते जुलते हैं।

अभ्यास

१. निम्नलिखित को कारण सहित जीवधारी और निर्जीव में वर्गीकरण करो :—

किताब ; चींटी ; घोंघा ; वर्षा ; स्पंज ; धूल ; मूँगा ; टारपीडो ; विद्युत् ईल ; विद्युत्।

२. प्राणिमात्र और वनस्पतिमात्र में क्या भेद है? निम्नलिखित में कौन कौन प्राणिमात्र अथवा वनस्पतिमात्र हैं :—

छत्ता (कुकुरमुत्ता); काकून (Cocoon); स्पंज ; कीटाणु ; लेदार (Spirogyra); काई ; शंख ?

३. (क) निम्नांकित के बारे में लिखो :—

प्रोटोप्लाज्म (Protoplasm) ; एक कोष्ठ वाले जीवाणु ; ऐनाटामी (Anatomy)।

(ख) दोहरे नामकरण से क्या लाभ है ?

BIOLOGY OF THE FROG

अध्याय १

आदतें (General Habits)

एस्टीवेशन (Aestivation)—मेंढक अधिकतर बरसात के आरम्भ होते ही अथवा जून के महीने के अन्त में दिखलाई पड़ते हैं। इस समय इनका रंग पीला रहता है क्योंकि गर्मी के दिनों में पानी की कमी और तीव्र गर्मी के कारण अपनी जान बचाकर ये जमीन के नीचे किसी तर स्थान में पड़े रहते हैं। मेंढकों के इस तरह गर्मी के दिनों में छिप जाने अथवा आराम करने को गर्मी की **नींद** या **एस्टीवेशन** (Aestivation) कहते हैं। यह काल (Period) लगभग अप्रैल से जून तक रहता है।

हाइबरनेशन (Hibernation)—जाड़े के दिनों में भी मेंढक (चित्र २) अपने को जाड़े व पाले से बचाने के लिये जमीन के भीतर किसी स्थान पर आराम से पड़ा रहता है, क्योंकि मेंढक हम लोगों की तरह गर्म खून वाला (Warm-blooded) नहीं, बल्कि ठंडे खून वाला (Cold-blooded) जीव है। इसलिये वायु के तापक्रम के बढ़ने-घटने से इसके शरीर का तापक्रम भी कुछ चढ़ता या गिरता रहता है। यही कारण है कि यह कड़ी गर्मी या जाड़ा को सहन नहीं कर सकता। यदि इन दिनों में यह अकस्मात् जमीन के बाहर आ जाय तो कुछ ही दिनों में सूखकर इसकी मृत्यु हो जाती है। मेंढकों के इस तरह जाड़े के दिनों में आराम करने या सोने को जाड़े की नींद या **हाइबरनेशन** (Hibernation) कहते हैं। यह काल लगभग नवम्बर से फरवरी तक रहता है। फरवरी के बाद वसन्त के आरम्भ
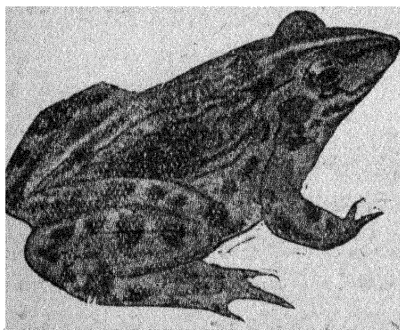
चित्र २—मेंढक

होते ही मेंढ़क भूख से व्याकुल होकर रात में और कभी कभी छिपकर दिन में घासों या पानी में दिखलाई देते हैं।

मेंढ़क का बोलना (Croaking)—बरसात का पहिला पानी पड़ते ही झुण्ड के झुण्ड मेंढ़क बाहर बोलते हुए दिखलाई देने लगते हैं। इनकी विचित्र बोली जो बरसात के आने की पहली पहिचान है, सब लोगों ने सुनी ही होगी। यदि ध्यान से देखा जाय तो मालूम होगा कि सब मेंढ़क नहीं बोलते बल्कि वे ही बोलते हैं जिनके नीचे के जबड़े में दोनों तरफ भूरी या काली सिकुड़ने (Foldings) होती हैं। ये सिकुड़नें फूलती या पचकती दिखलाई देती हैं और इनके पचकने से आवाज़ निकलती हैं।

कूदना (Jumping)—बाहर निकलते ही मेंढ़क इधर उधर भोजन की खोज में फुदुकने लगता है। अपने आगे के पैरों पर वह अपने शरीर को उठाये और टिकाये रहता है। शरीर का पिछला भाग पिछली टाँगों पर ज़मीन के सहारे सँभला रहता है, परन्तु दोनों आगे व पीछे की टाँगें इस तरह अन्दर की ओर घुमी रहती हैं गोया मेंढ़क कुदने ही वाला है। कूदने के समय मेंढ़क आगे के पैरों पर सँभल कर पीछे के पैरों से धक्का देकर उछलता और कूदता है।

मेंढ़क की पिछली टाँगें जो अंग्रेजी के ज़ेड (Z) अक्षर की तरह बैठने की हालत में रहती हैं, इसको उछलने में कमानी (Spring) का काम देती हैं अर्थात् ज़ेड (Z) अक्षर की तरह ये दोनों जोड़ों पर फैलती और सिकुड़ती रहती हैं। यह बात मेंढ़क के तैरने की दशा में और भी स्पष्ट हो जाती है।

भोजन ग्रहण करना (Feeding)—मेंढ़क दो महीने के आराम के बाद बहुत भूखा रहता है और फौरन हरएक चलते-फिरते केंचुए, कीड़े-मकोड़े, फतिंगे, घोंघे या छोटे मेंढ़क को देखते ही उसको खाने के लिये उतारू हो जाता है। वह अपनी दोहरी (Bifid) जीभ को जो आगे की तरफ जुड़ी रहती है और लसदार होती है, तुरन्त बाहर फेंकता है और फतिंगे आदि को अपनी जीभ पर चिपका कर मुँह में डाल लेता है और निगल जाता है (चित्र ३)। वह इतना भूखा रहता है कि थोड़ी ही देर में अपनी लपलपाने वाली लसदार जीभ से बहुत से कीड़े मकोड़ों को चट कर जाता

है। शिकार को पकड़ने के लिये पहिले से ही वह अपनी जीभ को कुछ कुछ लपलपाया करता है जिससे उसे शिकार पकड़ने में देर न हो जाय।

चित्र ३—फतिङ्गा पकड़ते समय मेंढक के जीभ का चित्र।
f–bifid sticky tongue; *p*–prey.

तैरना (Swimming)—किसी भय से या पानी में जाने की आवश्कता पड़ने पर मेंढ़क कूदकर पानी में चला जाता है और तुरन्त अपनी पिछली टाँगों से, जो जेड (Z) के रूप में शरीर में लगी हैं और जिसकी उँगलियाँ आपस में बत्तख या हंस की टाँगों की उँगलियों की भाँति झिल्ली से जुड़ी हुई हैं, पानी को धक्का देकर तैरने लगता है। इस दशा में ये टाँगे पतवार का काम करती हैं औ वह इस तरह अपने को सँभालता है कि दोनों सिर में उभड़ी हुई आँखें (Bulging eyes) और नासिका (Nostrils) पानी की सतह के ऊपर ही रहें (चित्र ४)। इस तरह पानी में रहते हुए वह अपनी आँखों से अपने शत्रुओं

चित्र ४—पानी की सतह के ऊपर मेंढ़क की उभड़ी हुई आँखें और नासिकाएँ।

यानी साँप, बगुला, कौआ, चील और मनुष्य को देख सकता है और नाक से साँस भी ले सकता है। डूबते समय वह अपने सिर को पहिले पानी में तिरछे डालता है और तब पिछली टाँगों से धक्का देते हुए पानी में निकल जाता है। कुछ देर पानी में तैरने के बाद वह सतह पर चला आता है।

दूसरे कार्य (Other Actions)—मेंढ़क साँस लेता है जो उसके नीचे के जबड़े के बराबर नीचे ऊपर हिलने से मालूम होता है। यह अपने चर्म से भी तर स्थानों में या पानी में साँस लेता रहता है। इसका चर्म बहुत चिकना और लसदार (Slimy) होता है जिससे पकड़ने पर यह तुरन्त फिसल जाता है। यह मल-मूत्र त्याग करता है जो इसके एकमात्र छिद्र (Cloacal aperture or Anus) के द्वारा बाहर निकलता है। इसी छिद्र के द्वारा नर या माँदा मेंढ़क वीर्य अथवा रज (Sperms or Ova) का भी त्याग करते हैं।

अण्डे देना (Breeding)—मादा मेंढ़क बरसात के आरम्भ होते ही अर्थात् जून के अन्त में अथवा जुलाई के आरम्भ में खूब भोजन कर लेने के पश्चात् पानी की सतह पर अंडा देती है, परन्तु कभी कभी इसके अंडे मार्च में भी पानी पर तैरते हुए देखे जाते हैं। इसका कारण यह है कि हाइबरनेशन के बाद किसी भाग्यशाली मादा मेंढ़क को खूब भोजन मिल जाता है और वह अंडे दे देती है लेकिन अधिकतर ये अंडे बढ़ने नहीं पाते।

चूँकि मेंढ़क पानी का जानवर (Aquatic animal) है और स्पर्म (Sperms) और ओवा (Ova) के छोड़ने के लिये भी इसको पानी की ही आवश्यकता पड़ती है, इसलिये हमेशा पानी के समीप ही रहता है। कभी कभी यह नम जगह जैसे हरी घास में भी रहता है, लेकिन घूम-फिर कर पानी में फिर चला जाता है। इसी कारण यह भारतवर्ष के उन भागों में जैसे बंगाल, बिहार, बंबई, मद्रास इत्यादि जहाँ पानी अधिक बरसता है, बहुत पाया जाता है, परन्तु राजपूताना, सिंध, उत्तरी-पश्चिमी सीमाप्रान्त और पहाड़ी स्थानों में जहाँ पानी कम बरसता है और ठंडक अधिक रहती है, कम पाया जाता है।

टोड (Toad)—मेंढ़क का रिश्तेदार टोड (Toad) मेंढ़क से बहुत-सी बातों में भिन्न होता है। यह पानी का जानवर नहीं है यद्यपि अंडा अथवा स्पर्म देने के लिये इसको भी पानी की शरण लेनी ही पड़ती है। इसलिये इसका शरीर न तो चिकना है और न इसके पिछले पैर की उँगलियाँ ही झिल्ली द्वारा मिली हुई होती हैं (चित्र ५)। कदाचित् इसीलिये प्रकृति ने इसके शरीर में ऐसी थैलियाँ दी हैं जिनमें एक प्रकार का जहर होता है, जिससे यह अपने शत्रुओं से बचा रहे। इसके अतिरिक्त टोड के दाँत भी नहीं होते।

चित्र ५—टोड

अभ्यास

१. हाइबरनेशन (Hibernation) के बारे में जो कुछ जानते हो लिखो। क्या कारण है कि दिसम्बर अथवा मई के महीने में बहुधा मेंढ़क कमरों में मरा हुआ पाया जाता है?

२. किसी तालाब के किनारे बैठे हुए एक मेंढ़क पर किसी लड़के ने एक पत्थर मारा। वह मेंढ़क पनी में कूदा और लुप्त हो गया। बयान करो कि मेंढ़क के शरीर के अंग उसके इस कार्य में किस भाँति सहायता पहुँचाये।

३. चित्रों द्वारा बतलाओ कि मेंढ़क किस प्रकार भोजन ग्रहण करता है। उन वस्तुओं का नाम लिखो जिनको वह भोजन के रूप में लेता है।

४. (क) मेंढ़क की आँखें क्यों उभड़ी हुई बनाई गई है?

(ख) मेंढ़क किस प्रकार बोलता है?

(ग) मेंढ़क और टोड (Toad) में कौनसी भिन्नता है?

५. तुम कब और कहाँ से मेंढ़क के अंडे प्राप्त करोगे? इनके अंडे टोड के अंडों से किस प्रकार भिन्न हैं?

अध्याय २

बाहरी अंग और मुख

(External Characters and Buccal Cavity)

मेंढ़क को बेहोश करने की विधि (How to chloroform a Frog)—यह पहले ही बतलाया जा चुका है कि मेंढ़क पानी का जानवर है। बरसात के दिनों में किसी तालाब या पोखरी के समीप जाकर मेंढ़क पकड़नेवाले जाल से एक मेंढ़क पकड़ो। इसके शरीर को छूने से तुम्हें उसका चिकनापन मालूम होगा। इसको किसी बड़े बरतन (Jar) में रख दो और कुछ रूई को एक दो बूँद क्लोफार्म (Chloroform) से भिंगोकर इसी बरतन में डाल दो और बरतन को ढँक दो। थोड़ी देर में मेंढ़क बेहोश होकर मर जायगा। उसे चीरने के तख्ते (Dissecting board) या बरतन (Dissecting dish) में फैलाकर रख दो।

इसी प्रकार बेहोश किये हुए मेंढ़क के शरीर को कैंची द्वारा खोलकर तुम्हारे अध्यापक तुम्हें उसके शरीर के भिन्न भिन्न अंगों को दिखलावेंगे।

ऊपरी भाग (Dorsal Parts)—मेंढ़क का शरीर चिकना और शुरू-शुरू में पीला होता है, लेकिन जैसे-जैसे बरसात होती जाती है और घास पीली से हरी होने लगती है, उसके साथ ही साथ मेंढ़क के ऊपर का भाग भी चित्तीदार होता जाता है। ये चित्तियाँ कुछ हरी और पीली होती हैं। इसके बीचोबीच पीठ पर एक पीली लकीर होती है। इसका निचला भाग (Ventral side) भी पीला ही रहता है। इस तरह के रंग होने से मेंढ़क भली भाँति शत्रुओं से अपने को हरी हरी घास या झाड़ियों में छिपाकर बचा सकता है। इस तरह पड़ोस के रंग से शरीर के रंग के मिलने को मिमिक्री (Mimicry) कहते हैं।

मेंढ़क के शरीर के दो भाग किये जा सकते हैं—(१) सिर और (२)

धड़। इसके गर्दन नहीं होती। इसीलिये प्रकृति ने इसकी आँखें उभड़ी हुई बनाई हैं। इसका थूथुन (Snout) कुछ त्रिभुजाकार (Conical) व चपटा रहता है जो आगे की तरफ बिलकुल नुकीला नहीं होता (चित्र ६)। इस तरह का सिर होने से मेंढ़क को तैरने में बहुत आसानी होती है। ऊपर और थोड़ा आगे की ओर दो छेद होते हैं जिनको नाक के छिद्र (Nostrils) कहते हैं। इसके द्वारा मेंढ़क साँस लेता रहता है। इसके पीछे दो आँखें होती हैं जो उभड़ी रहती हैं। इनको मेंढ़क अपनी इच्छा के अनुसार अन्दर या बाहर कर सकता है। इनको वह चारों ओर घुमा भी सकता है। इन आँखों के बीच में एक काला गोल धब्बा
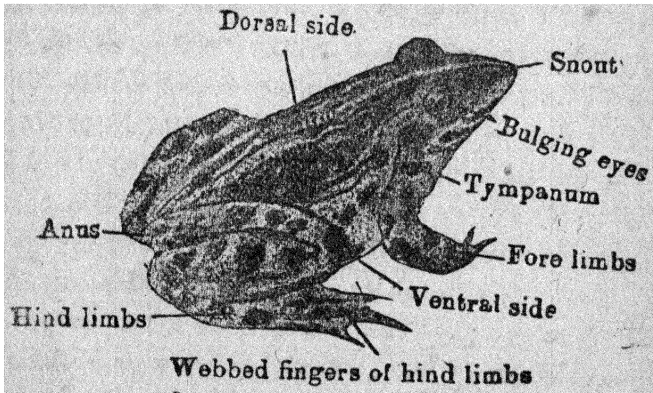
चित्र ६—मेंढ़क के बाहरी अग।

होता है जिसको पुतली (Pupil) कहते हैं। ये आँखें दो पलकों, एक ऊपर और दूसरी नीचे के अन्दर रहती हैं। इन पलकों में हम लोगों की तरह बरौनी या बाल (Eye-brows and eye-lashes) नहीं होते। इसकी निचली पलक के भीतर एक झिल्ली होती है जिसको निक्टिटेटिंग झिल्ली (Nictitating membrane) कहते हैं जो पारदर्शी (Transparent) होती है। इससे मेंढ़क अपनी आँखों (Eye-balls) को, पानी में रहते समय उनमें कोई कण पड़ जाने के डर से ढँक लेता है।

इन आँखों के पीछे कुछ नीचे की ओर दो गोलाकार चित्तियाँ होती हैं

जिनको कान की झिल्ली (Tympanic membrane or Tympanum or Ear-drum) कहते हैं (चित्र ६).। इसी के द्वारा मेंढ़क बाहर की ध्वनि अथवा शब्द को सुन सकता है। मेंढ़क के कान हम लोगों के कानों की तरह नहीं होते, नहीं तो पानी में तैरने में इसे रुकावट होती। इसके अतिरिक्त धड़ से अंत में एक छिद्र होता है जिसके द्वारा मेंढ़क मल, मूत्र, अण्डे या स्पर्म का त्याग करता है। नर मेंढ़क के नीचे की ओर नीचे के जबड़े में दो झिल्लियाँ (Foldings) होती हैं जिससे यह बोला करता है।

निचला भाग (Ventral Parts)—मेंढ़क के आगे की ओर दो टाँगें (Fore limbs) होती हैं और पीछे की ओर भी दो टाँगें (Hind limbs) होती हैं। इन दोनों आगे और पीछे की टाँगों में बड़ा भेद है। आगे की टाँगों में जो पीछे की टाँगों से बहुत छोटी होती हैं, तीन भाग होते हैं जिसमें सब से अन्दर का भाग बाहु (Upper arm), उसके आगे का अग्रबाहु (Fore arm) और सब से बाहर का हाथ होता है। हाथ में चार उँगुलियाँ होती हैं जिनमें नाखून नहीं होते। किसी किसी में पाँचवीं उँगली का भी चिह्न रहता है। इन उँगलियों में से अन्दर की तरफ अँगूठा होता है जो नर मेंढ़क में मोटा और मुख्यतया बरसात में फूला हुआ रहता है। अन्दर की दो उँगलियों में तीन तीन जोड़ होते हैं और बाकी बाहर की दो उँगलियों में चार चार। अन्दर की ओर से तीसरी उँगली सबसे बड़ी होती है।

मेंढ़क की पिछली टाँगें आगेवाली टाँगों से बहुत बड़ी और कूदने व तैरने में सहायता देने के योग्य होती हैं। इनमें भी तीन भाग होते है। सबसे भीतर की ओर जाँघ (Thigh), उसके बाद टाँग (Leg) और फिर पाँव (Foot) होता है। जाँघ बहुत मोटी होती है। टाँग के अन्दर की ओर एँड़ी का भाग चौड़ा और लम्बा होता है जो मेंढ़क के कूदने में काम आता है। टाँग में पाँच उँगुलियाँ होती हैं जो आपस में एक झिल्ली द्वारा जुटी रहती हैं। यही कारण है कि मेंढ़क आसानी के साथ पानी में तैर सकता है। छठवीं उँगली का भी कुछ चिह्न रहता है। इसकी चौथी उँगली सबसे

बड़ी होती है जिसमें पाँच जोड़ होते हैं। तीसरी और पाँचवीं उँगली में चार चार जोड़ होते हैं और पहिली व दूसरी में तीन तीन।

मुँह गुहा (Buccal Cavity)—हम लोगों की भाँति मेंढ़क को भी ऊपर और नीचे जबड़ा होता है। अगर इन जबड़ों को दोनों तरफ कैंची से थोड़ा काटकर खोल दिया जाय तो उसके मुँह के सब भाग दिखलाई देने लगेंगे (चित्र ७)।

ऊपर के जबड़े में अन्दर से किनारे छूने पर कुछ उभड़नें मालूम पड़ेंगी जिनको मेक्सिलरी दाँत (Maxillary teeth) कहते हैं। यह दाँत नहीं हैं बल्कि हड्डी की उभड़नें हैं। इस तरह की उभड़नें नीचे के जबड़े में नहीं पाई जातीं। आगे से अन्दर की ओर दो छोटे छोटे छिद्र होते हैं जो
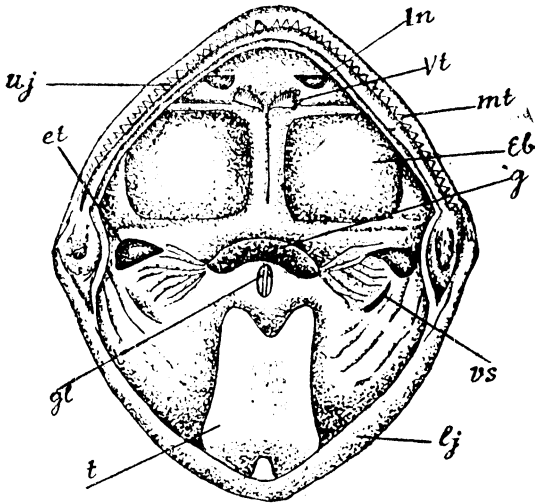
चित्र ७— मुँह, गुहा और उसके भाग।

et–eustachian tube; *lj*–lower jaw; *gl*–glottis; *in*–internal nares; g–Pharynx or gullet; *eb*–prominence of the eye ball; *mt*–maxillary teeth; *t*–tongue; *vt*–vomerine teeth; *vs*–vocal sacs; *uj*–upper jaw.

नाक में खुलते हैं। इन्हीं के द्वारा साँस लेने से हवा अन्दर जाती है। इनको भीतरी नाक (Internal nares) कहते हैं।

इससे कुछ दूर हटकर अन्दर दाँतों की छोटी छोटी दो कतारें हैं जिनको वोमराइन दाँत (Vomerine teeth) कहते हैं। ये इस प्रकार ऊपरी जबड़े में लगे रहते हैं कि जब मेंढ़क शिकार को पकड़ता है तो वह बाहर निकलने नहीं पाता। इन्हीं के किनारे अन्दर की ओर मांश-पेशियों के उभड़े हुए गोलाकार भाग दोनों तरफ दिखलाई पड़ेंगे जो मेंढ़क की उभड़ी हुई आँखों की भीतरी मांश-पेशियाँ (Prominences of the eye-balls) हैं (चित्र ७)। इन्हीं दोनों पेशियों के नीचे बीचो बीच एक छिद्र (Opening) होता है जो बंद रहता है और भोजन करते समय ही खुलता है। इस छिद्र को अन्न-प्रणाली-छिद्र (Gullet) कहते हैं जो अन्न प्रणाली अर्थात् इसॉफेगस (Oesophagus) में खुलता है।

इस छिद्र के दोनों ओर दो और छिद्र होते हैं जो मेंढ़क के भीतरी कान से सम्बन्ध रखते हैं। इनको यूस्टेशियन नलियाँ (Eustachian tubes) कहते हैं। इन नलियों के द्वारा मेंढ़क के कान के वायु का दबाव शब्द के अनुसार वायु के द्वारा हुआ करता है। नर मेंढ़कों में इन नलियों के कुछ नीचे निचले जबड़े में वे उभड़नें होती हैं जिनसे नर मेंढ़क बोलता है। इनको आवाज की थैलियाँ (Vocal sacs) कहते हैं।

अन्न-प्रणाली के मुँह के ठीक नीचे कुछ कड़ा एक दूसरा छिद्र होता है जो एक नली के द्वारा फेफड़े तक मिला हुआ रहता है। इस छिद्र को श्वाँस-नलिका का मुँह (Glottis) कहते हैं जो श्वाँस-प्रणाली (Wind-pipe or Trachea) से सम्बन्ध रखता है। इसके बाद मेंढ़क के मुँह का सबसे आवश्यक अंग जीभ (Tongue) होती है जो आगे की ओर निचले जबड़े से जुटी रहती है और पीछे की ओर खुली रहती है। इस तरह जीभ में दो कोने होते हैं। इस जीभ में कुछ चिपकाने वाला लसदार पदार्थ लगा रहता है जिसके द्वारा मेंढ़क अपने शिकार को चिपका कर अन्दर निगल जाया करता है।

मेंढ़क का सारा मुँह एक बहुत पतली नम झिल्ली द्वारा ढँका रहता है

जो मुँह को हमेशा तर रखती है। इस झिल्ली को म्यूकस झिल्ली (Mucous membrane) कहते हैं।

अभ्यास

१. मेंढ़क के बाहरी अंगों का वर्णन करो और ठीक ठीक बतलाओ कि ये अंग किस प्रकार उसके भोजन की प्रकृति और वातावरण से सम्बन्धित हैं ?
[H. S. 1934, 1936, 1937]

२. यदि तुम्हें मेंढ़क का मुख पूर्ण रूप से खोलना हो तो तुम उसके भीतर कौन कौन से अंग देखोगे। अपने उत्तर के सहायतार्थ एक चित्र बनाओ और सभी अंगों के कार्य का वर्णन करो। [H. S. 1938]

३. निम्नांकित के बारे में लिखो—कान की झिल्ली (Tympanum) ; यूस्टेशियन नली ; म्यूकस झिल्ली।

४. कारण लिखो—

(क) मेंढ़क का शरीर क्यों चिकना है ?

(ख) किस प्रकार मेंढ़क का शरीर पानी में तैरने के अनुकूल है ?

(ग) जाड़े में मेंढ़क क्यों कभी नहीं देखा जाता ?

५. नर और मादा मेंढ़क का अन्तर बताओ।

६. मेंढ़क के शत्रु कौन कौन हैं ? मेंढ़क का रूप ; शरीर की बनावट, उसकी आदतें और प्राकृतिक वातावरण उसे किस प्रकार अपने शत्रु से बचाते हैं ? [H. S. 1939]

७. मेंढ़क की आदतें और बाहरी बनावट को बयान करो और चित्रों द्वारा बतलाओ कि ये उसको अपने वातावरण में भली प्रकार रहने में किस प्रकार सहायता पहुँचाते हैं ?

अध्याय ३

भीतरी अंग और उनके कार्य

(Internal Parts and Their Work)

तुम्हारे अध्यापक क्लोरोफार्म से बेहोश किए हुए मेंढ़क को चीरने के बरतन (Dissecting dish) में रखकर उसके शरीर को कैंची से खोलेंगे। मेंढ़क का शरीर पेट की ओर (Ventral side) से खोला जाता है। खोलने पर कई प्रकार के अंग दिखलाई पड़ते हैं जो खूब अच्छी तरह शरीर-गुहा (Body cavity or Coelom) के अन्दर सुरक्षित रखे गये हैं।

अन्नमार्ग (Alimentary Canal)— मेंढ़क की शरीर-गुहा में बाईं तरफ एक मोटी नली दिखलाई पड़ेगी जो नीचे की ओर पतली और घुमावदार होती हुई मल-छिद्र (Cloacal aperture or Anus) तक चली जाती है। तुम्हारे अध्यापक इससे लगी हुई झिल्लियों को कैंची से खोलकर इसे एक तरफ फैला देंगे। यही नली जिसको ऍलीमेण्टरी केनाल (Alimentary canal) कहते हैं अन्न-प्रणाली-छिद्र (Gullet) से मल-छिद्र (Cloacal aperture) तक जाती है। इसी के अन्दर से भोजन मुँह से निगलने के पश्चात् बहुत परिवर्तन के बाद मलाशय तक पहुँचता है।

अन्न-प्रणाली-छिद्र से अन्न-प्रणाली (Oesophagus) आरम होती है जो आमाशय (Stomach) में एक बड़े छिद्र (Cardiac opening) के रूप में खुलती है। इसी से होकर निगला हुआ भोजन आमाशय में उतरता है (चित्र ८)।

अमाशय एक चौड़ा और बड़ा अंग है जिसको यदि काटकर देखा जाय तो उसमें बहुत से कीड़े-मकोड़े या सभी ऐसी वस्तुएँ मिलेंगी जिनको मेंढ़क खाता है। इसको काटने पर इसमें बहुत सी ग्रन्थियाँ दिखलाई देंगी

जिनको गैस्ट्रिक ग्लैण्ड्स (Gastric glands) कहते हैं (चित्र ८)। इनमें से एक प्रकार का रस निकलता है जो भोजन के पाचन में काम आता है। आमाशय एक बहुत पतले छिद्र से जिसको पाइलोरिक छिद्र (Pyloric opening) कहते हैं एक U के आकार के अंग में खुलता है। इस अंग को ड्युऑडेनम (Duodenum) कहते हैं। यह आमाशय से बिलकुल समानान्तर रहता है।
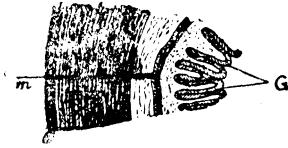
चित्र ८— मेंढ़क के आमाशय का छितिज खंड और उसके भीतर की मांस-पेशियाँ और ग्रन्थियाँ।

G–gastric glands *m*–muscles of the stomach which enable the food to get mixed with the gastric juice and to proceed onward in the alimentary canal by their contraction

ड्युऑडेनम से कुछ सटा और उसी में खुलता हुआ एक अंग होता है, जिसको अग्न्याशय (Pancreas) कहते हैं (चित्र ९)। यह लम्बा, चपटा सा, कुछ पीलापन लिये हुए हलके लाल रंग का होता है। यह एक नली द्वारा ड्युऑडेनम में खुलता है। इसी नली से सटी हुई यकृत से आई हुई पित्त को ले जाने वाली दूसरी नली भी ड्युऑडेनम में खुलती है। ड्युऑडेनम आगे चलकर अँतड़ियों (Ileum or Small intestines) में बदल जाता है जिसमें एक तीसरे प्रकार का रस निकलता है। अँतड़ियों की भीतरी दीवारों से ही जिनमें बहुत सी उभड़नें हैं, शोषण (Assimilation) की क्रिया होती रहती है।

अँतड़ियों से और नीचे चलकर उसी से कुछ सटा हुआ ऊपर एक गोलाकार लाल रंग का अंग होता है जिसे तिल्ली (Spleen) कहते हैं। यह मरे हुए अथवा पुराने रक्त के अणुओं (Blood corpuscles)को निकालता रहता है। अर्थात् यह एक प्रकार का रक्त का छनना (Blood-filter) है। इसके अतिरिक्त यहाँ श्वेत अणुओं (White blood Corpuscles) का जन्म भी होता है।

अँतड़ियाँ और आगे चलकर एक मोटे लम्बे अंग में खुलती हैं जिसको

मलाशय (Large intestine or Rectum) कहते हैं। इसमें मल एकत्रित होता रहता है जो समय-समय पर मल छिद्र द्वारा निकाल दिया जाता है। मल-छिद्र और मलाशय के मध्य में एक अंग होता है जिसको गुदा (Cloaca) कहते हैं। इसी से लगी हुई एक पारदर्शक (Transparent) झिल्लीदार थैली होती है जिसको मूत्राशय (Urinary bladder) कहते हैं। इसी में मूत्र एकत्रित होता रहता है जो समय-समय पर बाहर निकाल दिया जाता है।
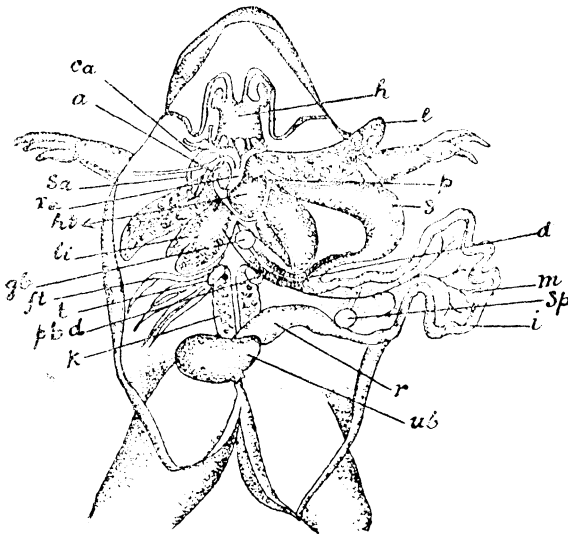
चित्र ९— नर मेंढ़क का शरीर गुहा और उसके भाग।
ca–carotid artery; *a*–pulmo-cutaneous artery; *sa*-systemic artery; *ta*–truncus arteriosus; *ht*–heart; *li*–liver; *gb*–gall bladder; *ft*–fat body, *t*–testis; *pbd*–pancreatic and bile ducts; *k*–kidney; *ub*–urinary bladder; *r*–rectum or large intestine; *i*–ileum or small intestine; *sp*–spleen; *m*–mesentary; *d*–duodenum; *s*–stomach; *p*–pericardium; *l*–lungs; *h*–hyoid apparatus.

हृदय (Heart)–मेंढ़क की शरीर-गुहा (Coelomic cavity) के बीचो-बीच एक लाल रंग का बड़ा अंग होता है जिसको हृदय (Heart)

कहते हैं (चित्र ९) । यह तत्काल ही बेहोश किए हुए मेंढ़क में धड़कता हुआ दिखाई पड़ेगा । इनमें तनिक सा घाव करने पर एक लाल द्रव पदार्थ निकलना प्रारम्भ हो जायगा, जिसको रक्त कहते हैं । इससे यह ज्ञात होता है कि हृदय ही में रक्त विशेष रूप से रहता है जो धड़कन के साथ सारे शरीर में जाता है, और फिर लौट कर उसी में चला आता है । ध्यान से देखने पर हृदय के चारों ओर लगी हुई एक झिल्ली दिखलाई पड़ेगी जिसको हृत्कोष (Pericardium) कहते हैं । हृदय मांस-पेशियों का एक थैला है । इसके ऊपर का भाग नीचे के भाग से कुछ अधिक चौड़ा होता है ।

फुस्फुस (Lungs)—हृदय से कुछ कुछ सटी हुई दोनों ओर स्पंज के समान दो जालीदार हवा से भरी हुई थैलियाँ होती हैं, जिनको फेफड़े या फुस्फुस (Lungs) कहते हैं । मुँह से होती हुई स्वाँस-प्रणाली में यदि हवा फूँकनेवाली नली (Blow-pipe) डाली जाय और हवा फूँकी जाय तो ये फेफड़े फूल जाते हैं । इन्हीं में रक्त शुद्ध होता है ।

यकृत (Liver)—फुस्फुस के कुछ ऊपर हृदय के नीचे गहरे लाल रंग के तीन टुकड़े दिखलायी पड़ेंगे, जिनको यकृत या कलेजा (Liver) कहते हैं । इसमें पित्त बनती है जो पित्त की थैली (Gall bladder) में एकत्रित रहती है । यह थैली गोलाकार गहरे नीले रंग की होती है, जो यकृत के मध्य भाग में रहती है । इसमें थोड़ा घाव कर देने से पित्त निकल आती है । यह भोजन के पचाने में काम आती है । यह थैली ड्युऑडेनम से पित्तनली (Bile duct) द्वारा जुटी रहती है ।

यकृत शरीर का मुख्य अंग है । यह रक्त की जाँच करता है । यदि रक्त में आवश्यकता से अधिक चीनी है तो वह उसे ग्लाइकोजन (Glycogen) के रूप में रख लेता है जो समय समय पर आवश्यकता के अनुसार शरीर में शोषित होता रहता है ।

यकृत से लगी हुई दो रक्त की नलियाँ होती हैं, जिनको ऐब्डॉमिनल शिरा (Abdominal vein) और हिपैटिक पोर्टल शिरा (Hepatic portal vein) कहते हैं । पहली शिरा पतली और

टाँगों की शिराओं के मिलने से बनती है और दूसरी अँतड़ियों के कई शिराओं से मिलकर और मोटी होकर आती है (चित्र ९)।

मादा-उत्पादन भाग (Female generative parts)—इसके अतिरिक्त यदि चीरा हुआ मेंढ़क मादा है, तो उसमें यकृत के नीचे से होती हुई दोनों ओर श्वेत झिल्लीदार अंग दिखलायी देंगे जिनको डिम्भ-ग्रन्थियाँ (Ovaries) कहते हैं (चित्र १०)। इसमें छोटे या बड़े काले धब्बे भी होते हैं जो बढ़ कर अण्डे के रूप में हो जाते हैं। ये अण्डे डिम्भग्रन्थियों से छूटकर शरीर-गुहा में चले आते हैं, और यहाँ से एक घुमावदार श्वेत नली में से जिसको डिम्भ-प्रणाली (Oviduct) कहते हैं, एकमात्र मलछिद्र द्वारा पानी में बाहर निकल जाते हैं। बरसात में इस रूप के बहुत से अण्डे झिल्लियों में लिपटे हुए पानी की सतह पर दिखलायी देते हैं। डिम्भ-प्रणाली भी शरीर-गुहा में दोनों ओर होती हैं। इनका मुँह फेफड़े के नीचे कुछ फैला हुआ होता है, ताकि अण्डे फिसल कर इनमें आ जायँ और बाहर निकल जायँ।
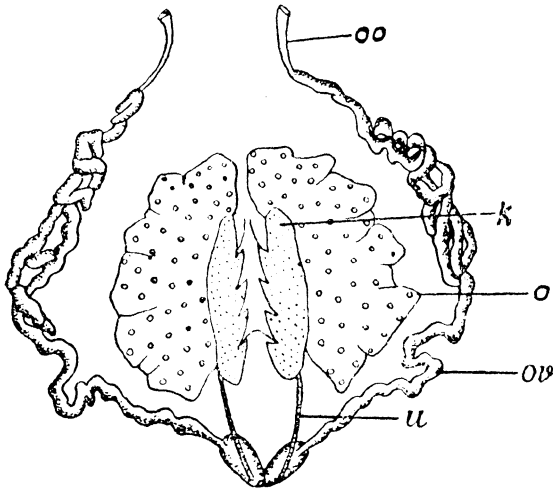
चित्र १०—मादा मेंढ़क की डिम्भ-ग्रन्थियाँ और डिम्भ-प्रणालियाँ।
o–ovary; oo–oviduct opening; ov–oviduct; k–kidney; u–ureter.

नर-उत्पादन भाग (Male generative parts)—यदि यह मेंढ़क नर निकला जैसा कि चित्र ९ में है, तो उसमें टेस्टिस (Testes) दिखलायी देंगे। ये दोनों वृक्क या गुरदों (Kidneys) के ऊपर तिरछे लगे रहते हैं। ये लम्बे, गोलाकार और हलके पीले रंग के होते हैं। इन्हीं में स्पर्म अर्थात वीर्य के कीटाणु बनते हैं, जो बाहर निकल कर मादा मेंढ़क के पानी में छोड़े हुए अण्डों से मिलकर मेंढ़क के जीवन की वृद्धि आरम्भ करते हैं। टेस्टिस से सटी हुई दोनों ओर चमकदार चर्बी (Fat body) लगी रहती है जो किसी किसी मेंढ़क में अधिक मात्रा में पायी जाती है।

वृक्क (Kidneys)—टेस्टिस से लगा हुआ रीढ़ की हड्डी के दोनों ओर एक अंग होता है, जिसको वृक्क या गुर्दा कहते हैं। यह लम्बा और चपटा गोलाकार होता है। यह अंग रक्त से मूत्र को पृथक् करता है। मूत्र अलग हो कर नलियों द्वारा मूत्राशय में चला जाता है। इन नलियों को गवीनी (Ureter) कहते हैं जो मूत्राशय के ऊपरी भाग से अलग अलग मिलती हैं।

ये सब अंग शरीर-गुहा में एक दृढ़ झिल्ली द्वारा अपने अपने स्थान पर स्थिर रहते हैं। इस झिल्ली को मेसेंट्री (Mesentry) कहते हैं।

मेंढ़क के निचले जबड़े की मांस-पेशियों को हटाने पर घुमावदार कार्टिलेज का बना हुआ (Cartilaginous) अंग मिलता है जिसको हॉयड ऍपरेटस् (Hyoid apparatus) कहते हैं। यही मेंढ़क की जीवित दशा में साँस लेने के समय ऊपर नीचे हुआ करता है (चित्र ९)।

मेंढ़क की खोपड़ी की हड्डियों को चतुरता से खोलने पर मस्तिष्क (Brain) दिखलायी देगा जिसमें से पीछे (Posterior) की ओर रीढ़ की हड्डियों (Vertebral column) के बीच से सुषुम्ना नाड़ी (Spinal cord) चली जाती है। मस्तिष्क और सुषुम्ना से बहुत सी श्वेत नसें अथवा नाड़ियाँ शरीर के भिन्न भिन्न अंगों को जाती हैं।

अभ्यास

१. मेंढ़क के शरीर के खोलने की विधि का वर्णन करो।

२. एक मेंढ़क एक भौंरा निगल जाता है। वर्णन करो कि वह

भौंरा मेंढ़क के किन किन अंगों के से हो कर अन्त में मल के रूप में बाहर निकलता है। क्या वह मार्ग में मेंढ़क के शरीर से निकले हुए रसों के भी संपर्क में आता है? यदि ऐसा है तो वे रस कौन कौन हैं और किन अंगों से निकल कर कहाँ गिरते हैं?

३. निम्नलिखित पर नोट लिखो:—हॉयड कार्टिलेज (Hyoid cartilage); मेसेन्ट्री (Mesentry); ड्युआडेनम (Duodenum); श्वॉस-प्रणाली छिद्र; शरीर गुहा।

४. नर और मादा मेंढ़कों की भीतरी भिन्नता क्या है?

५. (क) मेंढ़क के शरीर में धड़कती हुई वस्तु क्या है? उसके क्या क्या कार्य हैं?

(ख) मेंढ़क के मल-छिद्र द्वारा कौन कौन सी वस्तुएँ निकलती हैं? वे मल गुहा में कहाँ से आती हैं?

(ग) मेंढ़क के शरीर में 'यकृत' और 'वृक्क' किन स्थानों पर लगे रहते हैं? इन अंगों के क्या कार्य हैं?

अध्याय ४

पाचन के अंग और पाचनविधि

Digestive Organs and the Process of Digestion

मेटाबालिज्म (Metabolism)—संसार में जितने जीवधारी हैं सभी भोजन करते हैं। भोजन का करना सभी के लिए आवश्यक है, क्योंकि उनमें कुछ न कुछ क्रियाएँ हुआ करती हैं। इन क्रियाओं में शक्ति (Energy) लगानी पड़ती है। इस तरह शक्ति के व्यय होने को केटाबालिज्म (Katabolism or Waste) कहते हैं। यह मल, मूत्र, पसीना, कारबन डाई ऑक्साइड इत्यादि के रूप में होता रहता है। ये वस्तुएँ शरीर के लिए विषैली होती हैं, इसलिए इनका बाहर निकल जाना आवश्यक है। उनकी पूर्ति के लिए भोजन किया जाता है और साँस ली जाती है। शक्ति की इस तरह पूर्ति होने को ऐनाबालिज्म (Anabolism or Repair) कहते हैं। यह ठीक वैसे ही होती है, जैसे चलते हुए इंजिन में कोयला और पानी के खर्च हो जाने पर बीच-बीच के स्टेशनों पर इन वस्तुओं की पूर्ति की जाती है। इस तरह से कमी और पूर्ति (Waste and repair) की क्रियाएँ प्रत्येक जीवधारी में बराबर हुआ करती हैं। इन दोनों मिश्रित क्रियाओं को मेटाबॉलिज्म (Metabolism) कहते हैं।

भोजन पदार्थ (Food substances)—मेंढक में भी ये सभी क्रियाएँ हुआ करती हैं। प्रायः सभी प्राणियों का मिश्रित भोजन, कारबोहाइड्रेट, प्रोटीन और चर्बी (Carbo-hydrates, proteins, oils and fats) का होता है। इनमें से कारबोहाइड्रेट जैसे—चावल, गेहूँ, आलू, चीनी इत्यादि शरीर में गर्मी स्थिर रखने वाले हैं। प्रोटीन जैसे—दाल, मटर, चना, माँस, मछली, अंडा इत्यादि शरीर में माँसपेशियों और अन्य अंगों की वृद्धि करने वाले हैं। चर्बी जैसे—घी, तेल इत्यादि भी शरीर में गर्मी

स्थिर रखने वाली हैं। दूध और अंडे में प्रायः सब वस्तुएँ ठीक अनुपात में पायी जाती हैं। कारबोहाइड्रेट में कारबन, ऑक्सीजन और हाइड्रोजन (Carbon, oxygen and hydrogen) रहते हैं और प्रोटीन में इनके अतिरिक्त नाइट्रोजन और गंधक (Nitrogen and sulphur) भी पाई जाती हैं।

मेंढ़क के भोजन में जो केचुआ, मकड़ी, घोंघा, फतिंगा इत्यादि के रूप में होता है, स्टार्च नहीं पाया जाता है। शायद इसीलिये प्रकृति ने स्टार्च बदलनेवाला रस अर्थात् सॅलाइवा (Saliva) और उसकी थैली अर्थात् लार की ग्रन्थियाँ (Salivary glands) इसके शरीर में नहीं दिये हैं।

पाचन अंग और पाचन विधि (Digestive organs and digestion)—मेंढ़क अपनी चिपकाने वाली जीभ से शिकार को
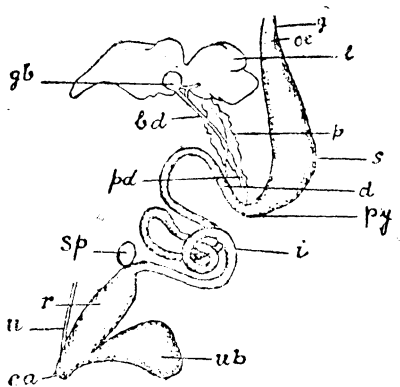
चित्र ११—मेंढ़क का पाचन अंग।

g–gullet; *oe*–oesophagus; *s*–stomach; *l*–liver; *gb*–gall-bladder; *bd*–bile duct; *p*–pancreas; *pd*–pancreatic duct; *py*–pylorus; *d*–duodenum; *i*–ileum or small intestine; *sp*–spleen; *r*–rectum; *u*–ureter; *ub*–urinary bladder; *ca*–cloacal aperture.

अपने मुँह में डाल लेता है। यह वोमराइन और मैक्सलीदार दाँतों (Vomerine and maxillary teeth) और ऊपर से जीभ के दबाव के कारण बाहर नहीं निकलने पाता। अपने शिकार को मुँह में डालते ही वह उसको निगल जाता है जो अन्न-प्रणाली से होकर आमाशय में पहुँच जाता है (चित्र ११)।

गैस्ट्रिक या आमाशय रस (Gastric juice)—आमाशय में पहुँच कर आमाशय की भीतरी दीवारों से निकला हुआ एक तेजाबी रस इससे मिलता है। आमाशय की भीतरी दीवारों में बहुत-सी उभड़नें होती हैं, जिनको आमाशय-ग्रन्थियाँ (Gastric glands) कहते हैं (चित्र ८)। इन्हीं से वह रस निकलता है जिसको गैस्ट्रिक जूस अथवा आमाशय रस (Gastric juice) कहते हैं। इसमें एक प्रकार का एन्झाइम या फरमेण्ट (Enzyme or Ferment) होता है जो एक गूढ़ पदार्थ है। इसको पेप्सीन (Pepsin) कहते हैं। यह भोजन के प्रोटीनवाले भाग को अपनी तेजाबी शक्ति से घोलकर एक दूध के समान तरल पदार्थ में बदल देता है जिसको पेप्टोन (Peptone) कहते हैं। इसके अतिरिक्त दो और एन्जाइम्स, रेनिन और लाइपेस (Rennin and Lipase) भी इसमें होते हैं। लाइपेस चर्बी के बड़े बड़े कणों को छोटे छोटे कणों (Globules) में विभाजित कर देता है।

भोजन को पेप्टोन में बदलने में आमाशय की बाहरी पेशियाँ बहुत काम आती हैं। वे सिकुड़ सिकुड़ कर भलीभाँति भोजन में आमाशय रस मिलाती रहती हैं। इस रस के मिलने पर भोजन पेप्टोन में भलीभाँति बदलती जाती है। इन्हीं पेशियों की आश्चर्यजनक सिकुड़न से भोजन आगे ड्युऑडेनम और अँतड़ियों की ओर बढ़ता है। आमाशय की इस प्रकार की सिकुड़न को पेरिस्टैल्टिक सिकुड़न (Peristaltic Contraction) कहते हैं। इस प्रकार इस रस द्वारा भोजन अर्ध तरल दूधनुमा पदार्थ में बदल दिया जाता है, जिसे शाइम (Chyme) कहते हैं।

अन्य रस (Other juices)—जब भोजन भली प्रकार शाइम में बदल जाता है तो वह आमाशय की मांसपेशियों की सिकुड़न के कारण

पाइलोरस (Pylorus) से होकर ड्यु ऑडेनम में चला जाता है। पाइलोरस एक गोलाकार छोटा सा फाटक है, जो आमाशय को ड्यु ऑडेनम से अलग करता है। यह फाटक उस समय तक नहीं खुलता जबतक आमाशय में भोजन भली-भाँति शाइम में न बदल जाय।

ड्यु ऑडेनम में पहुँचकर भोजन में दो रस मिलते हैं जिनके नाम पित्तरस (Bile juice) और अग्नरस (Pancreatic juice) हैं। पित्त की थैली से जो यकृत में रहती है, पित्त आता है और अग्नरस अग्न्याशय (Pancreas) से आता है। इन दोनों से मिलकर भोजन खार (Alkaline) हो जाता है।

जब तक भोजन खार नहीं हो जाता, तब तक अग्नरस में रहने वाला ट्रिप्सीन (Trypsin) नामक एन्झाइम उस पर अपना प्रभाव नहीं डालता। इस रस में भी तीन प्रकार के एन्जाइम्स होते हैं परन्तु ट्रिप्सीन उनमें मुख्य है। ट्रिप्सीन में प्रोटीन के रूप को बदल देने के अतिरिक्त स्टार्च और चीनी को बदल देने की भी शक्ति है। यह चर्बी को भी छोटे-छोटे कणों को गिलसरीन (Glycerine) में बदलता है, जो शरीर में शोषण हो जाने के योग्य हो जाते हैं।

ड्यु ऑडेनम की पेशियों की सिकुड़न से भोजन नीचे की ओर उतरता है और अँतड़ियों में पहुँचता है। यहाँ पर भी अँतड़ियों की भीतरी दिवारों से निकले हुए अँतड़ी-रस (Intestinal juice) से इसकी भेंट होती है, जिससे मिलकर अंत में भोजन इस योग्य हो जाता है कि शरीर में रक्त के रूप में मिल जाय अर्थात् शोषित हो जाय। अँतड़ियों की दीवारों में बहुत सी उभड़नें होती हैं जिनको बिलाई (Villi) कहते हैं। इन्हीं के द्वारा भोजन का शोषण बराबर होता रहता है।

इस तरह शोषण किया हुआ रक्त बहुत अशुद्ध होता है। यह शरीर में भ्रमण करने योग्य नहीं होता। इसमें बहुत से विषैले पदार्थ होते हैं। यह रक्त पहले यकृत में जाता है, जहाँ इसमें से वैसी सब वस्तुएँ निकाल ली जाती हैं, जो शरीर के लिए हानिकारक हैं। इन्हीं वस्तुओं से यकृत पित्त बनाता है जो पित्त की थैली में एकत्रित रहता है। यह आवश्यकता पड़ने पर

भोजन के लिये प्रयुक्त होता है। यकृत के अतिरिक्त वृक्क, चर्म और फुस्फुस भी इस रक्त के अन्य विषैले पदार्थों को निकालते रहते हैं।

अब बचे हुए भोजन का अंश जिसको मल (Faeces) कहते हैं, शरीर के काम का नहीं रह जाता, इसलिये यह अँतड़ियों से, उसकी पेशियों की सिकुड़न के कारण मलाशय में चला जाता है, जहाँ पर कुछ पानी का अंश शरीर-गुहा में मिल जाता है। यहाँ से मल गुदा (Cloaca) से होते हुए मल-छिद्र द्वारा समय समय पर बाहर निकल जाता है।

अभ्यास

१. प्राणिमात्र के शरीर में भोजन किस भाँति पचता और शोषित होता है ?

२. मेंढ़क के पाचन क्रिया में भाग लेने वाले सभी अंगों को एक चित्र द्वारा दिखलाओ और भली प्रकार वर्णन करो कि भोजन किस प्रकार पचता है।

३. (क) अन्न-नली में भोजन किस कारण आगे की ओर बढ़ता है ? उस रीति का क्या नाम है ?

(ख) ड्युडेनम क्या है ? उसमें पहुँचकर भोजन किस भाँति बदलता है और किन किन रसों द्वारा ?

(ग) सभी जीवधारियों के लिये भोजन करना क्यों आवश्यक है ?

४. निम्नलिखित पर नोट लिखो:—पाइलो रस (Pylorus); पेरिस्टैलसिस (Peristalsis); शरीरपोषण (Metabolism); ट्रिप्सिन (Trypsin) और रसांकुर (Villi)।

५. जब मेंढ़क एक भौंरे को निगल जाता है तो उसकी अन्न-नली में भौंरे पर कौन कौन से रसायनिक परिवर्तन होते हैं ?

६. शोषण से तुम क्या समझते हो ? मेंढ़क के शरीर में भोजन किस भाँति शोषित होता है ?

७. किन किन भोजन पदार्थों पर मेंढ़क अपना निर्वाह करता है ? आमाशय में उन पर क्या क्या परिवर्तन होते हैं ?

अध्याय ५

रक्त और उसका परिभ्रमण

Blood and its Circulation

मेंढ़क के कैंची से खोले हुए शरीर के बीचोबीच एक लाल पान के आकार का तुमने अवश्य ही देखा होगा। इसको दिल या हृदय (Heart) कहते हैं। यँही रक्त के परिभ्रमण का मुख्य स्थान है (चित्र १२)। यदि मेंढ़क हाल
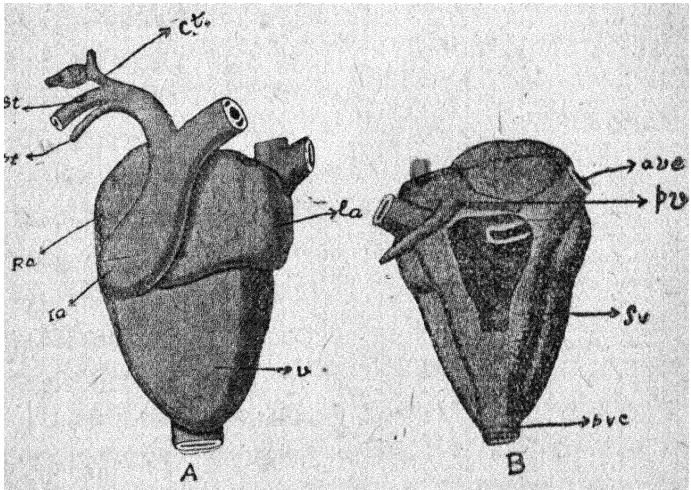
चित्र १२—मेंढ़क का हृदय।

A–Dorsal view; *B*–Ventral view, sinus venosus opened. *ct*–corotid trunk; *st*–systemic trunk; *pt*–pulmo-cutaneous trunk; *ra*–right auricle; *ta*–truncus arteriosus; *v*–ventricle; *la*–left auricle; *avc*–anterior vena cava; *sv*–sinus venosus; *pvc*–posterior vena cava; *pv*–pulmonary vein.

ही में बेहोश किया गया है तो इसके हृदय को तुम धड़कते हुए पाओगे। इस धड़कन से हृदय रक्त को बराबर शरीर में भेजा करता है। यह क्रिया ठीक उसी प्रकार होती रहती है जैसे बड़े बड़े शहरों में पानी की टंकी से इंजन द्वारा

पानी बड़े बड़े नलों (Pipes) से होकर छोटी छोटी नलियों में भेजा जाता है। और जैसे इन नलियों की टोंटी से गिरा हुआ पानी छोटी छोटी नलियों और फिर बड़ी बड़ी नलियों से होकर उसी नदी में चला जाता है जहाँ से शुद्ध किया हुआ पानी टंकी में भरा गया था, उसी प्रकार रक्त भी अशुद्ध होकर शिराओं के द्वारा फिर हृदय में चला जाता है।

हृदय और उसका कार्य (Heart and its working)—इस बात को जाँचने के लिये कि हृदय रक्त को कैसे शरीर में भेजता है, हृदय को काट कर देखना चाहिए (चित्र १३)। ऐसा करने पर हृदय में तीन कोठरियाँ दिखलायी देंगी, दो ऊपर और एक नीचे। ऊपर की दोनों कोठरियों को अलिन्द (Auricle) और नीचे की कोटरीयों को निलय (Ventricle) कहते हैं। अलिन्द की दीवारें पतली और खोखली होती हैं, परन्तु निलय की दीवारें मोटी और स्पंज के समान (Spongy) होती हैं, क्योंकि इसे
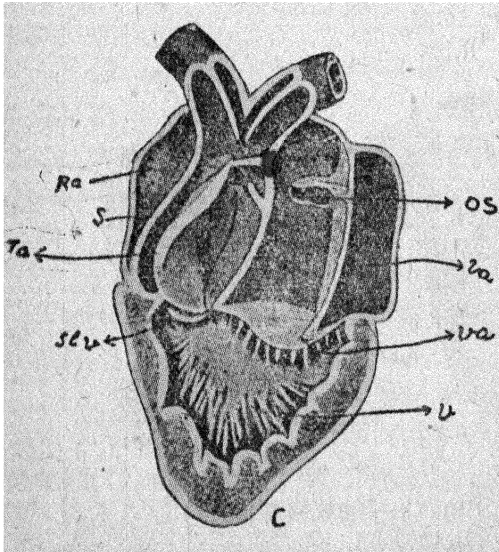
चित्र १३—मेंढ़क का खुला हुआ हृदय और उसके भागों का कार्य।

ra–right auricle; *la*–left auricle; *ta*–truncus arteriosus opened; *v*–ventricle showing spongy character; *slv*–semilunar valve; *va*–valve between ventricle and auricle; *s*–spiral valve; *os*–opening of the sinus venosus.

विशेष रूप से काम करना पड़ता है अर्थात् इसे शुद्ध रक्त को सारे शरीर में और अशुद्ध रक्त को फुस्फुसों में भेजना पड़ता है। दोनों अलिन्दों के बीच नीचे की ओर(Ventrally) एक मोटी खून की नली जाती है जिसको ट्रंक्स् आर्टीरियॉसस (Truncus arteriosus) कहते हैं और इन्हीं के ऊपर से (Dorsally) एक चौड़ी नीले रंग की नली है जिसको साइनस् वेनॉसस् (Sinus venosus) कहते हैं।

दाहिने अलिन्द (Right auricle) में अशुद्ध रक्त रहता है जो सारे शरीर से साइनस् वेनॉसस् के द्वारा इसमें गिरता है। हृदय मांसपेशियों का एक थैला है। मांसपेशियों में सिकुड़ने का गुण होता है। इसलिये दाहिने अलिन्द की मांसपेशियाँ सिकुड़ती हैं। सिकुड़ने से दाहिने अलिन्द का वह फाटक (Valve) जिसके द्वारा अशुद्ध रक्त इसमें आया था, बन्द हो जाता है, और इसके और निलय के बीच का फाटक खुल जाता है। इस तरह अशुद्ध रक्त निलय में चला जाता है जिसके स्पंज के समान होने के कारण वह चारों ओर फैलने नहीं पाता।

ठीक इसी भाँति बायें अलिन्द में फेफड़े से आया हुआ शुद्ध रक्त रहता है। इसके सिकुड़ने से वह फाटक जिसके द्वारा रक्त आया था बन्द हो जाता है और इसके और निलय के बीच का फाटक खुल जाता है। ऐसा होने से शुद्ध रक्त बायें अलिन्द से निलय में चला जाता है। निलय के स्पंज के समान होने के कारण शुद्ध व अशुद्ध रक्त आपस में मिलने नहीं पाते।

अब निलय का काम आरम्भ होता है। इसकी मांसपेशियों के सिकुड़ने से रक्त इसी में से निकली हुई एक मोटी धमनी में जाता है जिसको ट्रंकस् आर्टीरियॉसस् कहते हैं। यह रक्त अलिन्दों में फिर वापस जाने नहीं पाता क्योंकि निलय के सिकुड़न से निलय और अलिन्द के बीच का फाटक बन्द हो जाता है। ट्रंकस् आर्टीरियॉसस् निलय की दाहिनी ओर से प्रारम्भ होता है और अलिन्दों के बीच तिरछे होते हुए दो भागों में बँट जाता है। कुछ ही आगे ये दोनों भाग तीन तीन भागों में परिवर्तित हो जाते हैं (चित्र १३)।

ट्रंकस आर्टीरियोसस (Truncus Arteriosus)—निलय का

सिकुड़न दाहिनी ओर से प्रारम्भ होता है जिसका परिणाम यह होता है कि अशुद्ध रक्त पहले ट्रंकस् आर्टीरियॉसस् में घुसता है जो तीन धमनियों की जोड़ से बना है। सब से पहले इसके नीचे वाली धमनी में रक्त जाता है। इसको पल्मोक्यूटेनियस् धमनी (Pulmo-cutaneous trunk) कहते हैं। इस प्रकार जब यह अशुद्ध रक्त से भर जाता है तो कुछ कुछ मिला हुआ शुद्ध व अशुद्ध रक्त ट्रंकस् आर्टीरियॉसस् की बीचवाली धमनी में जाता है जिसको सिस्टमिक धमनी (Systemic trunk) कहते हैं। जब यह भी भर जाता है तो निलय की दीवारों की सिकुड़न बाँई ओर तक पहुँचती है और शुद्ध रक्त सबसे कम दबाव वाला रास्ता पकड़ने के नियम (Path of least resistance) के अनुसार पल्मोक्यूटेनियस और सिस्टमिक धमनियों में जो भरा रहता है न जाकर कॅराटिड धमनी (Carotid trunk) में चला जाता है (चित्र १३)।

हृदय के इस प्रकार की सिकुड़न को सिस्टोल (Systole) और फिर अपने रूप में आ जाने को डायस्टोल (Diastole) कहते हैं।

धमनियों का जाल (Arterial system)—पल्मोक्यूटेनियस् धमनी से अशुद्ध रक्त चर्म और फेफड़े में जाता है जहाँ वायु के ऑक्सीजन से मिलने पर शुद्ध हो जाता है। शुद्ध होकर रक्त फेफड़े से पल्मीनरी शिरा (Pulmonary vein) द्वारा बायें अलिन्द में चला जाता है।

सिस्टेमिक धमनी से चला हुआ मिश्रित रक्त (Mixed blood) दोनों हाथों में ब्रेशियल धमनी (Brachial artery) द्वारा जो इसकी शाखा है, जाता है। फिर दोनों सिस्टेमिक धमनियाँ घूमकर मिल जाती हैं। इनके मिलने से एक धमनी बनती है जिसको डॉर्सल एऑरटा (Dorsal aorta) कहते हैं। ठीक इसी स्थान से इसमें से एक शाखा निकलती है जिसको सिलियाको मेसेंट्रिक धमनी (Coeliaco-mesentric artery) कहते हैं। यह आमाशय और अँतड़ियों इत्यादि को जाती है। डॉर्सल एऑरटा आगे चलकर वृक्क में शाखाएँ भेजता है। फिर दो भागों में विभाजित होकर इलियक धमनियाँ (Iliac arteries) बनकर पैरों में चली जाती हैं (चित्र १४)।

कॅराटिड ट्रंक से चला हुआ बिलकुल शुद्ध रक्त दो धमनियों द्वारा सर की ओर चलता है। इनको कॅराटिड और लिंगुअल धमनियाँ (Carotid and Lingual arteries) कहते हैं। प्रत्येक धमनी से बहुत सी धमनियाँ भिन्न भिन्न अंगों में जाने के लिये निकलती हैं और फिर इनसे छोटी छोटी धमनियाँ निकलती हैं यहाँ तक कि शरीर के चारों ओर ये धमनियाँ बहुत सूक्ष्म नलिकाओं में परिवर्तित हो जाती हैं। जहाँ शुद्ध रक्त अशुद्ध हो जाता है वहाँ धमनियों का अन्त हो जाता है।
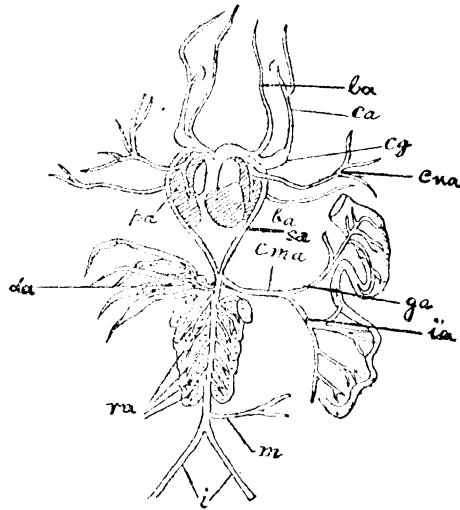
चित्र १४—मेंढ़क की मुख्य धमनियाँ।

ca–carotid artery; *cg*–carotid gland; *ba*–brachial artery; *cma*–coeliaco-mesentric artery; *m*–artery to the large intestine; *i*–iliac artery; *ra*–renal arteries; *da*–dorsal aorta; *pa*–pulmonary artery; *la*–lingual artery; *cua*–cutaneous artery; *sa*–systemic artery; *f*–fat; *ga*–gastric artery; *ia*–intestinal artery.

शिराओं का जाल (Venous system)—इस स्थान से अशुद्ध

रक्त का चलना प्रारम्भ होता है और शिराएँ भी प्रारम्भ होती हैं। इस प्रकार की सूक्ष्म नलिकाओं को जहाँ धमनियों का अन्त होता है और शिराएँ प्रारम्भ होती हैं, केशिका (Capillaries) कहते हैं। इन्हे तुम मेंढक की टाँग के परदे पर अथवा अपनी जीभ के नीचे देख सकते हो।
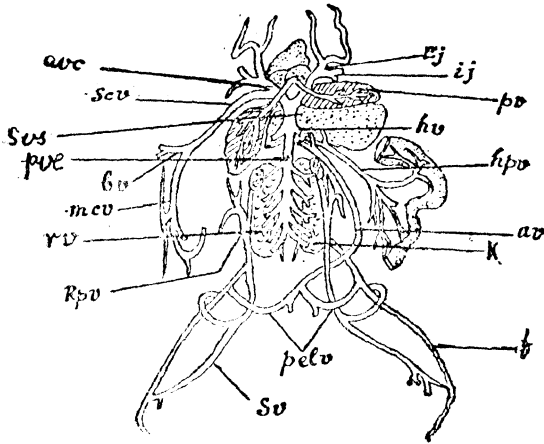
चित्र १५—मेंढक की मुख्य शिराएँ।

avc–anterior vena cava; *svs*–sinus venosus; *pvc*–posterior vena cava; *rv*–renal vein; *fv*–femoral vein; *k*–kidney *ej*–external jugular; *ij*–internal jugular; *pv*–pulmonary vein; *hv*–hepatic vein; *hpv*–hepatic portal vein; *av*-abdominal vein; *pelv*–pelvic veins; *sv*–sciatic vein; *rpv*-renal portal vein; *mcv*–musculo-cutaneous vein; *bv*-brachial vein; *scv*–subclavian vein.

सिर और बाँह से आया हुआ अशुद्ध रक्त दोनों ओर से तीन तीन शिराओं से होकर एक शिरा में आता है जिसको प्रीकेवल शिरा (Precaval vein or Anterior vena cava) कहते हैं। यह शुद्ध रक्त की मोटी नली साइनस वेनॉसस में खुलती है।

पैर से चले हुए अशुद्ध रक्त की नलियों का एक भाग वृक्क के द्वारा चलता है और दूसरा भाग नीचे जाती हुई एक शिरा से, जिसको ऍब्डॉमिनल शिरा

(Abdominal vein) कहते हैं, होकर यकृत में जाता है। यकृत ही में वह अशुद्ध रक्त भी आता है जो भोजन के पाचन के पश्चात् शोषित होने के बाद चलता है। परिणाम यह होता है कि पहली दशा में सब ऐसी वस्तुएँ जैसे यूरिया, यूरिक एसिड (Urea and Uric acid) इत्यादि जो शरीर के लिये हानिकारक हैं, वृक्क ही में छान ली जाती हैं और दूसरी दशा में यकृत भी सारी हानिकारक वस्तुओं को छान लेता है।
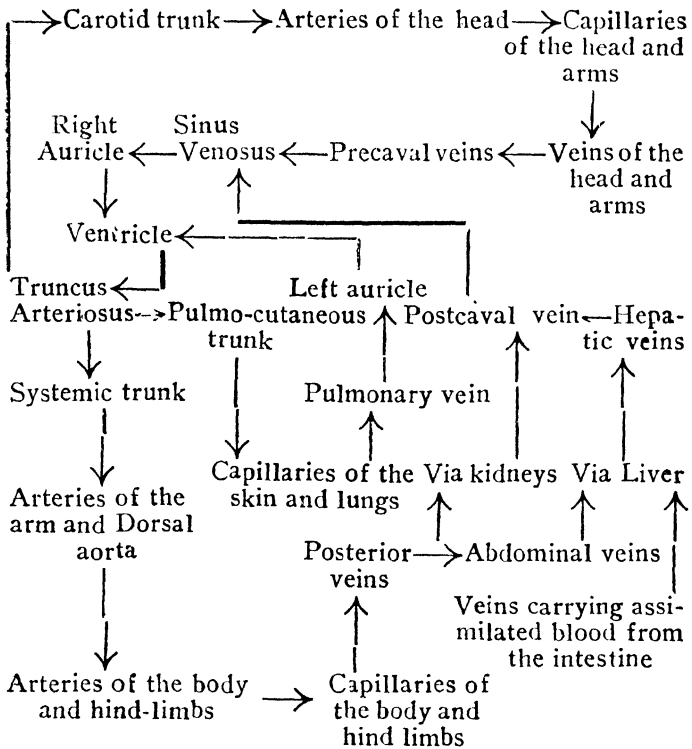
Cycle showing the circulation of blood in a Frog.

वृक्क से होकर कई शिराओं से होता हुआ अशुद्ध रक्त एक मोटी शिरा में आता है जिसको पोस्टकेवल शिरा (Post-caval vein or posterior

vena cava) कहते हैं । यकृत से भी चलकर अशुद्ध रक्त हिपेटिक शिराओं (Hepatic veins) के द्वारा पोस्टकेवल शिरा से मिलता है । ये दोनों मिलकर एक मोटी शिरा बनाती हैं जिसको साइनस् वेनॉसस् (Sinus venosus) कहते हैं। इसी में सर से बाईं व दाहिनी ओर से आई हुई शिराएँ भी मिल जाती हैं । शरीर से आया हुआ अशुद्ध रक्त यहाँ से हृदय के दाहिने अलिन्द में डाल दिया जाता है जिसके सिकुड़ने से यह रक्त फिर निलय में चला जाता है । इसी प्रकार रक्त का परि-भ्रमण सदा हुआ करता है । इसके बन्द होते ही जीवन समाप्त हो जाता है ।

शिराएँ और धमनियाँ (Veins and Arteries)—धमनी और शिरा की भीतरी बनावट में भी भेद रहता है । धमनी बिलकुल खोखली होती है ताकि हृदय के तनिक सिकुड़न से ही रक्त विना रुकावट के चला जाय । परन्तु शिरा से हृदय का कोई सम्बन्ध नहीं रहता । शिरा का कार्य रक्त को ऊपर हृदय की ओर ले जाना है । इनमें कुछ प्याला के समान फाटक (Cup-like valves) और सूक्ष्म बाल (Cilia) होते हैं (चित्र १६) इन बालों के द्वारा रक्त के अणु (Corpuscles) ऊपर उठाकर प्यालों में डाल दिये जाते हैं । प्याला भर कर फैल जाता है और फिर रक्त को नीचे नहीं जाने देता । यहाँ से ये बाल फिर इनको ऊपर उठाते हैं और इस प्रकार धीरे धीरे रक्त हृदय तक पहुँच जाता है ।
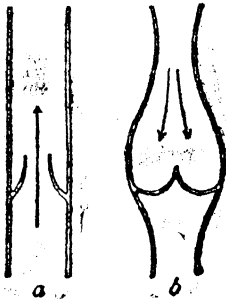
चित्र १६—शिराओं की भीतरी बनावट ।
a-valves open allowing blood to proceed forward; *b*-valves closed checking blood from going backward.

रक्त का गाढ़ा होना (Coagulation)—अब रक्त के असली रूप को देखना चाहिए। यदि धमनी, शिरा व हृदय में से कोई मेंढक चीरते समय तनिक सा भी कट जाय तो उसमें से एक लाल तरल पदार्थ निकलने लगता है। इसी को रक्त कहते हैं यह पहले तो किसी भी तरल पदार्थ के समान बहता हुआ प्रतीत होता है परन्तु कुछ देर के बाद वायु से

मिलते ही गाढ़ा हो जाता है। रक्त के गाढ़ा होने के इस गुण को कोएगुलेशन (Coagulation) कहते हैं और यदि इसमें यह शक्ति न होती तो किसी भी जीवधारी की उसके शरीर में थोड़ा भी घाव हो जाने से मृत्यु हो जाती। कोएगुलेशन से रक्त गाढ़ा होकर घाव को भर देता है।

रक्त और उसके भाग (Blood and its constituents)—

यदि ताजे रक्त की एक बूँद लेकर एक शीशे के टुकड़े (Slide) पर फैला दिया जाय और उस पर मुँह से भाफ दे दी जाय तो कुछ समय के लिये वह अनुवीक्षण यन्त्र (खुर्दबीन) के नीचे देखा जा सकता है। अनुवीक्षण यन्त्र से देखने पर रक्त के सब अंश साफ दिखलायी पड़ेंगे। सबसे पहिले हम को बहुत से चपटे गोलाकार (Elliptical bodies) पदार्थ दिखायी देंगे जिनको लाल अणु (Red blood corpuscles) कहते हैं। कहीं कहीं दूसरे प्रकार के श्वेत टेढ़े-मेढ़े अणु भी दिखलायी देंगे। इनको श्वेत अणु (White blood corpuscles or leucocytes) कहते हैं (चित्र १७)।

ये दोनों रक्त के तरल पदार्थ प्लाज्मा (Plasma) में सर्वदा घूमा करते हैं। लाल अणु गिनती में बहुत अधिक होते हैं, परन्तु श्वेत अणु बहुत कम। प्लाज्मा भी सफेद होता है। रक्त के लाल होने का कारण उसमें लाल अणुओं का अधिक मात्रा में होना ही है। प्रत्येक लाल व श्वेत अणु के

चित्र १७—मेंढक के रक्त के लाल और सफेद अणु।

A-red blood corpuscle; *B*-white blood corpuscle; *C*-same dividing; *a*-protoplasm; *b*-nucleus.

बीच में एक एक न्यूक्लियस (Nucleus) होता है और चारों ओर की बाहरी दीवार के भीतर एक अर्द्धतरल पदार्थ होता है जिसको प्रोटोप्लाज़्म कहते हैं। इसके द्वारा वे जीवित रहते हैं।

रक्त के लाल अणु (Red-blood Corpuscles)—लाल अणु

का रंग उसके अन्दर रहने वाले एक लाल पदार्थ के रहने से लाल होता है जिसको हिमोग्लोबिन (Haemoglobin) कहते हैं। इस रंग का इसमें होना बहुत आवश्यक इसलिये है कि इसमें वायु से आक्सीजन शोषण कर लेने की शक्ति है। शोषण कर लेने के पश्चात् लाल अणु का रंग बिलकुल चमकीला लाल हो जाता है। परन्तु जब शोषित ऑक्सीजन शरीर में काम करने पर व्यय हो जाता है तो इसका रंग नारंगी के समान लाल कुछ हरापन लिये हुए हो जाता है और तब रक्त अशुद्ध हो जाता है।

रक्त के श्वेत अणुँ (Leucocytes)—श्वेत अणु शरीर की रखवाली करने के लिये सिपाही हैं। जैसे सिपाही चोर-डाकुओं से साधारण जनता की रक्षा के लिये रखे गये हैं वैसे ही ये भी शरीर में प्रविष्ट बाहरी किटाणुओं को बाहर निकाल कर ही दम लेते हैं।

रक्त प्रवाह का कार्य (Work of blood-current)—अब हम देखेंगे कि रक्त का भ्रमण करना क्यों आवश्यक है। रक्त जब शरीर में चारों ओर जाता है तो वह अपने साथ ऑक्सीजन और भोजन से शुद्ध किये हुये पदार्थ लेकर शरीर को देता है जिसमें शरीर के सब अंग अपना काम भली भाँति करते रहें।

यह पदार्थ शरीर के भिन्न भिन्न अंगों के बनाने में काम आते हैं और ऑक्सीजन, कोयला और लकड़ी की भाँति शरीर के सब अंगों को काम करने के लिये गर्मी और शक्ति देते हैं। यदि रक्त भ्रमण न करे तो ये जहाँ के तहाँ ही रह जायँगे।

जब रक्त हृदय की ओर लौटता है तो रास्ते की विषाक्त वस्तुओं को अपने साथ ले आता है। ये वस्तुएँ पेशाब, पसीना और इसी प्रकार की अन्य वस्तुओं के रूप में शरीर से बाहर फेंक दी जाती हैं। यदि ये वस्तुएँ शरीर में रह जायँ तो शरीर को हानि पहुँचाने के अतिरिक्त उसमें विष फैला देंगी और शरीर का अन्त हो जायगा। तात्पर्य यह है कि रक्त ही शरीर के समस्त अंगों को भोजन देता है और उनकी सफाई रखता है। इसलिये रक्त का भ्रमण करना अति आवश्यक है। इसके अतिरिक्त शरीर का तापक्रम व भीतरी दबाव भी इसी के भ्रमण से स्थिर रहते हैं।

अभ्यास

१. मेंढक के शरीर में रक्त का कार्य है ? प्राणिमात्रको शुद्ध वायु की क्या आवश्यकता है ? [H. S. 1932]

२. मेंढक के शरीर में रक्त के परिभ्रमण को दिखलाने के लिये उचित चित्रों को बनाओ और भिन्न भिन्न भागों का नामकरण करो। [H.S.1933]

३. मेंढक के शरीर में रक्त कैसे भ्रमण करता है ? रक्त के भागों और उनके कार्यों का वर्णन करो। [H.S.1935]

४. निम्नलिखित पर नोट लिखोः—रक्त के श्वेत अणु ; ट्रंकस आर्टि-रियोसस; रक्त पर वायु का प्रभाव; मेंढक का निलय; कोशिकाएँ।

५. मेंढक के हृदय की बनावट और उसके कार्य का चित्रों की सहायता से वर्णन करो।

६. मेंढक के रक्त के कौन कौन से भाग हैं ? प्रत्येक भाग का कार्य लिखो।

७. कारण बताओ कि क्योंः—

(क) शुद्ध और अशुद्ध रक्त मेंढक के निलय में मिलने नहीं पाते ?

(ख) पलमनरी शिरा में शुद्ध रक्त रहता है और पलमनरी धमनी में अशुद्ध रक्त ?

(ग) शुद्ध रक्त पलमनरी ट्रंक में प्रवेश नहीं करता बल्कि कैरोटिड ट्रंक में करता है ?

८. ठीक ठीक वर्णन करो कि पचे हुए भोजन से रक्त कैसे शोषित होता है और मेंढक के शरीर के भिन्न भिन्न भागों में प्रवेश करता है ?

अध्याय ६

स्वाँस का लेना और रक्त का शुद्ध होना

(Respiration and Purification of Blood)

प्रत्येक जीवधारी में श्वाँस लेने की क्रिया सर्वदा होती रहती है चाहे वह जानवर हो या पौधा। भेद यही है कि भिन्न भिन्न जीवधारी भिन्न भिन्न प्रकार से श्वाँस लेते हैं। जैसे मनुष्य अपने फेफड़ों द्वारा श्वाँस लेता है, वैसे ही मेंढ़क फेफड़े व चमड़े द्वारा मछली गलफर (Gills) द्वारा मक्खियाँ और फतिङ्गे ट्रेकिया (Trachea) द्वारा और पौधे अपनी पत्तियों के सूक्ष्म छिद्रों के द्वारा जिनको स्टोमेटा (Stomata) कहते हैं, श्वाँस लेते रहते हैं।

वायु को भीतर लेने में ऑक्सीजन के शोषण होने को और वायु के निकलते समय कार्बन डाइ-ऑक्साइड के बाहर निकलने को श्वाँस का लेना (Respiration) कहते हैं।

मेंढ़क भी श्वाँस लेता रहता है जैसा कि उसके निचले जबड़े की मांस-पेशियों के नीचे ऊपर होने से प्रतीत होता है। श्वाँस लेने से रक्त में ऑक्सीजन शोषित हो जाता है और वह शुद्ध हो जाता है और उसकी अशुद्धता कार्बन डाइ ऑक्साइड के रूप में निकल जाती है। मेंढ़क के रक्त का शुद्ध होना या श्वाँस का लेना दो प्रकार से होता है, (१) चर्म द्वारा (Cutaneous respiration) और (२) फेफड़े द्वारा (Pulmonary respiration)।

चर्म द्वारा स्वाँस का लेना (Cutaneous respiration)—मेंढ़क का ऊपरी चर्म बहुत नर्म, पतला व नम रहता है। इसके चर्म का यदि एक बहुत पतला लम्बोदराकार टुकड़ा (Longitudinal section) लिया जाय और अनुवीक्षण यन्त्र द्वारा देखा जाय तो उसमें बहुत छोटी छोटी गोल थैलियाँ साफ़-साफ़ दिखलायी देंगी। इनको क्यूटेनियस थैलियाँ

(Cutaneous glands) कहते हैं जैसा चित्र नं० १८ में दिखलाया गया है। यह नीचे भीतर की ओर चारों तरफ रक्त की केशिकाओं से घिरी रहती हैं, केवल थोड़ा सा ऊपर की ओर यह खुली रहती हैं। जब मेंढ़क पानी में तैरता है तो पानी की धारा आगे से इसमें प्रवेश करती है और पीछे से निकल जाती है। पानी में ऑक्सीजन कुछ मात्रा में घुला रहता है वही ऑक्सीजन के brane) द्वारा रक्त में प्रवेश कर जाता है और लाल अणुओं (Red corpuscles) से मिल जाता है। रक्त की अशुद्धता का बॅनडाइ-ऑक्साइड के रूप में पानी की धारा में मिल जाती है और फिर बाहर निकल जाती है
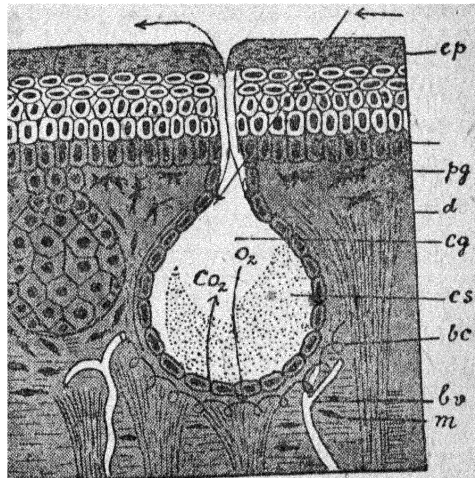
चित्र १८—मेंढ़क के चर्म का सीधा खंड जिसमें क्यूटेनियस थैलियाँ दिखलाई गई हैं।

ep-epidermis ; *pg*-pigments ; *d* dermis ; *cg*-cutaneous glands ; *cs*-cutaneous secretion ; *bc*–blood capillaries ; *bv*-blood vessel; *m*–muscles

जैसा कि चित्र १८ में दिखलाया गया है। इसके अतिरिक्त मेंढ़क किसी नम स्थान में भी चर्म द्वारा ही स्वाँस लेता रहता है। इन्हीं क्यूटेनियस थैलियों से एक तरल पदार्थ भी निकलता है जो चर्म को सर्वदा नम किये रहता है। यही कारण है कि मेंढ़क सूखेपन को सहन नहीं कर सकता और इस तरल पदार्थ के सूख जाने अथवा न निकलने से मेंढ़क का चर्म अपना कार्य

करना बन्द कर देता है और मेंढ़क की मृत्यु हो जाती है। इसके अतिरिक्त मेंढक के रक्त की और भी अशुद्धता जो हम लोगों के पसीने के समान होती है, पानी की धारा के साथ निकल जाती है।

फुस्फुस द्वारा स्वाँस का लेना (Pulmonary respiration)—मेंढ़क का रक्त फेफड़े द्वारा भी शुद्ध होता रहता है। मेंढ़क के निचले जबड़े की पेशियाँ नीचे झुकती हैं, और भीतरी मुँह (Buccal cavity) का आयतन (Volume) बढ़ जाता है। उस बढ़े हुए स्थान को भरने के
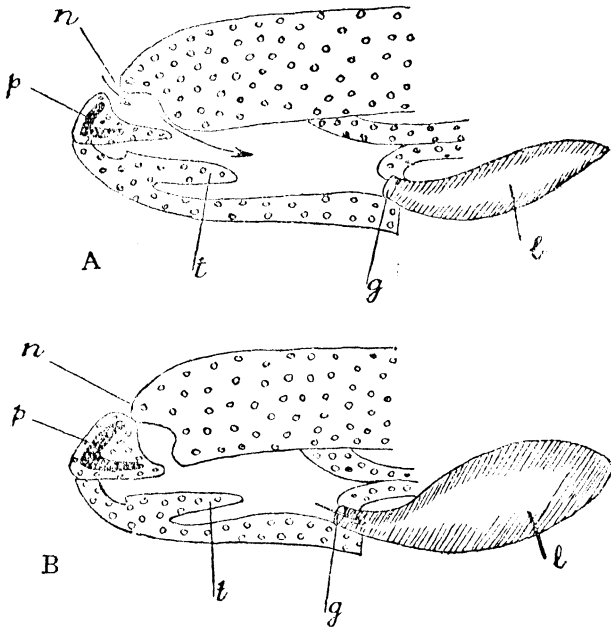
चित्र १९—मेंढ़क के मुँह गुहा के सीधे खंड के दो चित्र जिसमें फुस्फुस द्वारा स्वाँस लेना दिखलाया गया है।

A-muscles of the lower jaw depress and air enters the buccal cavity ; B-same muscles taking their original position and the air being forced into the lungs, *n*-nostrils ; *p*-premaxilla bone ; *t*-tongue ; *g*-glottis ; *l*-lung.

लिये वायु नासिका द्वारा भीतर प्रवेश करती है (चित्र १९ A)। मुँह बन्द रहता है। बहुधा फैरिंक्स (Pharynx) में ही केशिकाओं द्वारा रक्त शुद्ध हो जाता है। परन्तु अधिकतर यह वायु फेफड़े में जाकर ही रक्त को शुद्ध करती है।

मुँह में वायु के आने पर मुँह के ऊपरी जबड़े में आगे की ओर दो हड्डियाँ जिनको प्रीमैक्सिला हड्डी (Premaxilla bones) कहते हैं, निचले जबड़े के उठने से ऊपर को उठ जाती हैं और नाक के छिद्र को बन्द कर देती हैं। (चित्र १९ B) अब निचले जबड़े की माँसपेशियाँ सिकुड़ कर अपने स्थान पर चली जाती हैं। ऐसा होने से मुँह के भीतर की वायु पर दबाव पड़ता है।

मुँह बन्द रहता है। नाक प्रीमैक्सिला हड्डियों द्वारा बन्द रहती है, अन्न प्रणाली भी बन्द रहती है क्योंकि यह भोजन करने के समय ही खुलती है। इसलिये इस दबाव से वायु के जाने के लिये केवल श्वाँस-प्रणाली (Glottis and Pharynx) के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। वायु शीघ्रता से फेफड़े में पहुँच जाती है और वह फूलकर बहुत बड़ी हो जाती है। फेफड़े के भीतर की सूक्ष्म केशिकाओं के द्वारा रक्त शुद्ध हो जाता है, फिर धीरे धीरे फेफड़ा सिकुड़ने लगता है। प्रीमैक्सिला हड्डियाँ भी निचले जबड़े के खिसक जाने से अपने स्थान पर चली जाती हैं। नाक का छिद्र खुल जाता है और वायु ऑक्सीजन से कुछ रहित होकर और कार्बन डाइ-ऑक्साइड से भरी हुई बाहर निकल जाती है। इसी ढंग से मेंढ़क में बराबर साँस का लेना और रक्त की शुद्धता होती रहती है।

अभ्यास

१. श्वांस लेने का क्या अर्थ है ? संक्षेप में वर्णन करो कि श्वांस लेने की क्रिया निम्नांकित प्राणिमात्रों में किस भाँति होती है: —

(क) केंचुआ (ख) मछली (ग) मेंढक (घ) खरगोश। [H.S.1935]

२. बतलाओ कि मेंढक किस भाँति श्वांस लेता है। क्या कारण है कि टैडपोल पानी के बाहर जीवित नहीं रह सकता परन्तु मेंढक रह सकता है। [H. S. 1938]

३. शुद्ध और अशुद्ध रक्त में क्या अन्तर है ? यह अन्तर मेंढक के शरीर में कैसे हो जाता है ?

४. मेंढक निम्नलिखित दिशाओं में किस प्रकार श्वांस लेता है:—

(क) जब कि वह जाड़े की नींद में रहता है (ख) जब वह चलता फिरता रहता है (ग) जब वह सुस्त बैठा रहता है (घ) जब वह पानी में रहता है ।

५. मेंढक के श्वांस लेने की विधि का वर्णन करो । उसके फुस्फुसों में रक्त किस भाँति शुद्ध होता है ?

६. निम्नांकितों में क्या अन्तर है ?

(क) फुस्फुस में जाने वाली वायु और उसमें से निकली हुई वायु में

(ख) फुस्फुस-श्वांस और चर्म-श्वांस में

(ग) अर्धप्रवेशक झिल्ली और चर्म में

अध्याय ७

वृक्क और हानिकारक वस्तुओं का त्याग

(Kidneys and Excretion)

यह पहले ही बतलाया जा चुका है कि मेंढक में भिन्न भिन्न क्रियाएँ होती रहती हैं जिसके कारण उसके शरीर में कई प्रकार के हानिकारक पदार्थ उत्पन्न हो जाते हैं। कुछ तो ऐसे होते हैं जिनमें कार्बन का अंश होता है और कुछ में नाइट्रोजन का अंश होता है, जैसे पेशाब, पसीना इत्यादि। ये सब हानिकारक पदार्थ रक्त से वापस आते हैं और शरीर के भिन्न भिन्न अंगों द्वारा भिन्न भिन्न प्रकार से बाहर निकाल दिये जाते हैं। ऐसे अंगों में से वृक्क मुख्यतः यही कार्य करता है। यह शरीर से सब से अधिक हानिकारक पदार्थों को बाहर निकालता है, जैसे यूरिया और यूरिक एसिड, जिनसे पेशाब बनता है।
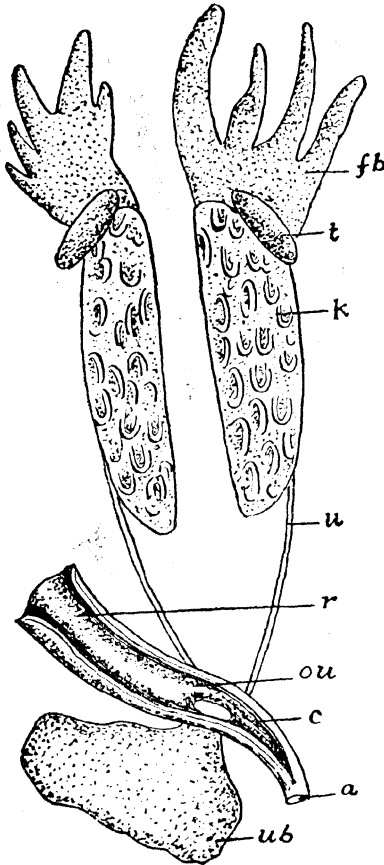
चित्र २० — नर मेंढक का वृक्क और उत्पादन अंग। *fb*-fat body ; *t*-testis ; *K*-kidney ; *u* ureter ; *r*-rectum ; *ou*-opening of the ureter; *c*-cloaca ; *ub*-urinary bladder-

वृक्क (**Kidneys**)—मेंढ़क में दो वृक्क होते हैं जो चपटे लम्बे, और हलके लाल रंग के होते हैं। ये रीढ़ की हड्डियों के ऊपर एक बाईं ओर और दूसरा दाईं ओर रहता है (चित्र २०)

प्रत्येक वृक्क अपनी बाहरी ओर से एक शिरा के द्वारा मिला रहता है जिसको रीनल पोर्टल शिरा (Renal portal vein) कहते हैं। ये शिराएँ दोनों वृक्कों के भीतर पहुँच कर बहुत सूक्ष्म शिराओं में बँट जाती हैं। बँटकर ये बहुत से गाँठनुमा अंगों में बदल जाती हैं। इन गाँठों को ग्लॉमेरुलस (Glomerulus) कहते हैं ये एक प्रकार की गोलाकार थैलियों में रहते हैं जिनको बोमैन्स या मैलपीघियन थैलियाँ (Bowmans' or Malpighian capsule) कहते हैं। इन्हीं गाँठों से यूरिया, यूरिक एसिड व पानी इत्यादि छन कर बहुत सूक्ष्म नलियों द्वारा निकलता है। इन नलियों को यूरिनरी ट्यूब्यूल्स (Urinary tubules) कहते हैं (चित्र २१)। जब रक्त रीनल पोर्टल शिरा और रीनल धमनी द्वारा वृक्क में प्रवेश करता है तो इन्हीं गाँठों द्वारा उसे चलना पड़ता है।
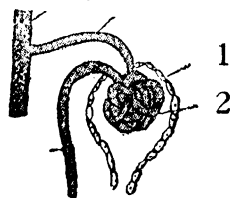
चित्र २१—मेंढ़क के वृक्क के छितिज खंड का एक छोटा भाग जैसा अनुवीक्षण यंत्र द्वारा प्रतीत होता है।
1–malpighian capsule
2–glomerulus.

वृक्क के भीतर के सब यूरिनरी ट्यूब्यूल्स मिल कर यूरेटर (Ureter) के द्वारा इन वस्तुओं का त्याग करते हैं। यहाँ से ये बूँद बूँद कर के क्लोका से होकर मूत्राशय में पहुँच जाते हैं जहाँ वे मूत्र के रूप में एकत्रित होते रहते हैं। मूत्राशय से मूत्र समय समय पर बाहर गिरा दिया जाता है। इस प्रकार इनसे शुद्ध होकर रक्त रीनल शिराओं के द्वारा पोस्टकैवल शिरा में भेज दिया जाता है। यहाँ से यह साइनसवेनासस् से होकर हृदय में चला जाता है। इन अंगों के कार्य करने के लिये शुद्ध रक्त रीनल धमनी द्वारा आया करता है।

दूसरा मुख्य हानिकारक पदार्थ कार्बन की वस्तुएँ हैं जो फुस्फुस के द्वारा आक्सीजन से धीरे धीरे भस्म (Slow combustion) होकर

कार्बन डाइ-आक्साइड के रूप में बाहर निकल आता है। इसका कुछ अंश चर्म द्वारा भी साँस लेने के साथ साथ निकाल दिया जाता है। चर्म से कुछ और हानिकारक पदार्थ भी निकलते हैं जिनमें नाइट्रोजन का अंश रहता है। यह क्यूटेनियस थैलियों में से रक्त की केशिकाओं से छनकर मेंढ़क के तैरते समय पानी की धारा के साथ निकल जाता है।

इनके अतिरिक्त बहुत से हानिकारक पदार्थ जैसे मल (Faeces) और पित्त का कुछ भाग मलाशय द्वारा बाहर फेंक दिया जाता है। इस प्रकार से मेंढ़क का शरीर सब हानिकारक वस्तुओं से सदा शुद्ध होता रहता है।

अभ्यास

१. मेंढ़क के शरीर से हानिकारक वस्तुओं के त्याग की रीति का वर्णन करो।

२. मेंढक के शरीर में लाभप्रद (Anabolic) और हानिप्रद (katabolic) रीतियों की तुलना करो।

३. संक्षिप्त टिप्पणी लिखोः—ग्लामेरुलस (Glomerulus); पित्तकी थैली; क्यूटेनियस ग्लैंड्स; गलफर (Gills)

४. मेंढ़क के शरीर में वृक्क के अतिरिक्त और कौन कौन से अंग हानिकारक वस्तुओं के निकलने में सहायता पहुँचाते हैं। वे कौन कौन से पदार्थों का त्याग करते हैं और उनका त्याग किस भाँति होता है।

५. एक्सक्रीसन (Excretion) और सेक्रीशन (Secretion) से तुम क्या समझते हो। निम्नांकित में से कौन कौन एक्सक्रीशन्स और कौन सेक्रीशन्स हैं :—पित्त; पेशाब; अग्नारस; कारबन-डाइआक्साइड; शरीर गुहा रस।

६. यदि मेंढ़क की नासिकाएँ बन्द कर दी जायँ जिससे उसके फुस्फुस कार्य न कर पावें तो क्या होगा ? यदि नासिकाओं को न बन्द कर चर्म का कार्य बन्द कर दिया जाय, तो उसकी दशा में क्या अन्तर होगा ?

अध्याय ८

मस्तिष्क और नाड़ियाँ

(Brain and the Nervous system)

अब तक हम लोगों ने मेंढ़क के शरीर की भिन्न भिन्न क्रियाओं को देखा है। अब यह देखना चाहिये कि ये क्रियाएँ किस प्रकार होती हैं और शरीर के कौन-कौन से अंगों की आज्ञा का ये पालन करती रहती हैं। जिस प्रकार मोटरकार अथवा इंजिन के चलने के लिये एक ड्राइवर होता है जिसका पूरा अधिकार उस मोटर अथवा इंजिन के सारे पुरजों पर होता है उसी प्रकार प्रत्येक प्राणिमात्र के शरीर में भी एक संचालक अंग होता है जो शरीर के सारे अंगों पर अधिकार रखता है और उनकी कठिनाइयों तथा उनके कल्याण का ध्यान भी रखता है। इस अंग को मस्तिष्क (Brain) कहते हैं।

जिस प्रकार किसी बड़े तारघर से चारों ओर के छोटे-छोटे तारघर बहुत से तारों के द्वारा मिले रहते हैं उसी प्रकार इस मस्तिष्क से शरीर के सारे अंग तार के समान रेशों से मिले रहते हैं जिनको नसें या नाड़ियाँ (Nerves) कहते हैं। इन नाड़ियों के द्वारा मस्तिष्क को शरीर के प्रत्येक अंग से सूचना मिलती रहती है।

नाड़ियों का जाल (Nervous system)—मेंढ़क के शरीर में भी ऐसा ही मस्तिष्क और ऐसी ही नाड़ियाँ हैं। मस्तिष्क से पीछे की ओर निकला हुआ एक भाग और होता है जिसको सुषुम्ना (Spinal cord) कहते हैं। मस्तिष्क और सुषुम्ना मिलकर केन्द्रिय वात नाड़ी (Central nervous system) बनाते हैं और इनसे निकली हुई नाड़ियों को बाहरी वात नाड़ी (Peripheral nervous system) कहते हैं। तीसरी प्रकार की नाड़ियाँ वे हैं जो मस्तिष्क के निचले भाग से निकल कर सुषुम्ना से निकली हुई नाड़ियों से मिलती हुई पीछे चली जाती हैं और अंत में सुषुम्ना से मिल जाती हैं। इनको सिम्पॅथेटिक नाड़ियाँ (Sympathetic nerves) कहते हैं।

तुम्हारे अध्यापक विधिवत् एक जीवित मेंढ़क को बेहोश करके अथवा फौर्मेलीन (Formalin) में रखे हुए मेंढ़क को चीरने वाले तख्ते पर या तश्तरी में रखकर तुम्हें मेंढ़क के मस्तिष्क, सुषुम्ना और उनसे निकली
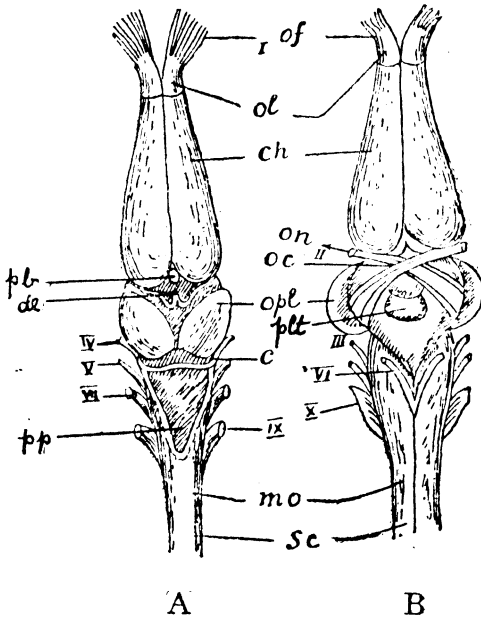
चित्र २२—मेंढक का मस्तिष्क और उसके भाग
(ऊपर और नीचे की ओर से दृश्य)

A–Dorsal view. B–Ventral view.

of–olfactory fibres: *ol*–olfactory lobes; *ch*–cerebral hemispheres; *on*–optic nerve; *oc*–optic chiasma; *opl*–optic lobes; *c*–cerebellum; *mo*–medulla oblongata; *sc*–spinal cord; I, II, III, IV, V, VI, VII, IX, X–cranial nerves. *pb*–pineal body; *d*–diencephalon *pit*--pitnitary body; *pp*–posterior plexus;

हुई नाड़ियों और सिम्पॅथेटिक नाड़ियों (Sympathetic nerves) को उसकी खोपड़ी, रीढ़ की हड्डी और शरीर खोलकर दिखलावेंगे। तुम इसके

प्रत्येक भागों को ध्यान से देखो और अपनी कापी में इसका चित्र खींचो।

मस्तिष्क (Brain)—मेंढ़क का मस्तिष्क ऊपर से देखने से (चित्र २२) पहला के समान प्रतीत होगा। सब से आगे के भाग को ऑलफॅक्टरी लोब्स (Olfactory lobes) कहते हैं। इनमें से आगे की ओर नाड़ियों के कुछ रेशे (Nerve-fibres) रहते हैं जो नाक तक मिले होते हैं। इन अंगों में सूँघने के प्रभाव को ग्रहण करने की शक्ति होती है।

इसके पीछे का भाग कुछ लम्बा गोलाकार होता है; जिसको सेरिब्रल हेमिस्फियर्स या सेरिब्रम (Cerebral hemispheres or cerebrum) कहते हैं। यह वही स्थान है जहाँ से मेंढ़क की प्रत्येक क्रियाएँ होती रहती हैं। इन्हीं में सोचने, समझने तथा अन्य क्रियाओं के करने की शक्ति रहती है। इसके पीछे के भाग को डायनकेफेलन (Diencephalon) कहते हैं और इसी से सटे हुए दोनों ओर दो गोलाकार भाग होते हैं जिनको आप्टिक लोब्स (Optic lobes) कहते हैं। आप्टिक लोब्स से निकली हुई दो नाड़ियाँ नीचे की ओर चल कर आपस में मिल जाती हैं (चित्र २२) दूसरा इस मिली हुई जगह को आप्टिक च्याज़मा (Optic chiasma) कहते हैं। इनमें देखने के प्रभाव को प्रतीत कर लेने की शक्ति होती है।

इसके बाद पीछे की ओर एक चिपटा पतला भाग होता है जिसको सेरीबेलम् (Cerebellum) कहते हैं। इसी के कारण मेंढ़क और अन्य जीवधारी अपने को सँभालते हैं या चलते फिरते रहते हैं और लुढ़कने नहीं पाते। इस पर एक पीली झिल्ली होती है जिसको पोस्टीरियर प्लेक्सस् (Posterior plexus) कहते हैं। इसी के नीचे और पीछे की ओर सुषुम्ना का फूला हुआ भाग होता है जो मस्तिष्क से सटा रहता है। इसको मेड्युला आबलांगेटा, (Medulla oblongata) कहते हैं (चित्र २२ पहला और दूसरा) इन के अतिरिक्त मस्तिष्क के ऊपरी भाग में एक नन्हा सा अंग होता है जिसे पीनियल बाडी (Pineal body) कहते हैं और इसी प्रकार निचले भाग में पीच्युट्री बाडी (Pitnitary body) होता है। ये दोनों शरीर के सुडौल बनावट और वृद्धि में विशेष सहायता पहुँचाते हैं।

मस्तिष्क की नाड़ियाँ (Cranial nerves)—मस्तिष्क से

खोपड़ी के भिन्न भिन्न अंगों से मिली हुई १० नाड़ियाँ दाहिनी ओर और १० नाड़ियाँ बाईं ओर निकलती हैं, जिनको मस्तिष्क की नाड़ियाँ (Cranial or Cerebral nerves) कहते हैं। मेंढ़क के शरीर में जितनी नाड़ियाँ हैं वे सब तीन भागों में बाँटी जा सकती हैं। पहली वह जिनका कार्य्य बाहर की सूचना को भीतर ले आना है। इनको चेतनवाही नाड़ियाँ (Sensory nerves) कहते हैं। दूसरी वह जिनका कार्य्य भीतर अर्थात् मस्तिष्क और सुषुम्ना की आज्ञा को ले जाना है। इनको कार्य्यवाही नाड़ियाँ (Motor nerves) कहते हैं। और तीसरे प्रकार की नाड़ियाँ वे हैं जो दोनों कार्य्य कर सकती हैं इनको मिश्रित नाड़ियाँ (Mixed nerves) कहते हैं।

मस्तिष्क से निकली हुई नाड़ियों में से पहली दाहिनी और बाईं ओर की नाड़ियाँ जिनको आलफेक्टरी नाड़ियाँ (Olfactory nerves) कहते हैं बाहर से सूँघने के प्रभाव (Sensation of smell) को आलफॅक्टरी लोब्स (Olfactory lobes) तक ले जाती हैं। इसलिये ये सेंसरी नाड़ियाँ हैं।

इसी क्रम से दूसरी नाड़ियाँ जिनको आप्टिक नाड़ियाँ (Optic nerves) कहते हैं, आँखों को आप्टिक लोब्स से मिलाती हैं। ये आँखों तक पहुँचने के पहले मस्तिष्क के नीचे आपस में मिलकर आप्टिक च्याज़्मा (Optic chiasma) बनाती हैं (चित्र २२)। इसका कार्य्य आँखों में बाहरी वस्तुओं की आभा पड़ जाने के प्रभाव (Sensation) को मस्तिष्क तक पहुँचाना है। यह भी सेंसरी नाड़ी है।

तीसरी, दोनों ओर की नाड़ियाँ आप्टिक लोब्स के कुछ नीचे से निकल कर आँखों के नीचे भीतर की ओर को लगी हुई छः माँस-पेशियों में से चार से मिली रहती हैं। ये आँखों को इधर-उधर घुमाने की आज्ञा को मस्तिष्क से इन माँस-पेशियों तक ले जाती हैं। इसलिये ये कार्य्यवाही नाड़ियाँ (Motor nerves) हैं।

चौथी नाड़ियाँ भी तीसरी के समान हैं और आँखों की शेष दो माँस-पेशियों में से एक तक जाती हैं।

पाँचवीं भी मिक्स्ड नाड़ियाँ हैं जो मेड्यूला आबलांगेटा से निकल कर थुथुन (Snout), आँखों की निचली पलक और निचले जबड़े की माँस-पेशियों को जाती हैं।

छठीं, तीसरी व चौथी के समान हैं और आँखों की छठीं माँस-पेशी तक जाती हैं। इसलिये ये मोटर नाड़ियाँ हैं।

सातवीं मिक्स्ड हैं जो मुँह के तालू और निचले जबड़े के चर्म व माँस-पेशियों को जाती हैं।

आठवीं, पहली और दूसरी के समान हैं। इसे आडिट्री नाड़ी (Auditory nerve) कहते हैं। ये कान के अंगों से मिली हुई हैं और शब्द के प्रभाव (Sensation of hearing) को मस्तिष्क तक लाती हैं। इसलिये यह भी सेंसरी हैं।

नवीं, जिसे ग्लोसोफैरिंजियल नाड़ी (Glossopharyngeal nerve) कहते हैं मिश्रित नाड़ियाँ हैं जो जीभ और श्वाँस-प्रणाली से मिली हैं।
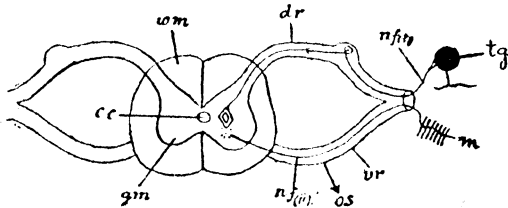
चित्र २३—भीतरी भाग और रिफ्लेक्स क्रियाएँ दिखलाने के लिये सुषुम्ना का एक क्षितिज चित्रण।

wm–white matter; *cc*–central canal; *gm*–grey matter; *dr*–dorsal root; *vr*–ventral root; *os*–order sent; *nf* (i)–nerve fibre, bringing sensation from outside; *nf* (ii)–nerve. fibre, conveying order; *tg*–touch gland; *m*–muscle

दसवीं नाड़ियाँ जिनको वैगस (Vagus or wandering)

कहते हैं, शरीर के भिन्न भिन्न अंगों को जाती हैं; जैसे हृदय, फुस्फुस, आमाशय, इत्यादि ।

सुषुम्ना (Spinal cord)—मस्तिष्क से पीछे की ओर रीढ़ की हड्डियों के भीतर से होती हुई एक मोटी नाड़ी जाती है जिसको सुषुम्ना कहते हैं । यह पीछे की ओर पतली होती चली जाती है । ध्यान से देखने से प्रतीत होगा कि जितनी नाड़ियाँ सुषुम्ना से निकलती हैं उनमें दो जड़ें हैं, एक ऊपर और दूसरी नीचे (Dorsal and ventral roots) । ऊपर की जड़ में एक छोटी सी सूजन (Ganglion) होती है । इस जड़ से बाहर की सूचना सुषुम्ना तक आती है और सुषुम्ना से आज्ञा नीचे की जड़ से बाहर की ओर माँस-पेशियों तक जाती है (चित्र २३) ।

रिफ्लेक्स कार्य (Reflex action)—सुषुम्ना के भीतर एक भूरा पदार्थ होता है जो मस्तिष्क में भी पाया जाता है । इसे ग्रे मेटर (Grey matter) कहते हैं । इसमें कुछ अंश तक मस्तिष्क के समान आज्ञा देने का गुण होता है । इसलिये कभी कभी बिना मस्तिष्क की सहायता के ही बाहर की सूचना मिलते ही सुषुम्ना से ही आज्ञा चली जाती है । जैसे सोते समय मच्छर के काटने पर बिना मस्तिष्क तक सूचना पहुँचे ही उसे उड़ा देना; आँखों की पलकों का आप-से-आप ढँकना और उठाना; कहीं जाते समय अपने मित्र से बातें करते करते अपने स्थान पर पहुँच जाना अर्थात् पैर का आप-से-आप आगे बढ़ते रहना इत्यादि ।

इस तरह की सभी क्रियाओं को रिफ्लेक्स क्रियाएँ (Reflex actions) कहते हैं । जैसे दर्पण से प्रकाश रिफ्लेक्ट (Reflect) हो जाता है उसी तरह समाचार मिलते ही सुषुम्ना से ही आज्ञा चली जाती है । इसे समझने के लिये चित्र २३ में बने रिफ्लेक्स आर्क (Reflex arc) को देखिये ।

सुषुम्ना की नाड़ियाँ (Spinal nerves)—सुषुम्ना से ९ या किसी किसी मेंढक में १० बाईं ओर और उतनी ही दाहिनी ओर नाड़ियाँ निकलती हैं । पहली दोनों ओर की नाड़ियाँ जीभ की मांस पेशियों को जाती जिनमें यह केवल आज्ञा पहुँचातीं हैं । इसलिये यह मोटर नाड़ियाँ हैं । और

शेष नाड़ियाँ समाचार ले आती हैं और आज्ञा भी ले जाती हैं, इसलिये ये मिश्रित नाड़ियाँ हैं।

दूसरी नाड़ियाँ निकल कर तीसरी से मिल कर अग्रबाहुओं को जाती हैं। चौथी, पाँचवी और छठीं शरीर के चर्म व माँश पेशियों को जाती हैं। सातवीं, आठवीं व नवीं सुषुम्ना से निकल कर आपस में मिल जाती हैं और मेंढ़क की पिछली टाँगों के चर्म और माँस-पेशियों को जाती हैं।

सिम्पथेटिक नाड़ियाँ (Sympathetic nerves)—रीढ़ की हड्डियों के कुछ ऊपर दोनों ओर दो पतली समानान्तर नाड़ियाँ दिखलायी पड़ेंगी जिनमें ९ या १० ग्रंथियाँ भी प्रतीत होंगी। इन नाड़ियों को सिम्प थेटिक नाड़ियाँ (Sympathetic nerves) कहते हैं। इन ग्रंथियों पर सुषुम्ना से निकली हुई नाड़ियाँ मिलती हैं और यहीं से बहुत सी सूक्ष्म नाड़ियों के रेशे भी निकलते हैं जो हृदय, रक्त की नलियों, अमाशय, अँतड़ियों, वृक्क, यकृत और जनन-इन्द्रियों तक जाती हैं।

इस भाँति मेंढ़क के शरीर में चारों ओर नाड़ियों का जाल फैला हुआ है और शरीर के किसी भाग से किसी प्रकार की सूचना सरलता के साथ मस्तिष्क और सुषुम्ना तक पहुँच सकती है और मेंढ़क उनके अनुसार कार्य कर सकता है।

अभ्यास

१. स्नायु प्रणाली का क्या कार्य है और जिस भाँति यह कार्य होता है उस का वर्णन करो। [H. S. 1934]

२. निम्नांकित के बारे में नोट लिखोः—रिफलेक्स क्रियाएँ; सिम्प-थेटिक नाड़ियाँ; आप्टिक च्याजमा।

३. मेंढ़क के मस्तिष्क का एक सुन्दर चित्र बनाओ और उसके सभी भागों का नाम करण करो तथा प्रत्येक भाग के कार्य का वर्णन करो।

४. चेतनवाही, कार्यवाही और मिश्रित नाड़ियों से तुम क्या समझते हो। इन वर्गों में मस्तिष्क से निकली हुई नाड़ियों को विभक्त करो और प्रत्येक नाड़ी का कार्य लिखो।

५. सुषुम्ना का क्या कार्य है ? उस में से कितनी नाड़ियाँ निकलती

हैं। बाहरी प्रभाव सुषुम्ना तक किस प्रकार पहुँचता है और यहाँ से आज्ञा किस प्रकार माँस पेशियों तक जाती है।

६. क्या होगा यदि :—

(क) मेंढ़क के मस्तिष्क से लघुमस्तिष्क (Cerebellum) निकाल लिया जाय।

(ख) आँख और मस्तिष्क को मिलाने वाली आप्टिक नाड़ी काट दी जाय।

(ग) मेंढ़क के मस्तिष्क को सुषुम्ना से मेडुला आब्लांगेटा के स्थान पर विरक्त कर दिया जाय और उसका एक बँधा हुआ पैर चुभोया जाय। अन्तिम भाग के कार्य को भली प्रकार वर्णन करो।

७. निम्नलिखित पर नोट लिखोः—वैगस नाड़ी; ग्रे मेटर, ग्रंथियाँ (Ganglion) और लघु मस्तिष्क।

८. चित्रों की सहायता से स्नायु प्रणाली के कार्य करने की विधि का वर्णन करो।

अध्याय ९

विशेष ज्ञान-इन्द्रियाँ

(Organs of Special Senses)

मेंढ़क बाहरी वस्तुओं को पाँच प्रकार से ज्ञात कर सकता है। इस भाँति ज्ञात करना पाँच भिन्न भिन्न अंगों द्वारा होता रहता है, यथा—वह आँखों द्वारा देख सकता है, बाहरी शब्द को कानों द्वारा सुन सकता है, स्वाद को जीभ द्वारा चख सकता है, महक को नाकों द्वारा पा सकता है, और स्पर्श को चर्म द्वारा प्रतीत कर सकता है।

ये पाँचों अंग पाँच विशेष बातों का ज्ञान कराते हैं इसलिये इनको विशेष ज्ञान-इन्द्रियों के अंग (Organs of special senses or receptor organs) कहते हैं। इन्हीं के द्वारा मस्तिष्क को प्रत्येक सूचनाएँ मिलती रहती हैं। इनके अतिरिक्त शरीर के भीतर भी ऐसे अंग हैं जिनके द्वारा भूख, पेट में दर्द आदि का ज्ञान होता रहता है।

देखने का अंग—आँखें (Organ of sight, Eyes)—मेंढ़क और अन्य हड्डीदार जीवों में आँखें बहुत ही आवश्यक अंग हैं। इसकी बनावट इस प्रकार के जीवों में लगभग एक ही समान होती है।

मेंढ़क की आँखों में एक ऊपर और दूसरी नीचे पलकें होती हैं जिनमें बरौनियाँ अथवा बालें नहीं होते। नीचे की पलक के भीतर एक पतली झिल्ली होती है, जिसको निक्टिटेटिंग झिल्ली (Nictitating membrane) कहते हैं। पानी में डूबते समय मेंढ़क अपनी आँखों को इसी झिल्ली द्वारा ढँक लेता है (चित्र २४)।

मेंढ़क की आँखों को खोलने से या उसको बीचोबीच काटने से उसकी भीतरी बनावट स्पष्ट रूप से मालूम हो जायगी। सब से बाहर एक मोटी माँस-पेशियों का भाग होता है जिसको स्क्लेरोटिक (Sclerotic) कहते हैं। यह आगे पतला और पारदर्शक हो जाता है। इसके इस भाग को कार्निया (Cornea) कहते हैं।

इसके नीचे एक भूरा भाग होता है जिसको कोरायड (Choroid) कहते हैं। यह आगे की ओर कुछ पतला और काला रहता है। इसको आइरिस (Iris) कहते हैं। आइरिस के मध्य में एक गोलाकार छिद्र होता

है जिसको पुतली या प्युपिल (Pupil) कहते हैं। कोरायड से सटा हुआ क विशेष प्रकार का सचेतन (Sensitive) अंग होता है जिसको रेटिना
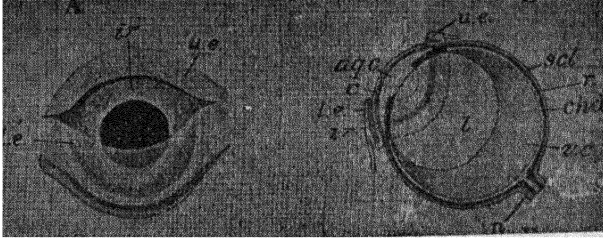
A B

चित्र २४ –A–मेंढ़क की आँख सामने से। B—उसी का सीधा खंड और भीतरी भाग।
le–lower eyelid; *ue*–upper eyelid; *ir*–iris; *c*–cornea; *aqc*–aqueous chamber; *scl*–sclerotic; *r*–retina; *chd*–choroid; *vc*–vitreous chamber; *n*–optic nerve; *l*–crystalline lens.

(Retina) कहते हैं। यहीं बाहरी वस्तुओं का अक्स (Image) पड़ता है।

आइरिस के पीछे एक सफेद गोलाकार चमकदार भाग होता है जिसको क्रिस्टेलाइन लेन्स (Crystalline lens) कहते हैं। यह अपने स्थान पर ऊपर और नीचे से माँस-पेशियों के कारण लटका रहता है। इन पेशियों को सस्पेन्सरी लिगामेंट्स और सीलियरी पेशियाँ (Suspensory ligaments and ciliary muscles) कहते हैं। इनके सिकुड़ने से लेन्स की गोलाई में दूर या समीप की वस्तुओं के देखने के अनुसार अधिकता अथवा कमी हो सकती है।

कार्निया और क्रिस्टेलाइन लेन्स के बीच के भाग को ऐकुअस चॅम्बर (Aqueous chamber) कहते हैं। जिसके भीतर एक तरल पदार्थ ऐकुअस ह्यूमर (Aqueous humour) भरा रहता है। लेन्स और रेटिना के बीच के भाग को विट्रियस चॅम्बर (Vitreous chamber) कहते हैं। इसके भीतर भी एक तरल पदार्थ विट्रियस ह्यूमर (Vitreous humour) भरा रहता है। किसी वस्तु से किरणें कॉर्निया,

(Utriculus) और नीचे वाली को सैकुलस् (Sacculus) कहते हैं। तीनों अर्द्ध-गोलाकार नलियाँ (Semi-circular canals) यूट्रिकुलस से ही निकलती हैं और निकलने के स्थान पर फूली रहती हैं। इन फूले हुए स्थानों को एम्पुली (Ampullae) कहते हैं। इनमें बहुत सूक्ष्म बाल होते हैं जिन पर शब्द का विशेष रूप से प्रभाव पड़ता है (चित्र २५)

इसके अतिरिक्त ये तीनों नलियाँ तीन सतहों (Planes) से लगी रहती हैं। इसलिये वे मेंढक के बैठने, कूदने, तैरने इत्यादि में भी सँभालने के रूप में सहायता देती रहती हैं। तात्पर्य यह है कि यदि इन नलियों में से कोई नली काट दी जाय तो उस झुकाव पर मेंढक अपने को नहीं सँभाल सकेगा अर्थात् गिर जायगा।

यूट्रिकुलस और सैकुलस में एक प्रकार का दूध सदृश तरल पदार्थ होता है जिसको एन्डोलिम्फ (Endolymph) कहते हैं। इसी प्रकार कान का भितरी भाग भी एक तरल पदार्थ से भरा रहता है जिसको पेरिलिम्फ (Perilymph) कहते हैं। शब्द टिम्पॅनिक परदे से काल्युमेला तक पहुँचता है जिसके हिलने से दोनों तरल पदार्थ में गति पैदा हो जाती है। इस प्रकार एम्पुली के सूक्ष्म बालों में गति होती है जो मस्तिष्क से आई हुई आठवीं नाड़ियों से लगी रहती हैं। तत्पश्चात् शब्द का प्रभाव आठवीं नाड़ियों से होकर मस्तिष्क तक पहुँच जाता है।

स्वाद का अंग—जीभ (Organ of taste, Tongue)— स्वाद को ज्ञात करने के लिये जीभ और मुँह-गुहा के चारों ओर झिल्लियाँ (Mucous membrane) हैं। जीभ में कुछ विशेष प्रकार की उभड़नें होती हैं जो अधिकतर भीतर की ओर होती हैं। इन उभड़नों को टेस्ट बड्स (Taste buds) कहते हैं। स्वाद यहाँ पर आते ही सातवीं व नवीं मस्तिष्क की नाड़ियों द्वारा उसका प्रभाव मस्तिष्क तक पहुँचता है।

सूँघने का अंग—नासिका (Organ of smell, Nose)— महँक को ज्ञात करने का यन्त्र नासिका के भीतर रहता है। यह मस्तिष्क की पहली नाड़ियों के रेशों से बना होता है। यह महँक को लेते ही पहली नाड़ियों

द्वारा मस्तिष्क तक पहुँचा देता है और तभी मस्तिष्क उस मेंढक की पूरी पहचान कर पाता है।

स्पर्श अनुभव करने का अंग—चर्म (Organ of touch, Skin)—छूने या तापक्रम के ज्ञान करने का यंत्र लगभग चारों ओर चर्म में ही पाया जाता है। चर्म के भीतर कई स्थान पर सूक्ष्म नाड़ियों के रेशे इकट्ठे होकर कुछ गोलाकार गाँठ बना लेते हैं जिनको टेक्टाइल सेल्स (Tactile cells) कहते हैं। इन पर पहुँचते ही छूने या तापक्रम का प्रभाव नाड़ियों के द्वारा सुषुम्ना तक पहुँच जाता है जहाँ से यह या तो मस्तिष्क तक पहुँच जाता है या यहीं से आज्ञा हो जाती है। दूसरी दशा में हम इसको रिफ्लेक्स कार्य कहेंगे जैसा कि प्रायः पैर में सोते समय मच्छर के काटने पर हम बिना मस्तिष्क तक सूचना पहुँचे या आज्ञा पाये ही उसको उड़ा देते हैं।

इन सभी दशाओं में उस अंग अथवा यंत्र को, या उस नाड़ी को जो उससे मिली हुई है, या मस्तिष्क के उस केन्द्र को जहाँ तक वह नाड़ी जाती है, नष्ट कर देने से हम वह चेतनता ज्ञात नहीं कर सकते।

अभ्यास

१. मेंढक की आँख का एक खंडक चित्र बनाओ। सभी भागों का नामकरण करो और प्रत्येक भाग का कार्य लिखो।

२. विशेष ज्ञान-इन्द्रियों से तुम क्या समझते हो ? शरीर के कौन कौन से अंग विशेष ज्ञान-इन्द्रियों के नाम से प्रसिद्ध हैं ?

३. ध्वनि किस प्रकार कर्ण तक आती है और मस्तिष्क तक पहुँचाई जाती है। इसे एक सुन्दर चित्र के द्वारा समझाओ।

४. टिप्पणी लिखोः—रेटिना; ऐम्पुली (Ampullae); स्पर्श कोष्ठ (Tactile cells); अंध बिन्दु (Blind spot); प्युपिल।

५. मेंढक के स्पर्श और स्वाद के अंगों का वर्णन करो। क्या होगा यदि वे नाड़ियाँ काट दी जाँय जो मस्तिष्क से इन्हें मिलाती हैं ?

६. (क) मेढ़क गंध के प्रभाव की भिन्नता कैसे प्राप्त कर पाता है ?
(ख) आडिटरी (Auditory) और आप्टिक (Optic) नाड़ियों के कार्य का वर्णन करो।

अध्याय १०

हड्डियाँ (Bones)

हड्डियाँ उच्च श्रेणी के प्राणीमात्र में पायी जाती हैं जैसे मेंढ़क, घड़ियाल, चिड़ियाँ, चूहा और मनुष्य। निम्न श्रेणी के प्राणीमात्र जैसे केंचुआ, बिच्छू, मक्खी इत्यादि में हड्डियाँ नहीं होतीं। मेंढ़क के शरीर में बहुत सी हड्डियाँ होती हैं जिन पर मेंढ़क अपने शरीर को सँभाले रहता है। इन्हीं के जोड़ों पर से वह अपने शरीर को घुमा भी सकता है।

जैसे किसी बड़े मकान के बनाने के पहले लोहे के छड़ इत्यादि लगाकर उसका ढाँचा तैयार किया जाता है उसी प्रकार मेंढ़क के शरीर में हड्डियों का एक ढाँचा है। जिसके ऊपर माँस-पेशियाँ लगी रहती हैं।

नरकंकाल (Skeleton)—एक मरे हुए मेंढ़क को पानी में उबाल कर माँस-पेशियों को निकाल देने पर उसकी हड्डियाँ साफ़ साफ़ दिखलायी देने लगती हैं जो भिन्न भिन्न भागों में बाँटी जा सकती हैं (चित्र २६)। (१) खोपड़ी (Skull)—यह कई हड्डियों से मिलकर बनी है। इसके नीचे निचला जबड़ा होता है जिसमें कार्टिलेज का एक भाग होता है जिसको हॉयड ऍपरेटस (Hyoid Apparatus) कहते हैं। (२) रीढ़ की हड्डियाँ (Vertebral column)—इनमें नौ हड्डियाँ या छल्ले (Vertebrae) होते हैं और पीछे एक लम्बी हड्डी भी होती है जिसको युरोस्टाइल (Urostyle) कहते हैं। (३) छाती की हड्डियाँ या वक्षास्थि (Shoulder or Pectoral girdle)—ये हड्डियाँ अर्द्ध-गोलाकार रूप में लगी रहती हैं जो ऊपर आकर रीढ़ की हड्डियों से लटक जाती हैं। (४) इन्हीं से दोनों ओर लगी हुई अग्रबाहु (Fore-limbs) की हड्डियाँ होती हैं। (५) वक्षास्थि की ही भाँति कूल्हे की हड्डियाँ (Hip or Pelvic girdle) भी होती हैं। (६) इन्हीं से दोनों ओर जाँघों की हड्डियाँ (Hind-limbs) जुटी रहती हैं (चित्र २६)।

खोपड़ी (Skull)—खोपड़ी हड्डियों से बनी रहती है जो आपस में कार्टिलेज से जुटी होती हैं। इसमें एक बड़ा खोह (Brain case or Cranium) होता है जिसमें मस्तिष्क बहुत ही सुरक्षित रहता है। यह चारों ओर से हड्डियों से घिरा रहता है। ऊपर की हड्डी को फ्रन्टो-पेराइटल
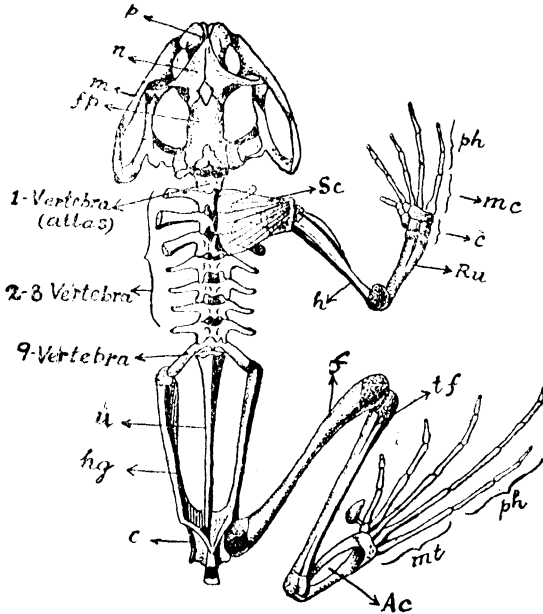
चित्र २६—मेंढक की हड्डियाँ (ऊपर से)।

p–premaxilla bone; *n*–nasal bone; *m*–maxilla; *fp*–fronto-parietal; *u*–urostyle; *hg*–hip girdle; *c*–cavity to fix femur; *ac*–astragalus and calcaneum; *mt*–metatarsal; *ph*–phallanges; *tf*–tibio-fibula; *f*–femur; *h*–humerus; *ru*–radio-ulna; *c*–carpals; *mc*–meta-carpals; *sc*–scapula,

(Fronto-parietal) कहते हैं। खोपड़ी में पीछे एक छिद्र होता है जिसमें से होकर सुषुम्ना निकलती है। इस छिद्र को फोरामन मॅगनम (Foramen-magnum) कहते हैं। यह ऑक्सिपीटल हड्डियों

(Occipital bones) से घिरा रहता है (चित्र २६)।

चित्र २७—मेंढ़क का खोपड़ा (नीचे से)।

1-Pre-maxilla bone. 2-Vomer bone. 3-Maxilla bone. 4-Pterygoid. 5-Quadratojugal. 6-Quadrate. 7-Supraoccipitals. 8-Occipitals. 9-Squamosal. 10-Parasphenoid. 11-Palatine.

आगे की ओर नाक की हड्डियाँ (Nasal bones) होती हैं और उसके आगे प्रीमैक्सिला हड्डियाँ (Premaxilla bones) होती हैं। इन्हीं हड्डियों से सटी हुई दोनों ओर एक एक हड्डी जाती है। हर एक को मैक्सीला हड्डी (Maxilla bone) कहते हैं। इसमें कुछ दाँत की भाँति उभड़नें होती हैं (चित्र २७)।
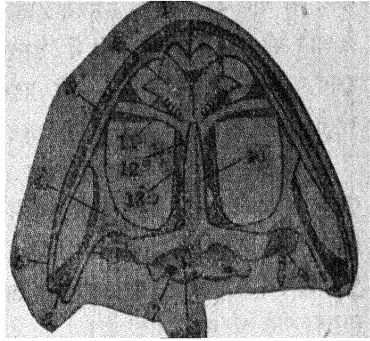
रीढ़ (Vertebral column)—रीढ़ की हड्डी में ९ छल्ले होते हैं जिनमें पहला छल्ला और सभों से बहुत ही भिन्न होता है (चित्र २६)। इसे एटलस (Atlas) कहते हैं। यह आगे की ओर नोकीली और दोनों ओर कुछ चिकना होता है। इन्हीं चिकनेपन पर खोपड़ी घूमती है। दूसरे छल्ले से सातवें तक का रूप लगभग एक समान ही होता है। दूसरे छल्ले की बाहें (Transverse processes) कुछ चिपटी अवश्य होती हैं (चित्र २८)।

चित्र २८—मेंढ़क का चौथा छल्ला।

a-neural spine; *b*-facets; *c*-transverse process; *d*-centrum; *e*-neural canal; *f*-neural arch.

इन सब छल्लों का अगला भाग अर्थात् सेण्ट्रम (Centrum) कुछ धँसा (Concave) और पिछला कुछ उभड़ा (Convex) रहता है, परंतु आठवाँ छल्ला दोनों ओर धँसा रहता है। इसलिये इसके पीछे की

धँसान को भरने के लिए नवाँ छल्ला आगे की ओर उभड़ा रहता है। नवें छल्ले की पीछे की ओर दो उभड़नें होती हैं जो यूरोस्टाइल (Urostyle) के आगे की ओर के दो गड्ढों में बैठती हैं। इस प्रकार एक की उभड़न दूसरे के गड्ढे से भली भाँति घुसी रहती हैं ताकि रीढ़ की हड्डियाँ अपने अपने स्थानों पर दृढ़ता के साथ स्थिर रहें।

इन सब छल्लों के जोड़ पर बीच में कार्टिलेज की एक तह लगी रहती है ताकि पीठ घुमाने या कूदने के समय ये हड्डियाँ रगड़ न खायें और इनमें चोट भी न आने पाये। इन छल्लों के बीच एक बहुत बड़ा छिद्र (Neural canal) होता है (चित्र २८) जिसमें से होकर सुषुम्ना पीछे की ओर जाती है।

वक्षास्थि (Shoulder-girdle)—यह नीचे की ओर होती है और
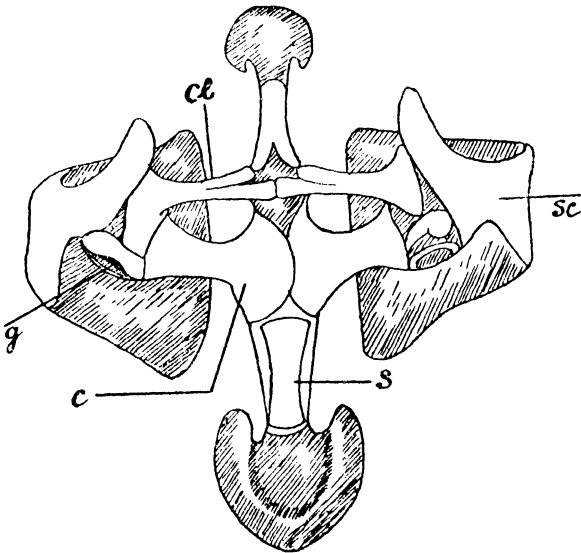
चित्र २९—मेंढ़क की वक्षास्ति।

cl–clavicle or collar bone; *g*–glenoid cavity; *c*–coracoid; *s*–sternum; *sc*–scapula.

अर्धचन्द्राकार रूप में रीढ़ की हड्डियों के ऊपर सँभली रहती है। यह कई हड्डियों के ऊपर रहती है। यह कई हड्डियों से मिलकर बनी है (चित्र २९)। आगे की ओर एक पतली हड्डी होती है जिसको हँसली (Collar bone or Clavicle) कहते हैं। इसके पीछे की हड्डी को कोराकॉयड (Coracoid) कहते हैं और दोनों ओर के पंखों को स्केपुला (Scapula) कहते हैं जो आगे बढ़कर कार्टिलेज की हो जाती है।

दोनों ओर के कोराकॉयड के पीछे बीच में एक हड्डी होती है जिसे स्टर्नम (Sternum) कहते हैं। स्केपुला, कोराकॉयड और हँसली के जोड़ पर दोनों ओर एक एक गड्ढा होता है जिसमें अग्रबाहु की पहली हड्डी घुसी रहती है। इन गड्ढों को ग्लेनॉयड गड्ढे (Glenoid Cavities) कहते हैं।

अग्र बाहु (Fore-limbs)—इन्हीं गड्ढों से दाहिनी और बाँई ओर मिली हुई बाँह की एक दृढ़ और थोड़ी झुकी हुई हड्डी होती है जिसे ह्यूमरस (Humerus) कहते हैं। यह पीछे की ओर थोड़ी उभड़ी हुई और आगे की ओर गोली होती है। यह गोलाकार सिरा इसके आगे वाली हड्डी के गड़ारीदार गड्ढे में घुसा रहता है। इस हड्डी को रेडिओ-अलना (Radio-ulna) कहते हैं। यह दोनों हड्डियों की जोड़ से बनी प्रतीत होती है। रेडिओ-अलना के आगे दो कतारों में कुछ गोली गोली छोटी हड्डियाँ (Carpal bones) होती हैं जिनमें से हथेली की हड्डियाँ (Meta-carpals) लगी रहती हैं। ये चार कतारों में होती हैं। जिनसे चार उँगलियाँ (Phallanges) निकलती हैं। सब से बाहरी उँगली में तीन हड्डियाँ, दूसरी में भी तीन परन्तु पहली से बड़ी बड़ी, और तीसरी और चौथी में दो दो हड्डियाँ होती हैं। पाँचवीं उँगली का भी कुछ चिन्ह रहता है [चित्र २६]।

कूल्हे की हड्डियाँ—(Hip-girdle) रीढ़ के नवें छल्ले के पंखों से मिली हुई यूरीस्टाइल के दोनों ओर से घूमकर पीछे की ओर मिलती हुई एक हड्डी होती है जिसको कूल्हे की हड्डी (Hip-girdle) कहते हैं। यह सचमुच तीन हड्डियों के जोड़ से बनी है परन्तु जैसे जैसे मेढक बड़ा

होता जाता है इसके जोड़ लुप्त होने लगते हैं। तत्पश्चात् यह एक ही प्रतीत होने लगता है। इसके दोनों ओर एक एक गड्ढा होता है जो ठीक उन तीनों हड्डियों के जोड़ पर ही होता है। इन गड्ढों को एसिटेबुलम (Acetabulum) कहते हैं जिसका कार्य ग्लीनॉयड गड्ढों के समान होता है। इन्हीं गड्ढों में टाँग की पहली हड्डियाँ घुसी रहती हैं (चित्र २६)।

पिछली टाँगें (Hind-limbs)—दोनों ओर के टाँगों की पहली हड्डी जो लम्बी और पतली होती है इन गड्ढों में घुसी रहती है। इस हड्डी को फीमर (Femur) कहते हैं। इससे मिली दोनों ओर एक चपटी हड्डी निकलती है जिसे टिबियो-फिबुला (Tibio-fibula) कहते हैं। यह दो हड्डियों के जोड़ से बनी प्रतीत होती है।

इससे मिली हुई दो हड्डियां होती हैं जिनको एस्ट्रेगेलस व कॅलकेनियम (Astragalus and Calcaneum) कहते हैं। ये मेढक को कूदने में बड़ी सहायता देती हैं। इसके बाद छोटी छोटी गोल हड्डियों (Tarsals) की एक कतार होती है जिनसे पिछले अंग की पांव की पांच हड्डियां (Meta-tarsals) मिलती हैं। यहां से पांच उँगलियां (Phallanges) निकलती हैं। इन उँगलियों में सब से बाहर की उँगली में तीन हड्डियाँ, दूसरी में सबसे बड़ी-बड़ी चार, तीसरी में तीन, और चौथी में दो और पांचवीं में भी दो हड्डियाँ होती हैं। छठी उँगली का भी कुछ चिन्ह रहता है (चित्र २६)।

अभ्यास

१. अग्रबाहु और पिछली टागों की हड्डियों का नाम लिखो। शरीर के भिन्न भिन्न अंगों के हड्डियों का क्या कार्य है? [H. S. 1933]

२. प्राणीमात्र के शरीर में हड्डियों से क्या लाभ है? [H.S.1934]

३. मेढ़क की खोपड़ी का वर्णन करो और बतलाओ उससे क्या लाभ है?

४. नोट लिखो :—ऐटलस; मेढ़क का नवां छल्ला; ऐस्ट्रगलस और कैलकेनियम।

५. मेढक के वक्षास्थि और कूल्हे की हड्डियों की तुलना करो; अग्रबाहु और पिछली टागों की तुलना करो और बतलाओ कि आठवें और नवें छल्लों में क्या अन्तर है?

अध्याय ११

जोड़ या संधियाँ (Joints)

भिन्न-भिन्न संधियाँ (Kinds of Joints)—शरीर जोड़ों पर ही घूम सकता है। यदि शरीर में जोड़ न हों तो यह बिलकुल मूर्त्ति की भाँति प्रतीत होगा और हम कुछ भी न कर सकेंगे। जोड़ों के ही कारण मेंढ़क, मनुष्य और अन्य हड्डी वाले जीवधारी भिन्न-भिन्न क्रियाएँ कर सकते हैं। मेंढ़क के शरीर में कई प्रकार के जोड़ होते हैं। जैसे (१) बॉल और साकेट जोड़ (Ball and socket joints)—इसका उदाहरण ह्यूमरस हड्डी का वक्षास्थि या फीमर का कूल्हे की हड्डी के साथ का जोड़ है जिसमें हड्डियों का गोलाकार सिरा वक्षास्थि या कूल्हे की हड्डियों के गड्ढे में इस प्रकार घुसा रहता है कि हाथ और पैर को लगभग ३६०° घुमाया जा सकता है। (२) हिंज जोड़ (Hinge joints) जैसे उंगलियों की हड्डियों में आपस के जोड़, फीमर या ह्यूमरस का टीबियो-फीबुला या रेडियो-अलना के साथ का जोड़—इसमें गति लगभग १८०° तक होती है। (३) ग्लाइडिंग जोड़ (Gliding joints)—जैसे रीढ़ की छल्लों का आपस में जोड़। इसमें एक छल्ला दूसरे छल्ले पर रहता है और उनके बीच में मुलायम हड्डी या कार्टिलेज का गोलाकार टुकड़ा होता है जिस पर छल्ले झुकने के समय चक्कर खाया करते हैं। (४) पीवट जोड़ (Pivot joint)—रीढ़ का पहला छल्ला, एटलस (Atlas) और खोपड़ी का जोड़ पीवट जोड़ है। इसमें पहले छल्ले की नोक पर खोपड़ी घूमा करती है। (५) स्थिर जोड़ (Immovable joints)—यह खोपड़ी की हड्डियों के आपस के जोड़ में पाया जाता है। बहुत से चिन्ह खोपड़ी में पाये जाते हैं। यह सब खोपड़ी की हड्डियों के जोड़ के ही चिन्ह हैं।

संधियों की बनावट (Construction of the joint)—जितनी हड्डियाँ हैं उनके सिरों पर जोड़ में मुलायम हड्डी की एक तह रहती है। इसके भीतर बहुत से छिद्र रहते हैं जो बहुत छोटी-छोटी थैलियों तक जाते हैं। इन थैलियों को साइनोवियल थैलियाँ (Sinovial sacs) कहते हैं (चित्र ३०)। इनमें एक प्रकार का तेल बनता रहता है जिसको साइनोवियल तेल (Sinovial oil) कहते हैं जो इसमें से बराबर जोड़ में निकलता रहता है। जिस प्रकार मशीनों के जोड़ों में लुब्रिकेटिंग तेल (Lubricating oil) दिया जाता है ताकि मशीन के पुर्जे अपना काम भलीभाँति करते रहें; उसी प्रकार यह तेल भी शरीर के जोड़ों को स्वस्थ दशा में रखता है। इस तेल के न निकलने से मनुष्य को गठिये का रोग हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे पुर्जों में तेल न दिया तो पुर्जे भी कुछ दिन बाद जकड़ जाते हैं।
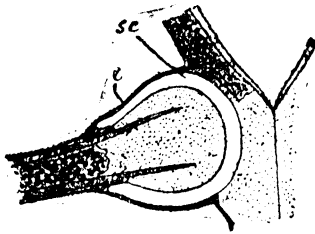
चित्र ३०
जोड़ का खंड और उसके भीतर का भाग
sc–Sinovial capsule;
l–ligaments.

अभ्यास

१. मेंढक के शरीर के भिन्न-भिन्न जोड़ों का नाम लिखो। प्रत्येक का उदाहरण दो।

२. जोड़ की बनावट और उसके कार्य का वर्णन करो—

३. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखो—

(क) गेंद और प्याला जोड़ (Ball and Socket Joint)।

(ख) साइनोवियल थैलियाँ।

(ग) ग्लाइडिंग जोड़। [H. S. 1940]

४. प्राणिमात्र के शरीर में जोड़ से क्या लाभ है?

अध्याय १२

मांस-पेशियाँ और उनका कार्य

(Muscles and Movement)

मांस-पेशियों का कार्य (Works of Muscles)—जिस प्रकार मकान के ढाँचे पर ईंट, पत्थर और सीमेंट लगाकर उसकी सुंदरता बढ़ा दी जाती है जिससे ढाँचे का नंगापन छिप जाता है उसी प्रकार शरीर की हड्डियों के ढाँचे पर मांस-पेशियाँ लगी रहती हैं। इनके होने से शरीर की बनावट सुडौल हो जाती है। इसके अतिरिक्त मांस-पेशियों में सिकुड़ने की शक्ति भी होती है। मांस-पेशियाँ एक ओर से सिकुड़ती हैं तो दूसरी ओर से फूल जाती हैं। यह सिकुड़ना और फैलना तुम अपने बाहुओं पर प्रतीत कर सकते हो।

चित्र ३१—पिछले टांग की मांश-पेशियां

मांस-पेशियों के इसी गुण से जीवधारी अपने शरीर को हिला डुला सकते हैं। इसके सिकुड़ने से ही मेंढ़क कूदता और तैरता है और अन्य कियाएँ भी करता रहता है। इन्हीं के सिकुड़ने से हम किसी वस्तु को उठा सकते हैं। यदि मांस-पेशियों में यह गुण न होता तो शरीर एक स्तंभ के समान प्रतीत होता।

मेंढ़क का पूरा शरीर मांस-पेशियों से ढँका रहता है। मांस-पेशियाँ लोंदे के रूप में रहती हैं और जाँघों और बाहुओं पर शक्तिशाली प्रतीत होती हैं (चित्र ३१) ये बीच में मोटी आर दोनों सिरों पर पतली होती हैं। पतले सिरों से रेशेदार चमकती हुई श्वेत रंग की दृढ़ रस्सियाँ लगी रहती हैं जो उस हड्डी से जिस पर वह

मांस-पेशी है घूम कर दूसरी आगे वाली हड्डी के सिरे पर चिपक जाती हैं।

इसका परिणाम यह होता है कि जब वह मांस-पेशी सिकुड़ती है तो वह उस हड्डी को जिससे वे रस्सियां लगी हुई हैं ऊपर उठा लेती हैं। इन चमकते हुए श्वेत रस्सियों को टेन्डन्स अथवा लिगामेंन्टस (Tendons or Ligaments) कहते हैं (चित्र ३१)। ये बहुत दृढ़ होती हैं और हाथों से तोड़ने पर शीघ्र नहीं टूटतीं।

शरीर की सभी मांस-पेशियां सर्वदा अपना कार्य करती रहती हैं। किसी एक कार्य में मेंढ़क या अन्य जीवधारी की केवल एक पेशी कार्य में नहीं आती परन्तु बहुत सी पेशियां एक ही साथ सहायता देती हैं। जैसे मेंढ़क के कूदने के कार्य में उसकी कमर की पेशियां, जांघ की पेशियां, टांग की पेशियां, उँगलियों की पेशियां इत्यादि काम करती हैं। मेंढ़क तभी अपने कूदने के कार्य में सफलता प्राप्त कर पाता है। प्रत्येक पेशी का नाड़ी से सम्बन्ध रहता है और उसी के द्वारा मस्तिष्क या सुषुम्ना से आज्ञा आने पर पेशियां सिकुड़ती हैं और अपना कार्य करती रहती हैं।

भिन्न-भिन्न माँस-पेशियाँ (Kinds of muneles)—मेंढ़क के शरीर में दो प्रकार की पेशियां होती हैं (१) ऐच्छिक पेशियां (Voluntary muscles) जो मेंढ़क के अधीन रहती हैं अर्थात् मस्तिष्क के आज्ञा के अनुसार काम करती हैं जैसे टांग, बांह की पेशियां। (२) अनैच्छिक अथवा स्वतन्त्र पेशियां (Involuntary muscles) जो बिना किसी की रुकावट के ही अपना कार्य करती रहती हैं जैसे हृदय, आमाशय और अँतड़ियों की पेशियां।

पेशियों के भीतर बहुत सी रक्त की धमनियां जाती हैं और शिराएँ आती हैं। धमनियों से मांस-पेशियों को अपना काम भली भांते करने के लिये आक्सीजन मिलता रहता है। आक्सीजन इनमें वही काम करता है जो लकड़ी चूल्हे में। मांस-पेशियों के कार्य कर लेने पर रक्त आक्सीजन से रहित हो जाता है और अशुद्ध वस्तुएँ (जैसे लकड़ी जलने पर राख) से लदकर रक्त शिराओं के द्वारा हृदय की ओर वापस आता है। इस प्रकार मांस-पेशियाँ सर्वदा स्वस्थ दशा में रहती हैं।

अभ्यास

१. प्राणिमात्र के शरीर में मांस-पेशियों से क्या लाभ है ?

[H. S. 1934]

२. निम्नखिखित पर नोट लिखोः—बन्धन; अनैच्छिक; मांस-पेशियाँ; मांस-पेशियों का सिकुड़ना।

३. मेंढ़क के शरीर में कितने प्रकार की माँस-पेशियाँ पाई जाती हैं ? मांस-पेशियां कैसे कार्य करतीं हैं ?

४. प्राणिमात्र अपने शरीर को किस प्रकार हिला डुला सकते हैं ? इस कार्य से उनके रक्त पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

५. सुन्दर चित्रों द्वारा वर्णन करो कि शरीर के हिलाने डुलाने में मांस-पेशियां किस प्रकार सहायता पहुँचाती हैं निम्न लिखित अंगों की मांस-पेशियां किस प्रकार काम करती हैं (क) हृदय (ख) मलछिद्र (ग) आमाशय।

———

अध्याय १३

उत्पादक इन्द्रियाँ

(Urino-gential Organs or Reproductive Organs)

यह पहले ही बतलाया जा चुका है कि मेंढ़क दो प्रकार के होते हैं। एक नर और दूसरा मादा। इनकी भीतरी बनावट में भी हम लोगों ने एक में टेस्टिस, और दूसरे में ओवरी और ओविडक्ट देखा था। टेस्टिस रखने वाला नर मेंढ़क होता है और जिसमें ओवरी और ओविडक्ट होते हैं, वह मादा होती है। इन्हीं इद्रियों के कारण मेंढ़क के बाल बच्चे पैदा होते हैं और इसकी जाति संसार में बनी रहती है।

टेस्टिस (Testes)–नर मेंढ़क का टेस्टिस कुछ पीला, लम्बा और गोलाकार होता है जो गुर्दे की बाहरी ओर झिल्लियों के

fb–fatbody; *t*–testes; *k*–kidney; *u*–ureter; *r*-rectum; *ou*-opening of ureter ; *c*–cloaca; *a*–anus; *ub*–urinary bladder.
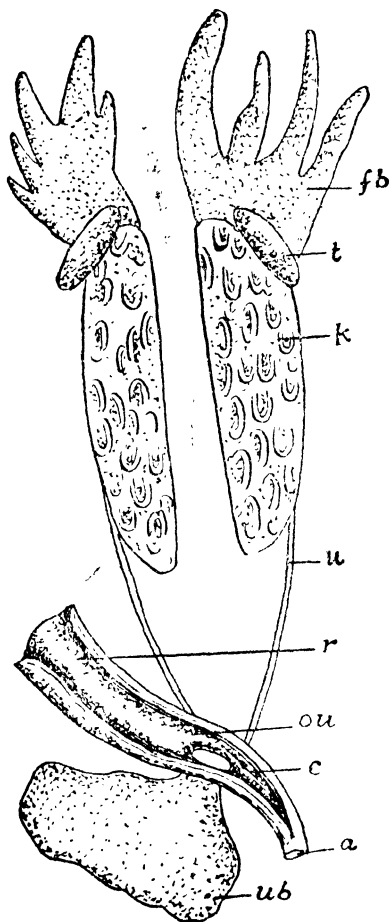
चित्र ३२—नर मेंढ़क का उत्पादन अंग।

द्वारा सटा रहता है। सटे हुए स्थान से इसके भीतर से निकली हुई बहुत सी सूक्ष्म नलियाँ गुर्दों में प्रवेश करती हैं। यहां ये पेशाब की सूक्ष्म नलियों से मिल जाती हैं। इसलिए जब स्पर्म्स टेस्टिस में पक जाते हैं तो उसमें से निकल कर गुर्दों में चले आते हैं, फिर वे गुर्दों में से उसी मार्ग से बाहर निकल जाते हैं जिससे पेशाब बाहर निकलता है अर्थात् वे यूरिनरी ट्यूब्यूल्स, यूरेटर, और क्लोका से होकर बाहर मल-छिद्र (Anus) से होकर निकल जाते हैं (चित्र ३२)। सभी स्पर्म्स एक झिल्ली में रहते हैं जो पानी पर बरसात के दिनों में तैरते रहते हैं। प्रत्येक स्पर्म में एक गोलाकार सिर (Head) होता है और नीचे पूँछ (Tail) होती है। सिर वाले भाग में एक न्यूक्लियस होता है।
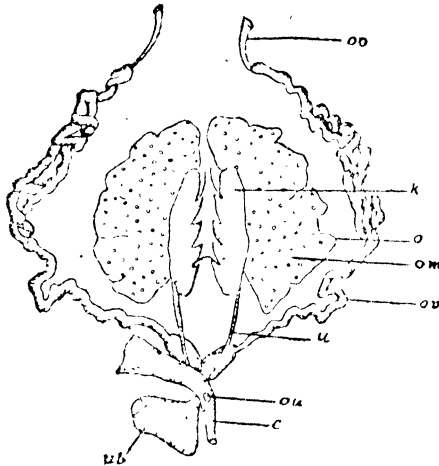
चित्र ३३ — मादा मेंढ़क का उत्पादन अंग।
oo–opening of the oviduct ; *k*-kidney ; *o*–ovary ;
ov–oviduct ; *u*–nreter ; *ou*–opening of the ureter ;
c–cloaca ; *ub*–urinary bladder ; *om*-ovum.

ओवरी और अविडक्ट (Ovary and Oviduct) – मादा मेंढ़क में ओवरी होती है जो बहुत ही मुड़ी हुई झिल्लियों की एक थैली है।

इसके ऊपर बहुत सी काली अथवा भूरी उभड़नें या धब्बे दिखलायी देते है। प्रत्येक धब्बा एक अण्डा या ओवम (Ovum) कहलाता है जिसके स्पर्म से मिल जाने पर मेंढ़क के बच्चे पैदा होना प्रारम्भ होता है (चित्र ३३)।

जब ये ओवा या अण्डे पक जाते हैं तो ओवरी से छूटकर शरीर-गुहा (Coelomic cavity) मे आ जाते हैं। यहां से ये ओवीडक्ट से होकर बाहर निकल जाते हैं। ओवीडक्ट बहुत ही लम्बी घुमावदार नली होती है जो ओवरीके ऊपर रहती है। इसका अगला सिरा कुछ पतला होता है और फेफड़े के नीचे खुलता है। इसका पिछला भाग बहुत घुमाव के पश्चात् क्लोका (Cloaca) में खुलता है। खुलने के स्थान पर यह भाग थैली की भाँति हो जाता है। इसमे यह बात ध्यान देने योग्य है कि मादा मे इन अंगों और गुर्दो से कोई सम्बन्ध नहीं है जैसा कि नर मेंढक मे पाया जाता है।

अण्डे फेफड़े के नीचे खुले हुए ओवीडक्ट के मुँह पर किसी प्रकार पहुँच जाते हैं और उसमें से होकर क्लोका के ऊपर ओवीडक्ट की थैली में एकत्रित रहते हैं और समय समय पर बाहर निकाल दिये जाते हैं। ये अण्डे अधिकतर बरसात के दिनों में ही देखे जाते हैं। ये भी झिल्लियों में लिपटे रहते हैं। इन झिल्लियों को मेंढ़क का स्पान (Frogs और spawn) कहते हैं।

अभ्यास

१. नर मेंढ़क के उत्पादक इन्द्रियों का एक सुन्दर चित्र बनाओ और बतलाओ कि स्पर्म्स किस प्रकार बाहर आते हैं।

२. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखोः—मेंढक का स्पान; मल्लगुहा; स्पर्म्स; शरीर गुहा।

३. मादा मेंढ़क के उत्पादक इन्द्रियों के भागों का नाम लिखो। अण्डे कहाँ बनते हैं और वे कैसे बाहर आते हैं?

अध्याय १४

मेंढ़क की जीवन-वृद्धि

(The Life-history of Frog)

गर्भाधान (Fertilization)—स्पर्म्स और ओवा से भरी हुई झिल्लियाँ पृथक पृथक पानी के किनारे तैरती रहती हैं और अकस्मात् आकर मिल जाती हैं। अथवा कभी यह भी होता है कि जब मादा मेंढ़क अण्डे वाली झिल्ली छोड़ जाती है तो उसको देखकर नर मेंढ़क दौड़ता है और उस झिल्ली पर अपने शरीर से स्पर्म्स से भरी हुई झिल्ली छोड़ देता है।

इस प्रकार स्पर्म्स और ओवा का आपस में मेल होता है। एक ओवम (Ovum) में केवल एक ही स्पर्म घुसने पाता है। स्पर्म अपने सर के बल ओवम में घुसता है, पूँछ कटकर बाहर रह जाती है, और स्पर्म का न्युक्लियस ओवम के न्युक्लियस से बिलकुल मिल जाता है। इस दशा को गर्भाधान (Fertilization) कहते हैं। इस क्रिया के होते ही गर्भसेल (Embryo) बन जाता है।

गर्भसेल की वृद्धि (Development of the embryo)—गर्भाधान के पश्चात् मेंढ़क के गर्भसेल अथवा अण्डे में जो झिल्ली के अन्दर रहता है एक ऊपर से नीचे गोलाकारखड़ी लकीर (Vertical layer) बन जाती है जो इसको दो गोलार्द्धों में बाँट देती है। फिर उसी के समकोण पर दूसरी गोलाकार खड़ी लकीर बन जाती है। इस प्रकार मेंढ़क का गर्भसेल चार भागों में बँट जाता है। इसके पश्चात् एक आड़ी तह (Horizontal layer) बनती है जिससे यह आठ भागों में बँट जाता है। यह लकीर कुछ ऊपर की ओर होती है। ऊपर का भाग कुछ काला होता है और पानी में सदा ऊपर की ओर रहता है। इस लकीर के कुछ ऊपर होने के कारण नीचे के भागों के कोष्ट (Cells) ऊपर की अपेक्षा बड़े होते हैं। धीरे धीरे

बहुत लकीरें बन जाती हैं और गर्भसेल कई छोटे छोटे काले और सफेद कोष्ठों में बँट जाता है।

परन्तु काले कोष्ठ सफेद की अपेक्षा शीघ्रता के साथ बढ़ते हैं। फल यह होता है कि धीरे धीरे नीचे के सफेद कोष्ठ को ऊपर के काले कोष्ठ घेर लेते हैं। अब एम्ब्रियो बगल से कुछ लम्बोदरकार होने लगता है। श्वेत कोष्ठों को योक (Yolk) कहते हैं। इसी पर एम्ब्रियो का शेष भाग

1–Spawn full of ova; 2–Vertical and horizontal layers formed; 3–& 4–Embryo elongating; 5–Tadpole comes out of the gelatinous covering; 6–Internal gills being formed in Tadpole; 7–External gills formed; 8–Spiral shaped alimentary canal and gill-slits formed; 9–Hind limbs appearing; 10–Hind-limbs elongated and fore-limbs appearing; 11–Hind-limbs and fore-limbs sufficiently developed and tail partially shrunk 12–A fully formed frog with only a rudimentary tail.

चित्र ३४—मेंढ़क के जीवन वृद्धि की भिन्न भिन्न दशाएँ

भोजन करके बढ़ता है। इसके भीतर बहुत परिवर्तन होते हैं और अन्त में तीन प्रकार की तहें (Teree germinal layers) बन जाती हैं जिनसे मेंढ़क का भिन्न भिन्न अंग तैयार होता है।

टैडपोल (The Tadpole)—कुछ समय के पश्चात् गर्भसेल के ऊपर की झिल्ली भीतर के दबाव के कारण फट जाती है और मेंढ़क का टैडपोल (Tadpole) बाहर निकल आता है। निकलते ही टैडपोल तैरकर पानी के किनारे लगी हुई किसी घास से अपने सकर (Sucker) के द्वारा चिपक जाता हैं और उसी घास की हरियाली (Chlorophyll) को खाकर अपना निर्वाह करता है। थोड़ी देर के पश्चात् टैडपोल में दोनों ओर छोटे छोटे गिल्स् (Gills) निकलने लगते हैं जिससे वह स्वांस लेना प्रारम्भ करता हैं। इस समय तक यह निरामिष (Vegetarian) भोजन पर ही रहता है। अब टैडपोल घास को छोड़ देता है और अपनी पूँछ की सहायता से पानी में तैरने लगता है। इस समय से टैडपोल निरामिष भोजन का त्याग करता है और पानी में चलते फिरते कीड़ों को खाकर बढ़ने लगता है (चित्र ३४ का ७ वाँ)।

कुछ समय के पश्चात् इस टैठपोल में साँस लेने वाले गिल्स छोटे होने लगते हैं और उनकी जगह पर दोनों ओर फाटक की भाँति गिल्स (Gill-slits) बनने लगते हैं जिनसे यह साँस लेता है। फेफड़ा और घुमावदार अँतड़ियाँ (Spiral-shaped alimentary canal) भी बनने लगते हैं (चित्र ३४ का ८ वाँ)। धीरे धीरे फाटक की भाँति गिल्स लुप्त होने लगते हैं और पिछले पैर दिखलायी देने लगते हैं। अगले पैर के निकलने के चिह्न भी इसी समय दिखलायी देने लगते हैं और कुछ समय के पश्चात् वे भी स्पष्ट रूप से निकल आते हैं।

अब पूँछ छोटी होने लगती है। टैडपोल बढ़ने लगता है। सच्ची बात तो यह है कि मुख्यतः पूँछ पर ही इस समय तक टैडपोल का बढ़ना निर्भर था। अब टैडपोल के सारे अंगों में परिवर्तन पोने लगता हैं और सारे अंग ठीक दशा में शरीर के भीतर और बाहर बन जाते हैं। पूँछ बिलकुल छोटी हो जाती है (चित्र ३४ का १२ वाँ) और अब यह मेंढ़क के रूप में बदला हुआ टैडपोल पानी के बाहर निकल कर कूदने और फुदकने लगता है। कुछ दिनों के पश्चात् यह फिर अपने जीवन को नये सिरे से आरम्भ करने के योग्य हो जाता है।

काया पलट (**Metamorphosis**)—मेंढ़क के इस जीवन में यह बात ध्यान देने योग्य है कि टैडपोल मेंढ़क के जीवब का एक अद्भुत रूप है जो इससे प्रत्येक दशा में भिन्नता रखता है। यह अपने रूप के अनुसार मछली से मिलता जुलता है। यहाँ तक कि वे लोग जो इसके जीवन को न जानते होंगे टैडपोल को मछली ही समझेंगे। मेंढ़क के इस अत्भुत जीवन को जिसमें ऐसी स्थिति (Stage) पाई जाती है जो मेंढ़क से भिन्न रहता है कायापलट (Metamorphosis) कहते हैं। ऐसा ही जीवन मक्खी और मच्छर में भी पाया जाता है।

अभ्यास

१. चित्रों की सहायता से मेंडक की जीवनी का वर्णन करो।
[H. S. 1932]

२. मेंढक के बाहरी अंगों का वर्णन लिखो और उसका जीवन चित्रण करो। [H. S. 1934]

३. कहाँ, कब और कैसे (क) मेंढक (ख) केचुआ अण्डे देते हैं ? एक टैडपोल मेंढक से किस भाँति भिन्न रहता है। [H. S. 1935]

४. क्या कारण है कि मेंढक पानी के बाहर जीवित रह सकता है परन्तु टैडपोल जीवित नहीं रह सकता ? [H. S. 1938]

५. वर्ष के किस ऋतु में और किन किन स्थानों से तुम मेंढक के अण्डों को एकत्रित करोगे ? उनसे मेंढक प्राप्त करने के लिये तुम उन्हें किस प्रकार रखोगे ? मेंढक का रूप धारण करने के पूर्व टैडपोल में जो परिवर्तन होते हैं उनका वर्णन करो। अपने उत्तर के सहायतार्थ चित्रों को बनाओं।
[H. S. 1939]

६. 'काया पलट' क्या है ? मेंढक में यह किस प्रकार होता है ?

७. निम्नांकितों की तुलना करो (क) मेंढ़क और टैडपोल (ख) गलफर और फुस्फुस (ग) मुँह और सकर (Sucker) (घ) मेंढक के एम्ब्रियो के श्वेत और काले कोष्ठ (च) ओवा और स्पर्म्स।

८. गर्भाधान (Fertilization) क्या है। मेंढ़क में यह किस प्रकार होता है ?

ELEMENTARY PHYSIOLOGY OF HUMAN BODY

अध्याय १५

नरकंकाल अथवा अस्थिपंजर (Skeleton)

मेंढ़क के बारे में जानकारी प्राप्त करने पर तुमको विदित हो गया होगा कि उसका शरीर एक राज्य के समान है जिनमें वहुत से विभाग अपना अपना कार्य भली भाँति करते रहते हैं। इन सब का राजा मस्तिष्क है जो प्रत्येक अंग से कार्य लेता रहता है। ठीक ऐसी ही हमारे शरीर की भी दशा है। मेंढ़क के शरीर में जितने विभाग हैं वे सब हमारे शरीर में भी हैं। हमारा मस्तिष्क जो मेंढ़क के मस्तिष्क से कई गुना बड़ा और तीव्र है इस शरीर का राजा है। इस राज्य में सब विभाग स्वतंत्र नही हैं बल्कि ये आपस में एक दूसरे पर निर्भर करते हैं।

नरकंकाल (Skeleton)—यदि तुम एक यंत्र के सामने जिसे एक्सरे (X-Ray apparatus) कहते हैं खड़े हो जाओ तो उससे निकली हुई किरण की सहायता से तुम अपने शरीर के पूरे ढाँचे को भली भाँति देख सकोगे। इस यंत्र से एक विशेष प्रकार का प्रकाश निकलता है जो शरीर के प्रत्येक अंग से निकल जाता है परन्तु हड्डियों से नहीं निकल सकता। इसलिये हड्डियों का अॅक्स या साया पड़ जाता है। (चित्र ३५) जब हमारे शरीर की कोई हड्डी टूट जाती है या उसमें कोई बाहरी वस्तु जैसे छर्रा, सुई इत्यादि प्रवेश कर जाता है अथवा क्षय का रोग हो जाता है तो इसी प्रकाश की सहायता से डाक्टर उन स्थान को मालूम कर पाते हैं और उसकी उचित चिकित्सा भी कर पाते हैं।

हमारे शरीर में कुछ २०६ हड्डियाँ होती हैं। इनमें से ६४ हड्डियाँ बाहु (Arm), अग्रबाहु (Fore arm) और हथेथी (Hand) में रहती हैं कूल्हे (Hip-girdle), जाँघ (Thigh), टाँग (Leg) और पाँव (Foot) में ६२ हड्डियाँ होती हैं। खोपड़ी (Skull) और मुख में २२; रीढ़ (Vertebral column) की हड्डियों में २६; पार्श्व और वक्षास्थि (Ribs and shoulder girdle) में २५; कानों के

भीतर ६; और कंठ में १ एक हड्डी होती है। इस प्रकार कुल २०६ हड्डियाँ होती हैं।

ये सब हड्डियाँ आकार में कई प्रकार की होती हैं। इनके अतिरिक्त हमारे शरीर में नरम हड्डी या कार्टिलेज का भी बहुत कुछ अंश रहता है जैसे बाहरी कान, नाक का अगला भाग इत्यादि।

चित्र ३५—मनुष्य का नर कंकाल

खोपड़ी (Skull)—मेंढक के शरीर की भाँति मनुष्य के शरीर के भी कई भाग होते हैं। सब से ऊपर का भाग खोपड़ी कहलाता है। इसके भीतर शरीर का राजा मस्तिष्क बहुत सुरक्षित रहता है। खोपड़ी से सटी हुई नीचे दाँतों से जटित एक अर्द्ध गोलाकार
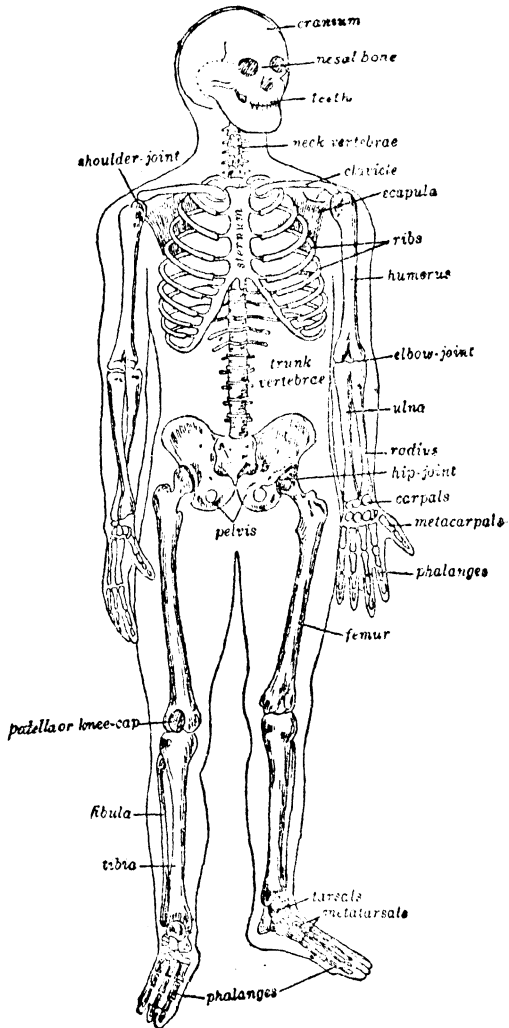
हड्डी होती है जिसको निचला जबड़ा (Lower jaw) कहते हैं। खोपड़ी से ऊपर का जबड़ा (Upper jaw) सटा रहता है परन्तु बोलते समय नीचे का ही जबड़ा ऊपर नीचे हुआ करता है।

ऊपर के जबड़े में बहुत सी हड्डियाँ होती हैं जो आपस में जुटी रहती हैं। इनके जोड़ पर बहुत सी टेढ़ी घुमावदार लकीरें होती हैं। खोपड़ी के
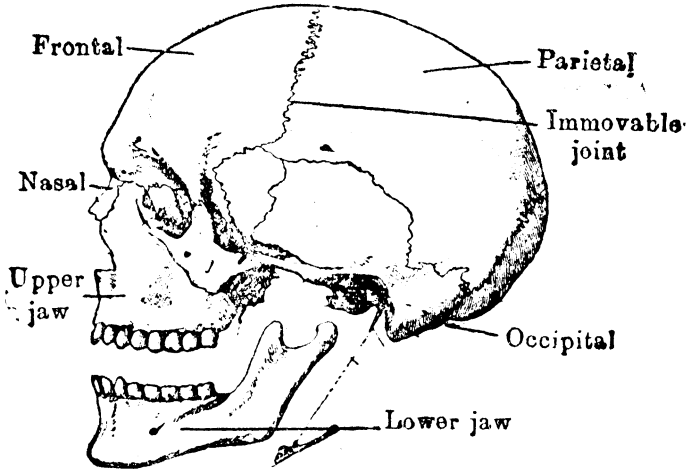
चित्र ३६—मनुष्य की खोपड़ी।

सामने की हड्डी को फ्रन्टल हड्डी (Frontal) कहते हैं और पीछे की हड्डी को पेराइटल (Parietal) कहते हैं। मेंढ़क में ये दोनों हड्डियाँ आपस में जुटी रहती हैं। नाक पर की हड्डी को नेज़ल (Nasal) कहते हैं।

खोपड़ी के नीचे पीछे की ओर एक बड़ा छिद्र दीख पड़ेगा जिसको फोरामन मैगनम (Foramen magnum) कहते हैं (See Frog)। इसीसे होकर मस्तिष्क से सुषुम्ना निकल कर रीढ़ की हड्डी के भीतर होती हुई नीचे चली जाती है। इस छिद्र के चारों ओर की हड्डी को आक्सीपीटल (Occipital) कहते हैं जिनमें नीचे दो चिपटी चिकनी उभड़नें होती हैं। इन्हीं उभड़नों पर रीढ़ की हड्डी का पहला छल्ला लगा रहता है और खोपड़ी सरलता के साथ घमती रहती है।

इन हड्डियों के अतिरिक्त खोपड़ी में और बहुत सी हड्डियाँ होती हैं जिनको तुम्हारे अध्यापक दिखलावेंगे। इन हड्डियों के अतिरिक्त मनुष्य में ऊपर और नीचे के जबड़ों में दाँत भी होते हैं जो गिनती में ३२ होते हैं। इनके विषय में तुम्हें पाचन-क्रिया के सम्बन्ध में बतलाया जायगा।

रीढ़ (Vertebral Column)—खोपड़ी से सटी हुई नीचे की ओर रीढ़ के २६ छल्ले होते हैं। इनके एक दूसरे के ठीक ऊपर नीचे होने से एक नली ऊपर से नीचे तक बन जाती है जिसमें से होकर सुषुम्ना जाती है। रीढ़ की हड्डियाँ शरीर में बिलकुल सीधी नहीं रहती वरन् ये कुछ घूमती हुई जाती हैं जैसा कि चित्र नं० ३७ में दिखलाया गया है।

पहला छल्ला जो औरों से भिन्न रहता है ऍटलस (Atlas) कहलाता है। इसी पर खोपड़ी घूमती है।

मनुष्य के सारे छल्ले चार भागों में बाँटे जा सकते हैं। (१) सरवाइकल छल्ले (Cervical vertebrae)—ये गर्दन के भाग में होते हैं। (२) थोरेसिक अथवा डॉरसल छल्ले (Thoracic or dorsal vertebrae)—ये वक्षास्थि के भाग में होते हैं। (३) लम्बर छल्ले (Lumbar vertebrae)—जो कमर के भाग में होते हैं। (४) सैक्रम (Saccrum) जो पाँच छल्लों के जोड़ से बना है। इनके अतिरिक्त छोटी सी कोनादार एक और हड्डी होती है जो कई छल्लों से मिल कर बनी हुई प्रतीत होती है। यह सचमुच पूँछ का चिह्न है जो बन्दरों
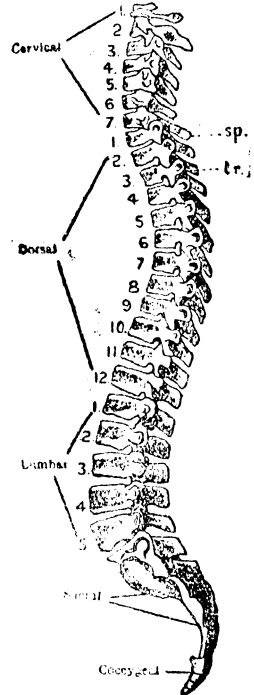
चित्र ३७—रीढ़ के छल्लों का बगली दृश्य।

sp–neural spine;
tr–transverse process.

पूँछवाले पीठदार जानवरों (Vertebrates) में स्पष्ट होती है। इसे कॉकसिक्स अथवा कॉक्सीजिल (Coccyx or coccygeal) कहते हैं (चित्र ३७)।

वक्ष (Shoulder girdle or Pectoral arch)—खोपड़ी की भाँति वक्ष (Thorax) भी एक प्रकार का बक्स है जिसके भीतर हृदय और फुस्फुस रहते हैं। इसका रूप कुछ गोलाकार होता है परन्तु ऊपर की ओर कुछ चपटा और नीचे की ओर चौड़ा होता है। वक्ष में दोनों ओर बारह बारह पसलियाँ (Ribs) होती हैं। सामने दोनों ओर की पसलियों के बीच में एक चौड़ी हड्डी होती है जिसको वक्षास्थि (Sternum) कहते हैं।

प्रत्येक पसली धनुष की भाँति भीतर की ओर मुड़ी हुई होती है जिसका पीछे का सिरा रीढ़ की थोरेसिक छल्लों से मिला रहता है और अगला सिरा वक्षास्थि से जुटा रहता है। सबसे ऊपर रहने वाली पहली पसली सबसे छोटी और चपटी होती है। इससे नीचे की पसलियाँ बड़ी और घुमावदार होती चली जाती हैं, परन्तु आठवीं, नवीं और दसवीं फिर छोटी होने लगती हैं और आपस में मिली भी रहती हैं। ग्यारहवीं और बारहवी पसलियाँ न तो आपस में जुटी रहती हैं और न आगे आकर ही जुटती हैं, इसलिए इनको स्वतन्त्र पसलियाँ (Floating ribs) कहते हैं।

जिन स्थानों पर ये पसलियाँ वक्षास्थि और छल्लों से जुटी रहती हैं उन जोड़ों पर कार्टिलेज का एक पर्त्त होता है। इन पसलियों के बीच में मांस-पेशियाँ लगी रहती हैं। पसलियों के धनुषाकार होने से इनमें लचीलापन रहता है जिससे मामूली चोट लगने पर भीतर के अंगों पर धक्का न लगने पावे और पसलियां भी न टूटें।

हाथ की हड्डियाँ (Fore-limbs)—कंधे से लगी हुई दोनों ओर बाहु, अग्रबाहु और हथेली की हड्डियाँ होती हैं। कंधे से लेकर कोहनी तक एक हड्डी होती है जिसको ह्यूमरस (Humerus) कहते हैं और कोहनी से हथेली तक अग्रबाहु की दो हड्डियाँ होती हैं जिनको रेडियस और अल्ना (Radius and Ulna) कहते हैं। ह्यूमरस हड्डी लम्बी और दृढ़

होती है। इसका अगला भाग गोलाकार होता है जो कंधे के गड्ढे में घुसा रहता है और निचला भाग चपटा और नीचे की ओर गाँठदार होता है। परन्तु अग्रबाहु की हड्डियाँ मेंढ़क की हड्डियों के विपरीत अलग अलग होती हैं। एक हड्डी भीतर की ओर और दूसरी बाहर की ओर होती है। भीतरी हड्डी ऊपर की ओर चोंच की तरह मुड़ी रहती है। इसी मुड़ाव में ह्यूमरस का निचला भाग घुसा रहता है। इन दोनों हड्डियों का निचला सिरा बिल्कुल चिपटा रहता है (चित्र ३५)।

इनके आगे छोटी छोटी गोलाकार आठ हड्डियाँ कलाई में होती हैं जिनको कारपल्स (Carpals) कहते हैं और उन्हीं से सटी हुई पाँच हड्डियाँ मेटाकारपल्स (Meta-carpals) हथेली में होती हैं। इनसे सटकर चारों उँगलियों में तीन तीन और अँगूठे में दो हड्डियाँ होती हैं जिनको फैलेंजेस (Phallanges) कहते हैं।

बाहु के ऊपर कंधे में पीछे की ओर एक चौड़ी चपटी हड्डी होती है जिसको स्कंधास्थि (Scapula) कहते हैं। दूसरी हड्डी आगे की ओर सब से ऊपर होती है जिसको हँसली (Clavicle) की हड्डी कहते हैं (चित्र ३५)। स्कंधास्थि में बगल की ओर एक गड्ढा होता है जिसमें बाँह की पहली हड्डी ह्यूमरस का अगला गोलाकार भाग बैठता है। इसी के सहारे हम अपनी बाँह को चारों ओर घुमा सकते हैं। इसी से सटी हुई ऊपर की ओर हँसली रहती है जिसका दूसरा सिरा वक्षास्थि के ऊपरी भाग से जुटा रहता है।

कूल्हे की हड्डियाँ (Hip-girdle or Pelvic arch)—कूल्हे की हड्डी बड़ी पुष्ट होती है और कहीं जुटी हुई मालूम नहीं पड़ती। परन्तु कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि यह हड्डी तीन हड्डियों से मिलकर बनी है जो बच्चों में स्पष्ट रूप से दिखलायी पड़ती है। कूल्हे के बीच बाहर की ओर दोनों ओर एक एक गड्ढा होता है जिसमें टाँग की लम्बी हड्डी, फीमर का अगला गोलाकार सिरा ह्यूमरस की भाँति घुसा रहता है। यही कारण है कि टाँग को भी हम बाँह की तरह चारों ओर घुमा सकते हैं लेकिन गड्ढे के कुछ अधिक गहरा होने से और गोलाकार भाग के उभड़े रहने के कारण इसमें उतनी स्वतन्त्रता नहीं होती।

पैरकी हड्डियाँ (Hind-limbs)—यह शरीर की और तमाम हड्डियों से लम्बी और दृढ़ होती हैं क्योंकि इन्हें शरीर का सारा बोझा उठाना पड़ता है। इनकी सबसे ऊपर वाली हड्डी को फीमर (Femur) कहते हैं जिसका अगला सिरा कुछ निकला हुआ और गोलाकार होता है और कूल्हे के गड्ढे में घुसा रहता है। इसका निचला सिरा चपटा रहता है जिस पर टाँग की हड्डी चिपकी रहती है। इन दोनों के जोड़ के ऊपर एक पतली चपटी हड्डी होती है जिसको घुटने की हड्डी (Patella) कहते हैं।

अग्रबाहु की भांति और मेंढ़क के विपरीत टाँग में भी दो हड्डियाँ टीबिया और फिबुला (Tibia and Fibula) होती हैं परन्तु बाहर हड्डी बहुत पतली होती है और भीतरी मोटी और दृढ़। इसका ऊपर का चौड़ा भाग फीमर के नीचे के चपटे भाग से सटा रहता है। नीचे का भाग कुछ कम चौड़ा होता है जिस पर एड़ी की ठोस हड्डियाँ लगी रहती हैं। परन्तु इसमें केवल सात गोलाकार हड्डियां होती हैं जो तीन पंक्तियों में होती हैं। इसमें की सबसे बड़ी हड्डी एड़ी बनाती है। पाँव की शेष हड्डियां हाथ की ही भांति होती हैं इनको टारसल्स (Tarsals), मेटा-टारसल्स (Meta-tarsals) और फैलेन्जेज़ (Phallanges) कहते हैं।

हड्डियों से हमारे शरीर में कड़ापन आता है। इन्हीं के कारण शरीर का स्वरूप बना रहता है। शरीर की गति या चलना फिरना भी इन्हीं पर निर्भर है।

हड्डियों की बनावट (Composition of bones)—मनुष्य में कुछ हड्डिया जैसे ह्यूमरस, फीमर, रेडियस, टीबिया इत्यादि भीतर से खोखली होती हैं। इनमें एक प्रकार का गूदा भरा रहता है जिसको मैरो(Marrow) कहते हैं। किसी भी हड्डी के कड़ेपन को देखकर उसे धातु का बना न समझना चाहिये। यदि किसी हड्डी को तेजाब (Acid) में डाल दिया जाय तो उसमें से कारबन डाई-ऑक्साइड निकलने लगता है। यह हड्डी में उपस्थित कलशियम कारबोनेट (Calcium carbonate) से निकलता है और हड्डी में कैलशियम फॉस्फेट (Calcium phosphate) भी होता है। इसके बाद हड्डी मुलायम हो जाती है और रबड़ की भाँति

घुमायी जा सकती है। इसमें कुछ जीवांश वस्तुएँ (Organic matter) भी होती हैं। अब यदि हड्डी को गर्म किया जाय तो ये वस्तुएँ निकल जाती हैं और कैलशियम ऑक्साइड या चूना (Calcium oxide or Lime) बच जाता है। छूने से यह टुकड़े टुकड़े हो जाती है।

अभ्यास

१. मनुष्य के शरीर के हाथ और पैर की हड्डियों के नाम क्रमानुसार लिखो। शरीर के भिन्न भिन्न भागों में हड्डियों के क्या कार्य हैं?

(H. S. 1933)

२. मनुष्य के रीढ़-प्रणाली का वर्णन करो और इसकी मेंढ़क की रीढ़ से तुलना करो।

३. मनुष्य के वक्षास्थि और ब्रह्माण्ड की हड्डियों की तुलना करो और ताओ कि उन से क्या लाभ है।

४. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखो:—

हंसली की हड्डी; सैक्रम; काक्सिक्स; वक्षास्थि छल्ले; घुटना (Patella); स्वतंत्र पसलियाँ (Floating sibs); हड्डी का गूदा।

५. हड्डियों की रसायनिक बनावट क्या है? क्या शरीर के प्रत्येक हड्डी की वैसी ही बनावट है?

अध्याय १६

जोड़, माँस-पेशियाँ और बन्धन

(Joints; Muscles and Ligaments)

मनुष्य के शरीर में मेंढक के शरीर की अपेक्षा अधिक जोड़ होते हैं। मनुष्य के शरीर में भी उतने ही प्रकार के जोड़ हैं जितने प्रकार के मेंढक में होते हैं। इनके और इनके कार्यों के विषय में तुम पिछले अध्याय में पढ़ चुके हो। उनके उदाहरण और कार्य करने की विधि भी वहीं बतलाई गयी है।

प्रत्येक जोड़ के मध्य में कार्टिलेज का एक पर्त्त होता है जिसमें बहुत सी सूक्ष्म तेल की थैलियाँ होती हैं। इनको साइनोवियल थैलियाँ कहते हैं। इन्हीं थैलियों से एक प्रकार का तेल निकलता है जिससे प्रत्येक जोड़ अपने कार्य को भलीभाँति करता रहता है। इस तेल को साइनोवियल तेल कहते हैं।

तेल की इन थैलियों के अस्वस्थ हो जाने से मनुष्य को गठिये (Gout) का रोग हो जाता है। जिस प्रकार मशीनों के जोड़ों में यदि तेल न दिया जाय तो वे कुछ ही दिनों में जकड़ जाते हैं; उसी प्रकार जब इन थैलियों के अस्वस्थ हो जाने से तेल का निकलना कम हो जाता है या बन्द हो जाता है तब जोड़ जकड़ जाते हैं अर्थात् गठिया पकड़ लेता है।

माँस-पेशियाँ (Muscles)—मेंढक की भाँति मनुष्य में भी मांस-पेशियां होती हैं। जो उसकी अपेक्षा बहुत ही बड़ी और दृढ़ होती हैं। यह पहले ही बतलाया जा चुका है कि मांस-पेशियों का मुख्य कार्य सिकुड़ना है। इनके सिकुड़ने से जोड़ों पर हड्डियां घूम जाती हैं और हम अपने अंगों को इच्छा के अनुसार जिस तरह चाहें घुमा सकते हैं। हमारे शरीर का चारों ओर घूमना, मुड़ना, मुँह से बोलना, आँखों से देखना और अन्य क्रियाएँ मांस-पेशियों और जोड़ों के होने से ही होती रहती हैं।

मांस-पेशियों को ध्यान से देखने पर प्रतीत होगा कि मध्य में ये फूली और दोनों ओर पतली रहती हैं (चित्र ३८)। पतले सिरों पर सफेद रेशों से बने हुए चमकती रस्सियों की भाँति टेण्डन्स

(Tendons) होती हैं। ये बहुत दृढ़ होती हैं और इनके बलिष्ठ होने के कारण ही हम भारी से भारी वस्तुओं को सर-लता पूर्वक उठा सकते हैं।

जिस ओर ये होती हैं उसी ओर की हड्डी से ये चिपकी भी रहती हैं ताकि उस हड्डी के ऊपर की मांस-पेशियों के सिकुड़ने से वह ऊपर उठ सकें। मांस पेशियों के मध्य में भी झिल्लीदार सफेद रेशे होते हैं जिनको बन्धन (Ligaments) कहते हैं (चित्र ३८)।

चित्र ३८—मनुष्य के शरीर की मांस पेशियाँ और बन्धन।

मेंढ़क की भांति मनुष्यमें भी दो प्रकारकी मांस-पेशियां होती हैं (१)ऐच्छिक और (२) अनैच्छिक। तुम इनके विषय में पहले ही भलीभांति पढ़ चुके हो।

अभ्यास

१. मनुष्य के शरीर में कितने प्रकार के जोड़ पाये जाते हैं ? जब वे अस्वस्थ हो जाते हैं तो क्या होता है ?

२. बन्धन (Ligaments) और रेशे (Tendons) क्या हैं ? मनुष्य के प्रति दिन की क्रियाओं में वे किस प्रकार सहायता पहुँचाते हैं ?

३. मांस पेशियों का क्या कार्य है ? तुम्हारे शरीर में कितने प्रकार की मांस-पेशियाँ पाई जाती हैं ? प्रत्येक के दो उदाहरण दो ।

४. साइनोवियल थैलियाँ क्या हैं ? वे कहां पायी जाती हैं ? उन्हें तुम किस भांति स्वस्थ्य दशा में रखने का प्रयत्न करोगे ?

अध्याय १७

भोजन, पाचन-अंग और पाचन-क्रिया

(Food; Organs and Process of Digestion)

भिन्न भिन्न प्रकार के भोजन पदार्थ (Kinds of Food)— यह सभी जानते हैं कि हम लोगों का भोजन चावल, दाल जैसे—अरहर, उर्द, चना, मूँग इत्यादि, गेहूँ या जौ की रोटियां, भिन्न भिन्न प्रकार की तरकारियां जैसे—आलू, गोभी, कटहल, लौकी, नेनुआ, सोवा, पालक इत्यादि, घी अथवा तेल और अन्य प्रकार की वस्तुएँ जैसे—बिस्कुट, फल, दूध, अण्डे इत्यादि हैं। इन सब वस्तुओं में मुख्यतः तीन प्रकार की चीजें मिलती हैं (१) कारबोहाइड्रेट्स (Carbohydrates) जैसे—स्टार्च, शक्कर इत्यादि; (२) प्रोटीन अथवा एलबुमेन (Proteins or albumen) जैसे—अण्डे की जरदी दाल और (३) चर्बी (Oils and fats) जैसे घी, तेल इत्यादि।

ये सब वस्तुएँ प्रत्येक भोजन की सामग्री में सम भाव से नहीं पायी जातीं। किसी में पहली होती है तो दूसरी और तीसरी नहीं अथवा किसी में दूसरी और तीसरी होती है तो पहली नहीं अथवा जिनमें कोई दो वस्तुएँ भी होती हैं तो ठीक अनुपात में नहीं होतीं। परन्तु इन सब वस्तुओं को हम एक विशेष अनुपात में ही खाते हैं जिससे प्रत्येक दशा में हमारा शरीर स्वस्थ रहे।

इनके अतिरिक्त हम पानी, नमक, हल्दी (Turmeric), मसाला (Spices) इत्यादि का भी प्रयोग करते हैं। इन सब वस्तुओं की भी आवश्यकता हमारे शरीर को रहती है। ये सब वस्तुएँ किसी अनुपात में ही ग्रहण की जा सकती हैं। यही कारण है कि हमें केवल चावल अथवा रोटी नहीं खाना चाहिए बल्कि इन वस्तुओं का मिश्रित भोजन करना उचित है। कुछ ऐसे पदार्थ अवश्य हैं जिनमें इन वस्तुओं का अनुपात शरीर की आवश्यकता के अनुसार ठीक ठीक रहता है जैसे दूध में और अण्डे में।

इन तीनों वस्तुओं का प्रभाव हमारे शरीर पर भिन्न भिन्न होता है। कारबोहाइड्रेट्स शरीर में गर्मी पहुँचाते हैं। यही कारण है कि हमारे शरीर का तापक्रम गर्मी अथवा जाड़े में एक समान ९८·४° F. सर्वदा रहता है। रक्त भोजन के कारबोहाइड्रेट वाले अंश से ही गर्मी लेकर भ्रमण कर शरीर का तापक्रम एक सा बनाये रखता है। प्रोटीन जैसे—दाल, मांस चना इत्यादि मांस-पेशियों और शरीर के अन्य अंगों की वृद्धि में काम आती है। इसके खाने से शरीर की वृद्धि होती है जैसे बच्चे का धीरे धीरे छोटे से बड़ा होना। तेल अथवा घी, चर्बी भी शरीर को गर्म रखने में काम आते हैं।

दाँत (Teeth)—भोजन के पचाने में पहला मुख्य अंग दांत है। प्रकृति ने जवान मनुष्य के मुख में ३२ दांत दिये हैं। १८ वर्ष से कम वालों में २८ दाँत होते हैं। दांत हड्डी के नहीं होते।

मनुष्य के ऊपर और नीचे के जबड़े की हड्डियों में दाँत लगे होते हैं। प्रारम्भ में जब बच्चों को दाँत निकलने लगते हैं उस समय ये दृढ़ नहीं होते। इनको दूध के दाँत (Milk teeth) कहते हैं। ये केवल २० ही होते हैं, १० ऊपर के और १० नीचे के जबड़े में। ६ अथवा ७ वर्ष की अवस्था के बाद ये धीरे धीरे गिरने लगते हैं और इनके स्थान पर स्थाई दाँत (Permanent teeth) निकलने लगते हैं जो १८ वर्ष की अवस्था तक २८ हो जाते हैं। इनके अतिरिक्त चार दाँत दाढ़ में भी निकलते हैं। इनको बुद्धिदंत (Wisdom teeth) कहते हैं। ये २० वर्ष की अवस्था से २४ अथवा २५ वर्ष की अवस्था तक निकल आते हैं। कभी कभी इनके निकलने में बड़ा कष्ट होता है।
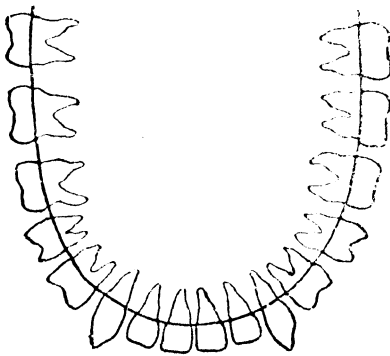
चित्र ३९—मनुष्य के दाँत।

इस तरह २५ वर्ष की अवस्था तक मनुष्य के ३२ दाँत हो जाते हैं। ये सब स्वरूप व कार्य के अनुसार ४ भाग में बाँटे जा सकते हैं। (१) काटनेवाले (Incisors) जो चार ऊपर और चार नीचे के जबड़े होते हैं। इनका कार्य रोटी या किसी अन्य वस्तु का काटना है। (२) चीरनेवाले (Canine) जो काटनेवाले दाँतों के दोनों ओर दो ऊपर और दो नीचे होते हैं। ये विशेषकर मांस खानेवाले जानवरों में होते हैं इसलिए नीचे की ओर नोकदार होते हैं। (३) इनके बगल में दोनों ओर ऊपर व नीचे दो दो तोड़नेवाले दाँत (Premolars) होते हैं। इनका कार्य भोजन के छोटे छोटे टुकड़ों में तोड़ना है। इनके बाद भीतर की ओर दोनों ओर ऊपर और नीचे दो दो अर्थात् कुल आठ पीसनेवाले दाँत (Molars) होते हैं जो तोड़नेवाले दाँतों से चौड़े और दृढ़ होते हैं। इनका कार्य भोजन को तोड़ना और पीसना है। इनके अतिरिक्त दो ऊपर और दो नीचे बुद्धिदन्त दाँत भी होते हैं। वे भी पीसने का कार्य करते हैं।

इन दाँतों में से किसी एक को यदि लम्बाई से (Longitudinal section) काटा जाय और अनुवीक्षण यंत्रसे देखा जाय तो यह चित्र४० के समान दिखलायी देगा। सबसे बाहरी भाग को इनैमल (Enamel) कहते हैं। इसके बाद डेण्टाइन (Dentine) और मध्य में मुलायम गुहा (Pulp cavity) होता है। इसके नीचे चारों ओर कुछ सफेदी का भाग होता है जिसे सीमेंट
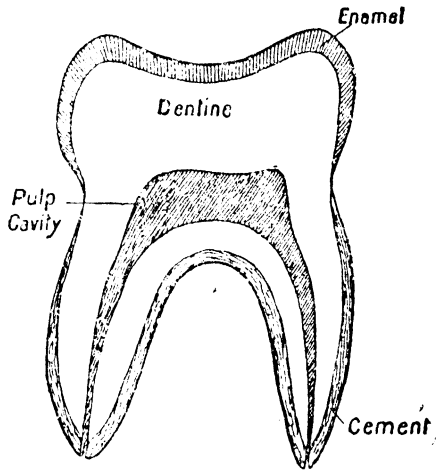
चित्र ४०—मनुष्य के दांत का लम्बोदराकार खंड।

(Cement) कहते हैं। प्रत्येक दाँत में खून की सूक्ष्म नालियाँ और नाड़ियाँ पल्प कैविटी तक घुसी रहती हैं।

भोजन करने के पूर्व हम उसे इस प्रकार मिलाते हैं कि उसकी तीनों आवश्यक वस्तुएँ कारबोहाइड्रेट, प्रोटीन और चर्बी कुछ कुछ मिल जायँ। इस मिश्रित भोजन को हम अपने मुख में डाल लेते हैं। दाँतों का कार्य अब आरम्भ होता है। वे इस भोजन को खूब पीस कर छोटे छोटे कणों में कर देता है।

लार का कार्य (Action of Saliva)—मनुष्य में दाँतों के नीचे और कान के आगे तीन बायीं ओर और तीन दाहिनी ओर लार की थैलियाँ (Salivary glands) होती हैं जिनसे एक प्रकार का रस जिसको सैलाइवा (Saliva) कहते हैं, निकलता है। दाँतों से भोजन कूँचते समय यह रस भोजन से मिल जाता है। इस रस में एक प्रकार का फरमेंट या एंझाइम होता है जिसको टायलिन (Ptyalin) कहते हैं। यह स्टार्च को चीनी में बदल देता है। भुट्टा (मकई) खाते समय यदि तुम उसके एक दाने को देर तक मुँह में दाँतों से कूँचो तो कुछ देर के बाद तुम उसकी मिठास को प्रतीत करोगे। इसका कारण यह है कि उसका स्टर्च सैलाइवा के द्वारा चीनी में बदल जाता है।

एपीग्लाटिस (Epiglottis)—जब हम भोजन को निगल जाते हैं तो वह एपीग्लॉटिस को दबा कर अन्न-प्रणाली से होकर आमाशय में अन्न-प्रणाली के निचले बड़े छिद्र से उतर जाता है। एपीग्लॉटिस शरीर का एक महत्वपूर्ण अंग है क्योंकि यह भोजन, पानी या अन्य हलकी या भारी खानेवाली वस्तुओं को श्वांस-प्रणाली (Wind-pipe) में जाने नहीं देता (चित्र ४१)। भोजन करते समय बोलने, हँसने अथवा थोड़ी भी असावधानी के कारण भोजन का नन्हा सा कण भी यदि श्वांस-प्रणाली में चला जाता है तो हमको तुरन्त खांसी आने लगती है। जब तक वह कण बाहर न निकल आवे हम खांसते रहते हैं। फेफड़े में ऐसे कणों के चले जाने से बहुत हानि होती है और कभी कभी मृत्यु तक हो जाती है। एपीग्लॉटिस प्रायः खुला ही रहता है।

अन्न-प्रणाली की मांस-पेशियों के आगे की ओर सिकुड़ने से भोजन
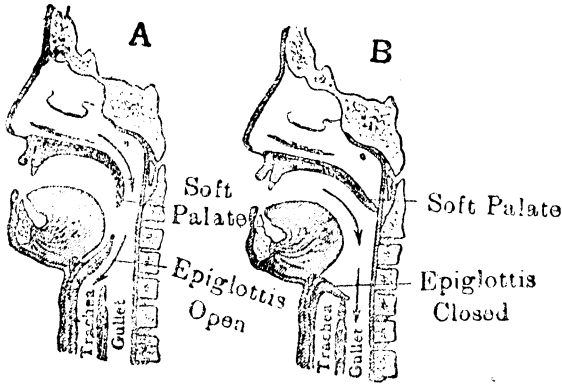
चित्र ४१—मनुष्य का मुँह गुहा और गले का भाग।

आमाशय में आ जाता है। इस तरह की सिकुड़न को पेरिस्टेल्सिस
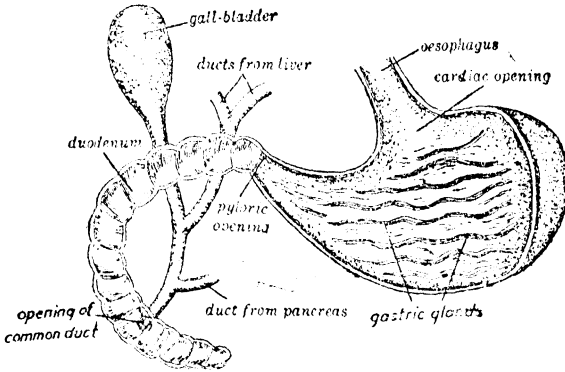
चित्र ४२—आमाशय और ड्युओडनम और उनके भीतर की थैलियाँ।

(Peristalsis) कहते हैं आमाशय की दिवालें भी मांस-पेशियों की बनी हैं। लेकिन इसकी बाहरी दिवाल में तीन प्रकार से लगी हुई मांस-पेशियों की पर्तें हैं। इनके सिकुड़ने से आमाशय में ऐसी टेढ़ी मेढ़ी गति होती है कि

भोजन आमाशय की भीतरी दिवालों से निकले हुए रस से भली प्रकार मिल जाता है।

गैस्ट्रिक रस का कार्य (Action of Gastric juice)—यदि आमाशय को काटकर देखा जाय तो उसकी भीतरी दिवाल में बहुत-सी उभड़नें दिखलायी देंगी (चित्र ४२)। इन उभड़नों को गैस्ट्रिक ग्रंथियाँ कहते हैं जिनसे एक प्रकार का तेज़ाबी रस बूँद बूँद करके निकलता है। इस रस में पानी का, कुछ नमक के तेजाब (Hydrochloric acid) का अंश और तीन प्रकार के ऐन्झाइम्स (Enzymes) होते हैं। पहले एन्झाइम को पेप्सिन (Pepsin) कहते हैं। यह भोजन के केवल प्रोटीन वाले अंश को तोड़ फोड़ कर घुलनशील बना देता है। इस घुलनशील पदार्थ को पेप्टोन (Peptone) कहते हैं।

इस एन्झाइम का प्रभाव स्टार्च या चर्बी पर नहीं होता और जिसका प्रभाव स्टार्च या चर्बी पर होता है उसका प्रोटीन पर नहीं होता। प्रत्येक इन्झाइम एक ही प्रकार के भोजन को बदल सकता है। गैस्ट्रिक रस का दूसरा एन्झाइम जिसका नाम लाइपेश (Lipase) है, तेल, घी इत्यादि पर प्रभाव डालता है। इनको वह छोटे छोटे टुकड़ों में बदल देता है। तीसरा एन्झाइम जिसको रेनिन (Renin) कहते हैं दूध को दही में बदलता है। इस प्रकार आमाशय में भोजन का सब अंश बदल जाता है और खूब मिल कर सफेद गाढ़ा तरल पदार्थ हो जाता है जो दूध के समान मालूम पड़ने लगता है। इसको शाइम (Chyme) कहते हैं।

अब बदला हुआ यह भोजन अथवा शाइम आमाशय की बाहरी मांस-पेशियों की सिकुड़नों से आगे की ओर एक बहुत छोटे छिद्र से जिसको पाइलोरिक द्वार या पाइलोरस कहते हैं, बढ़ता है। यह छिद्र सर्वदा बन्द रहता है और उसी समय खुलता है जब भोजन भली भांति शाइम में बदल जाता है। इसलिये यह बड़े काम का है।

पित्त का कार्य (Action of Bile juice)—अब इस छिद्र से होकर भोजन ड्युआडेनम में आता है जिसमें दो ओर से आयी हुई दो नलियाँ मिल कर एकही स्थान पर खुलती हैं (चित्र ४२)। इनमें

अँतड़ियों के रस का कार्य (Action of intestinal juice)—अँतड़ियों से निकले हुए रस में भी एक एन्ज़ाइम होता है जिसको इरेप्सीन (Erepsin) कहते हैं। यह ट्रिप्सीन को प्रोटीन के ऐमीनो-तेजाब (Amino-acid) में बदलने में सहायता देता है। इस प्रकार भोजन अँतड़ियों में पहुँच कर शरीर में शोषण होने के योग्य पदार्थ में बदल जाता है।
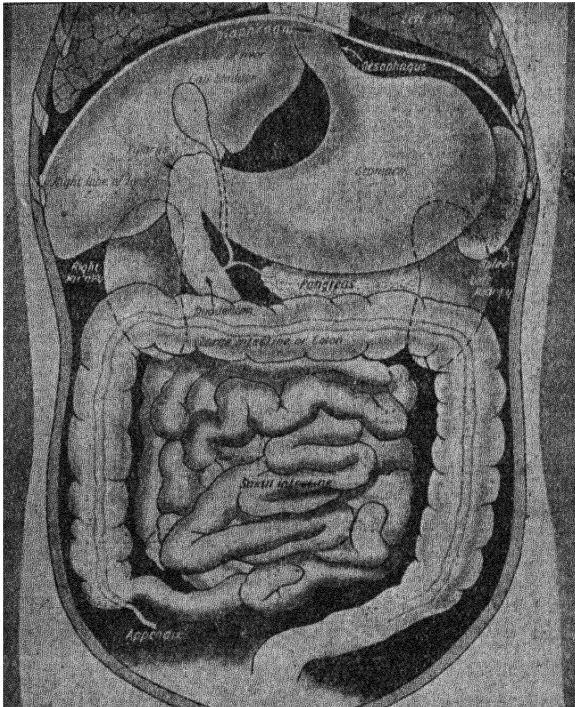
चित्र ४३— मनुष्य के पाचन अंग—प्राकृतिक दशा में।

भोजन अँतड़ियों में तीन-चार घंटे तक उसकी दीवालों की सिकुड़नों से आगे-पीछे होकर सब रसों से भली भाँति मिल जाता है और तब उसका बहुत कुछ

अंश अँतड़ियों की दीवालों से रक्त की नलियों में शोषण हो जाता है। इस शोषण हुए रक्त की शरीर में भ्रमण करने के पहले यकृत में पूरी जाँच होती है। तब यहाँ से वह हृदय में जाता है।

मल्ल त्याग (Final discharge)—अँतड़ियों में बचा हुआ भोजन जो हमारे शरीर के योग्य नहीं है बल्कि जिसके रहने से शरीर में विष फैलने का डर है अँतड़ियों की दीवालों के सिकुड़ने से आगे बढ़ता है और बड़ी अँतड़ी (Large intestine) में जाता है। यहाँ से समय समय पर बाहर मल के रूप में मल-छिद्र द्वारा निकाल दिया जाता है। (चित्र ४३)। कुछ पानी का अंश भी बड़ी अँतड़ी में सोख जाता है।

अभ्यास

१. उन भोजन पदार्थों का नाम लिखो जिनका हम सेवन करते हैं। भोजन करने के पश्चात् उनमें जो परिवर्तन होता है उसे बतलाओ। शरीर अन्त में उनका किस प्रकार उपयोग करता है?

२. लार (Saliva) पित्त और आमाशय रस (Gastric juice) मनुष्य के पाचन क्रिया में क्या क्या भाग लेते हैं? इनका वर्णन करो।

३. नोट लिखो:— लार; एंज़ाइम; रसाकुंर; पाइलोरस; ज़ाइम।

४. मनुष्य के पाचन क्रिया में जो अंग कार्य करते हैं उनका नाम लिखो तथा प्रत्येक अंग का कार्य लिखो।

५. 'अग्नाशय' क्या है? मनुष्य के पाचन क्रिया में इसके कार्य का पूर्ण वर्णन करो।

६. पाइलोरस से निकलने के पूर्व भोजन पर जो परिवर्तन होते हैं उसका वर्णन करो।

७. मनुष्य के मुख में कितने प्रकार के दाँत होते हैं? प्रत्येक का कार्य लिखो। दाँत के भीतरी भाग क्या हैं? क्या दाँत हड्डियाँ हैं? कारण बताओ।

अध्याय १८

रक्त का परिभ्रमण

(The Vascular System)

रक्त का गाढ़ा होना (Coagulation)—मेंढ़क की भाँति हमारे शरीर में भी रक्त और रक्त-वाहक नलियाँ हैं। कभी न कभी तुम्हारे शरीर में चोट आ ही गयी होगी और तुमने किसी लाल तरल पदार्थ को निकलते भी देखा होगा। यही शरीर का रक्त है। कुछ समय तक निकलने के पश्चात् यह गाढ़ा हो जाता है और तब इसका निकलना बन्द हो जाता है। यदि इसमें यह शक्ति न होती तो रक्त का प्रवाह इतना अधिक होता कि तनिक चोट लगने पर ही हम लोगों की मृत्यु हो जाती।
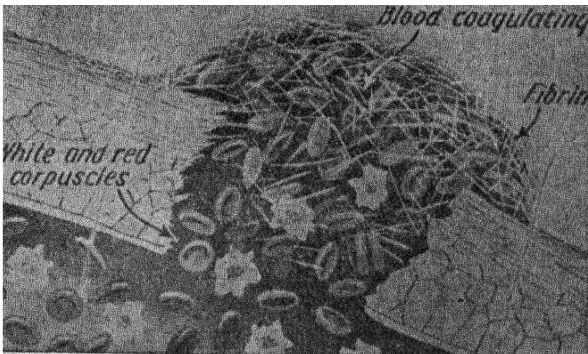
चित्र ४४—कटे हुए स्थान पर खून का गाढ़ा होना, (बृहत् रूप में)।

चोट लगने पर निकलते हुए रक्त के गाढ़ा हो जाने का मुख्य कारण इसका वायु से मिलना है। वायु से मिलते ही रक्त में कुछ परिवर्तन होने लगता है और एक प्रकार का पदार्थ बन जाता है जिसको फाइब्रिन (Fibrin) कहते हैं। यह रक्त के कणों को बाँध देता है और फिर कड़ा होकर चोट को बन्द कर देता है (चित्र ४४)।

रक्त के भाग (Parts of blood)—यदि निकलते हुए रक्त को

तुरन्त ही किसी स्लाइड (Slide) पर रख कर अनुविक्षण यन्त्र के नीचे देखा जाय तो इसमें दो प्रकार के अणु दिखलाई देंगे। (१) लाल अणु जो बहुत अधिक होते हैं। यह लाल, गोल और बीच में चपटे होते हैं। इनमें मेंढ़क के रक्त की भाँति कोई न्यूक्लियस नहीं होता (२) सफेद अणु जो बहुत ही कम होते हैं। इनका कोई विशेष रूप नहीं होता और इनमें न्यूक्लियस होता है। ये दोनों प्रकार के रक्त के अणु एक तरल पदार्थ प्लाज़्मा में घूमा करते हैं। लाल अणु अपने भीतर के लाल पदार्थ हीमोग्लोबिन के द्वारा ऑक्सीजन
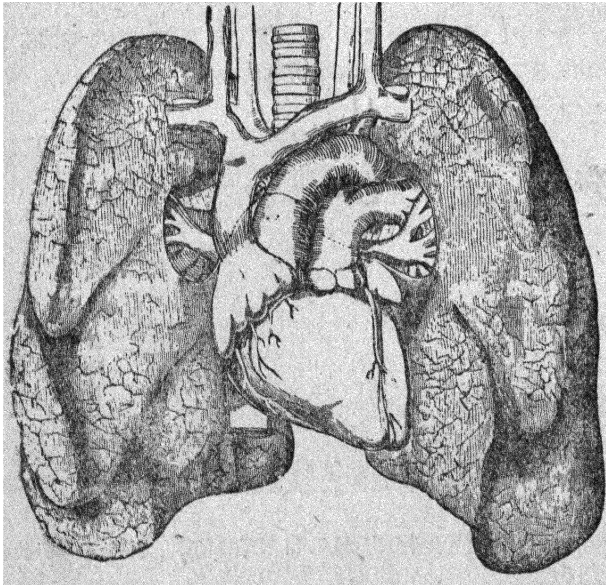
चित्र ४५—वक्षास्त के भीतरी अंग।

और भोजन से आवश्यक वस्तुओं (Nourishing matters) को लेकर शरीर को देता रहता है और लौटते समय दूषित पदार्थों को लेकर फेफड़े, चर्म व वृक्क के द्वारा शरीर के बाहर निकाल देता है। सफेद अणु शरीर को बाहरी जर्म्स या कीटाणुओं (Germs or microbes) से बचाता है।
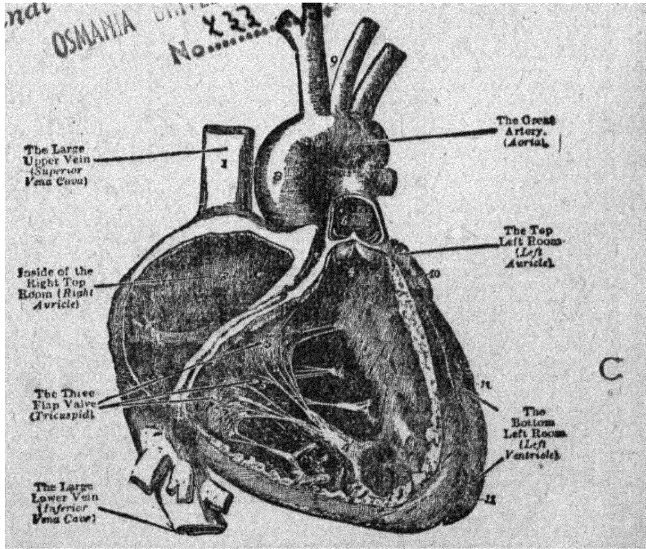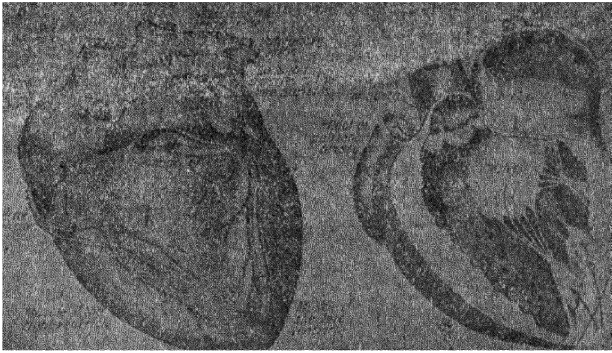
चित्र ४६—मनुष्य का हृदय; A—प्राकृतिक दशा में B और C—कटा हुआ हृदय, भीतरी बनावट ।

भाँति रक्त का भ्रमण हमारे शरीर में भी होता रहता है। चूँकि यह हृदय की धड़कन से होता है, इसलिए पहले हम हृदय की बनावट को देखें।

मनुष्य के हृदय में चार कोठरियाँ होती हैं। ऊपर दाहिनी और बाईं ओर आलिन्द और नीचे दाहिनी और बाईं ओर निलय। दोनों आलिन्दों में आपस में कोई सम्बन्ध नहीं होता। इसी प्रकार दोनों निलयों में भी आपस में कोई सम्बन्ध नहीं होता (चित्र ४६)।
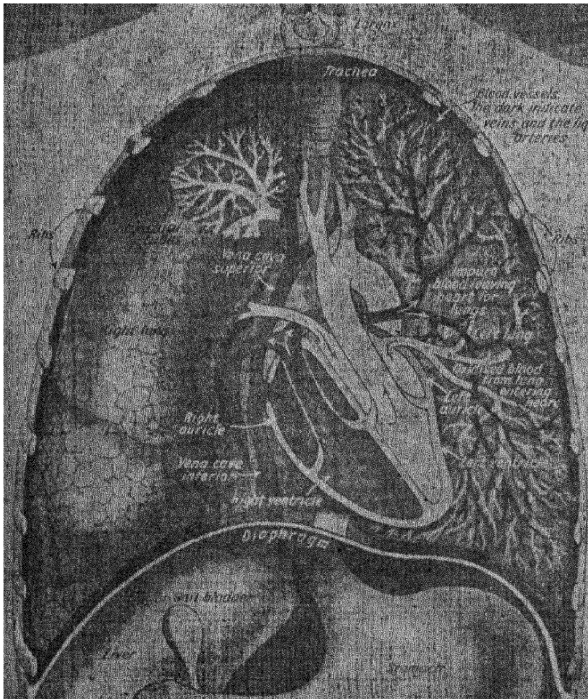
चित्र ४७—वक्ष के भीतर हृदय और रक्त की नलियाँ।

अशुद्ध रक्त बड़ी शिरा साइनस वेनॉसस (Sinus venosus) से

दाहिने अलिन्द में आता
के सिकुड़ने से यह
जाता है। ठीक उसी
और साइनस वेनॉसस

है जिसकी मांस-पेशिय
दाहिने निलय में चला
समय दाहिने अलिन्द
के बीच का किवाड़
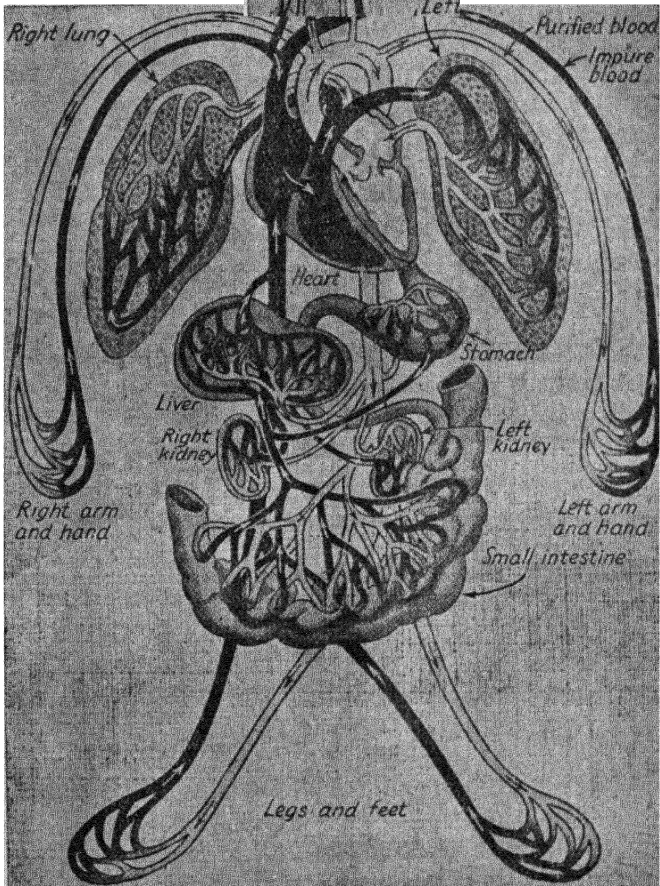
चित्र ४८—मनुष्य के रक्त-परिभ्रमण का चित्र।

(Valves) बन्द हो जाता है जिससे रक्त फिर उलटा जाने नहीं पाता (चित्र ४७)। अब दाहिने निलय के सिकुड़ने से इसके और दाहिने अलिन्द के बीच के किवाड़ बन्द हो जाते हैं और रक्त पल्मोनरी धमनी के द्वारा फेफड़े में पहुँच जाता है जहाँ वायु के संपर्क से अशुद्ध रक्त शुद्ध हो जाता है।

अब यह शुद्ध रक्त पल्मोनरी शिरा के द्वारा बाँये अलिन्द में आता है जिसके सिकुड़ने से वह बाँये निलय में चला जाता है। सिकुड़ते ही इसके और शिरा के बीच का फाटक बन्द हो जाता है और रक्त उलटे नहीं जाने पाता। बाँये निलय के सिकुड़ने से इसके और बाँयें अलिन्द के बीच के किवाड़ बन्द हो जाते हैं जिससे रक्त उलटे नहीं जाने पाता। इसलिये यह रक्त एक मात्र (Compare frog's heart) शुद्ध रक्त की मोटी नली डॉर्सल एओरटा से सारे शरीर में चला जाता है (चित्र ४८)।

सारे शरीर में भ्रमण करने के पश्चात् शुद्ध रक्त अशुद्ध हो जाता है और केशिकाओं (Capillaries) से आगे बढ़ते ही बिलकुल अशुद्ध रूप धारण कर लेता है। यहाँ से यह शिराओं के द्वारा फिर बड़ी शिरा साइनस वेनॉसस से दाहिने अलिन्द में आता है और इसी प्रकार रक्त का भ्रमण हमारे शरीर में होता रहता है (चित्र ४८)।

Sinus venosus ⟶ Right auricle ⟶ Right ventricle
↑ ↓
Capillaries of the body Pulmonary artery
↑ ↓
Dorsal aorta Capillaries of the lungs
↑ ↓
Left Ventricle ⟵ Left auricle ⟵ Pulmonary vein

Blood Cycle in Man.
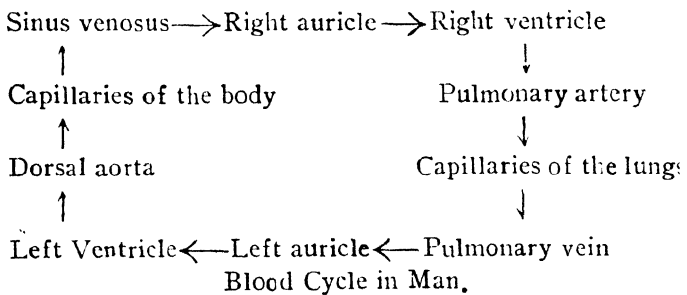
अभ्यास

१. मनुष्य में रक्त का क्या कार्य है? प्राणिमात्र को शुद्ध वायु की क्य आवश्यकता होती है?

२. मनुष्य के हृदय की भितरी बनावट को दिखलाने के लिये एक सुन्दर चित्र बनाओ। इसकी तुलना मेंढक के हृदय से करो।

३. मनुष्य का रक्त मेंढक के रक्त से किस प्रकार भिन्न है। रक्त के कार्य और उसके परिभ्रमण की आवश्यकता का वर्णन करो।

४. नोट लिखोः—रक्त की जाली (Fibrin); अनुत्रिक्षणयंत्र; हीमोग्लोबिन; ल्यिकोसाइट।

५. मनुष्य में रक्त के परिभ्रमण का वर्णन करो।

अध्याय १९

स्वासोच्छ्वासन, मल-मूत्र आदि त्याग की क्रियाएँ

(Respiratory and Excretory Systems)

स्वाँस लेने की रीति (Mechanism of respiration)— अब यह जानना आवश्यक है कि यह रक्त कैसे निर्मल होता है। हमारे शरीर में भी वायु के प्रवेश होने की रीतियाँ हैं। हमारे वक्ष का भाग (Thoracic region) अंदर से एक बहुत दृढ़ अर्द्ध-शीलाकार माँस-पेशी से दो भागों में विभाजित हो जाता है। इस माँस-पेशी को महाप्राचीरा पेशी (Dia phragm) कहते हैं। इसके ऊपर के भाग को छाती और नीचे के भाग को पेट (Abdomen) कहते हैं। यह पेशी कुछ अन्दर छाती की ओर
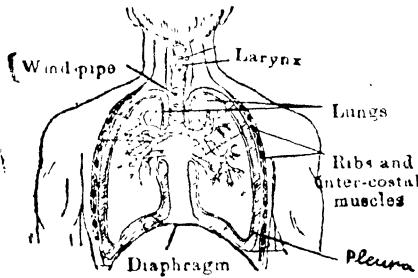
चित्र ४९—वक्ष और उसके भीतर के अंग

धँसी रहती है। (चित्र ४९ और ५१)। माँस-पेशी में सिकुड़ने का गुण होता है। इसलिये इसके सिकुड़ने से इसकी ऊपरी गोलाई कम हो जाती है और यह नीचे की ओर चली जाती है। अब छाती का भीतरी समाव अधिक हो जाता है। यह स्थान खाली नहीं रह सकता इसलिये वायु बाहर से अन्दर घुसती

है। अन्न-प्रणाली मांसपेशी के कारण बन्द रहती है इसलिये वायु को केवल वायु-प्रणाली के अतिरिक्त जाने के लिये और कोई मार्ग नहीं मिलता। एपी-ग्लॉटिस (Epiglottis) से होकर हवा वायु-प्रणाली द्वारा फेफड़े में पहुँच जाती है। क्योंकि फेफड़े स्पंज (Sponge) की भाँति के होते हैं इसलिये ये फूल कर खाली जगह को भर देते हैं।

चित्र ५०—मनुष्य का फुस्फुस और कण्ठ।

यह वायु फेफड़े में पहुँच कर सफेद नलियों द्वारा बहुत सूक्ष्म कोशिकाओं में पहुँच जाती है जिसकी बाहरी दीवाल से गैस, भाप, ऑक्सीजन और कारबन डाइ-ऑक्साइड का परिवर्त्तन होता है (चित्र ५०)। इन कोशिकाओं की दीवालें सेमी-परमीएबुल झिल्ली (Semi-permeable membrane) की तरह काम करती हैं। ऑक्सीजन को रक्त के लाल अणु की हीमोग्लोबिन अपने में सोख लेती है और रक्त की खराबी भस्म होकर कारबन डाइ-आक्साइड के रूप में बदल जाती है। फुस्फुसों के चारों ओर एक पतला परदा होता है जिसे प्लियूरा (Pleura) कहते हैं। इसके और फुस्फुस के मध्य के भाग में दबाव वायु के दबाव से कम रहता है। इस कारण यह भाग भी वायु को फुस्फुस के भीतर पहुँचने में सहायता देता है।
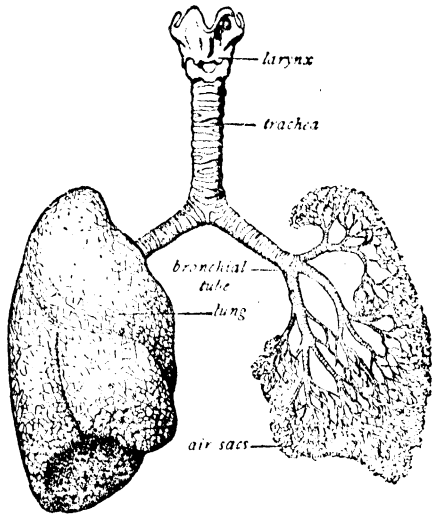
पसलियों के बीच की मांस-पेशियों के सिकुड़ने से और महाप्राचीरा पेशी के फिर अपनी जगह पर आ जाने से वायु कारबन-डाइ ऑक्साइड के साथ बाहर निकल जाती है (चित्र ५१)। वायु में लगभग 20% ऑक्सीजन रहता है लेकिन इसका केवल 4% ही रक्त अपने में सोख

पाता है। शेष 16% ज्यों का त्यों कारबन डाइ-ऑक्साइड को लेकर बाहर निकल आता है। पसलियों के बीच की मांस-पेशियों को इन्टरकॉस्टल पेशियाँ (Intercostal muscles) कहते हैं।

हम वायु को वायु प्रणाली (Trachea) और स्वर-यंत्र (Larynx or vocal box) के द्वारा लेते हैं। वायु-प्रणाली आगे चल कर दो भागों—ब्रॉंकाई (Bronchii) में विभाजित हो जाती है जिस पर सर्दी का प्रभाव पड़ जाने से हम लोग ब्रोंकाइटीज़ (Bronchitis) रोग से ग्रसित हो जाते हैं। ब्रॉंकाई फेफड़े में पहुँच कर पतले और उससे भी पतले भागों में विभाजित हो जाती हैं।
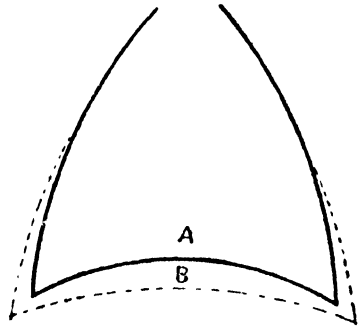
चित्र ५१—महाप्राचीरा पेशी का कार्य

A महाप्राचीरा पेशी प्राकृतिक दशा में। B गुम्बज का नीचे झुक जाना जिससे भीतरी समाव बढ़ जाता है और वायु भीतर प्रवेश करती है।

स्वर-यंत्र एक हड्डी से जिसको हम गर्दन पर आगे निकली हुई प्रतीत कर सकते हैं घिरा रहता है। इसमें बहुत पतले पतले रेशे होते हैं जिनके तन जाने या ढीले पड़ जाने से और हवा का धक्का लगने पर भिन्न भिन्न प्रकार का शब्द निकलता है।

दूषित पदार्थों का त्याग—श्वाँस के निकलने के साथ साथ हमारे शरीर की एक दूषित वस्तु कारबन डॉइ-आक्साइड के रूप में निकल जाती है। इसके रह जाने से हमारे शरीर को बहुत हानि पहुँच सकती है और शरीर का जीवित रहना कठिन हो जा सकता है। इस प्रकार की और भी अशुद्ध वस्तुएँ हमारे शरीर में पैदा होती रहती हैं जिनका हमारे शरीर से निकल जाना अति आवश्यक है। ऐसी वस्तुओं को दूषित वस्तुएँ (Excretory products) कहते हैं और इनके निकलने की रीति को एक्स्क्रीशन (Excretion) कहते हैं। यह मुख्यतः शरीर के दो अंगों, चर्म और वृक्क के द्वारा निकलता रहता है।

चर्म (Skin)—चर्म शरीर का बड़ा प्रभावशाली अंग है। इसके भाग इसका लम्बोदराकार खंड लेकर अनुवीक्षण यंत्र से देखने पर ही भलीभाँति मालूम पड़ सकते हैं। सब से बाहरी ओर एपिडरमिस (Epidermis) होता है और उसके नीचे का बड़ा भाग डरमिस (Dermis) कहलाता है। डरमिस में बहुत से गोलाकार गुच्छे होते हैं जिनको पसीने की थैलियाँ (Sweat glands) कहते हैं। इससे एक पसीने की नली (Sweat duct) निकल कर बाहर खुलती है। पसीने की थैलियाँ चारों ओर केशिकाओं से घिरी रहती हैं जिनसे शरीर के दूषित पदार्थ पसीने के रूप में रक्त से निकल कर इन्हीं थैलियों में एकत्रित रहते हैं। भीतरी दबाव के कारण समय समय पर पसीना निकलता रहता है जिसे हम लोग स्नान आदि करके साफ कर देते हैं (चित्र ५२)।

इसके अतिरिक्त चर्म में बाल निकलने के स्थान भी होते हैं। बालों के जीवित काल में रक्त की नलियाँ और नाड़ी भी उनमें कुछ दूरतक जाती हैं। बाल की जड़ के चारों ओर एक प्रकार की थैलियाँ होती हैं जिनको सीबेशियस थैलियाँ (Sebaceous glands) कहते हैं। इनसे एक प्रकार का तेल निकला करता है जो बाल को स्वस्थ दशा में रखता है।

चित्र ५२—मनुष्य के चर्म का लम्बोदराकार खंड।

डरमिस में गुच्छेदार सफेद रंग की छोटी छोटी गाँठें भी होती हैं जिनमें सुषुम्ना से निकली हुई नाड़ियाँ लगी रहती हैं। इन गाँठों को स्पर्श की गाँठें (Touch papillae or corpuscles) कहते हैं (चित्र ५२)। ये बाहरी स्पर्श को ज्ञात करके नाड़ियों द्वारा

मस्तिष्क तक पहुँचाती हैं। इनके अतिरिक्त चर्म में बहुत सी रक्त की नालियां और केशिकाएँ भी होती हैं।

वृक्क (Kidneys)—वृक्क या गुर्दा का भी शरीर की दूषित वस्तुओं के बाहर निकालने में एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। हमारे शरीर में दो वृक्क होते हैं जो आकार में सेम के बीज के सदृश्य होते हैं। ये अँतड़ियों के पीछे रीढ़ की हड्डियों के दोनों ओर एक दूसरे के आमने सामने थोड़ा ऊपर नीचे होते हैं (चित्र ५३)। इनमें खराबी आ जाने से दर्द पैदा होता है जिसका अनुभव पीठ के निचले भाग में भी किया जा सकता है।

चित्र ५३—वृक्क और मुत्राशय।
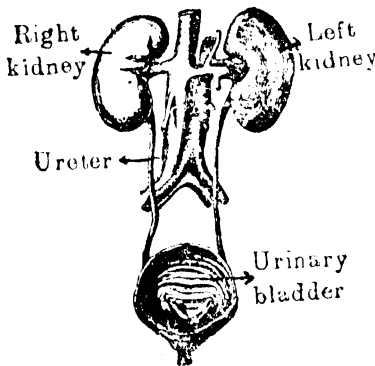
वृक्क से नीचे की ओर दो पतली नलियाँ निकलती हैं जिनको यूरेटर कहते हैं। ये पेशाब की थैली से अलग अलग मिली रहती हैं। वृक्क रक्त से हानिकारक और विशैली वस्तुओं को एक विशेष प्रकार के यन्त्र द्वारा खींचकर यूरेटर के द्वारा मूत्राशय में भेजा करता है, जहां से मूत्र समय समय पर बाहर निकाल दिया जाता है। इस यन्त्र को ग्लॉमेरुलस कहते हैं जो मैलपीघियन थैली (See Frog) में रहता है (चित्र ५४)। दूषित वस्तुएँ यूरीया और यूरिक एसिड के रूप में रहते हैं जो पानी से मिलकर पेशाब (Urine) बन जाती हैं।
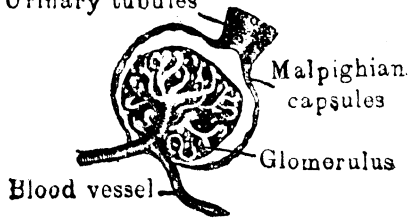
चित्र ५४—वृक्क के भीतरी अंग के एक छोटे से भाग का बड़ा रूप।

हर एक वृक्क ४ इंच लम्बा और २½ इंच चौड़ा होता है। यदि वृक्क को बीचौबीच से काट दिया जाय तो इसका भीतरीभाग भी स्पष्ट मालूम पड़ जायगा। इसकी भीतरी बनावट बहुत ही विचित्र है। इसके भीतर कुछ गोला-अंग होते हैं जिनको मैलपीघियन थैलियां (Malpighian capsules) कहते हैं जिसके अन्दर गांठ की भाँति गुच्छा होता है जिसको ग्लॉमेरुलस (Glomerulus) कहते हैं (चित्र ५४)। यही मूत्र बनानेवाले अंग हैं। इन्हीं से मूत्र निकल कर मैलपीघियन थैलिलों में आकर यूरीनरी ट्यु ब्यूल्स (Urinary tubules) के द्वारा यूरेटर से होकर मूत्राशय में इकट्ठा रहता है। यहाँ से मूत्र समय समय पर बाहर निकल जाता है।

इन अंगों के अतिरिक्त हानिकारक बस्तुएँ अँतड़ियों से भी मल के रूप में बाहर निकला करती हैं।

अभ्यास

१. 'श्वाँस' से तुम क्या अर्थ समझते हो ? वर्णन करो कि खरगोश में यह किस प्रकार होता है।

२. मनुष्य में श्वॉस लेने की क्रिया का भली प्रकार वर्णन करो। सुन्दर चित्रों से अपने उत्तर को प्रदर्शित करो।

३. 'एक्सिक्रीशन' से तुम क्या समझते हो। कौन कौन से अंग इसमें भाग लेते हैं और वे अंग कैसे कार्य करते हैं ?

४. नोट लिखो:—मनुष्य का चर्म; मैलपीघियन की थैली; ब्रांकाई; और महाप्राचीरा पेशी।

५. शरीर से दूषित पदार्थों के निकालने में वृक्क का क्या काम है ? इन पदार्थों के निकलने की पूर्ति किस प्रकार होती है ?

६. मनुष्य और मेंढक की श्वॉस लेने की क्रियाओं की तुलना चित्रों की सहायता से करो।

अध्याय २०

मस्तिष्क, नाड़ियाँ, आँख, कान इत्यादि

(Brain, Nerves and Receptor Organs.)

हमारे शरीर का राजा मस्तिष्क है। वही हमारी सारी क्रियाओं पर शासन करता है। यह सारी भावनाओं को प्रतीत करता है और उनके लिये उचित उपाय करता है। यह शरीर के सारे अंगों से सम्बन्ध रखता है। इसकी आज्ञा के बिना शरीर की कोई भी क्रिया नहीं हो सकती।

मस्तिष्क (Brain)—मनुष्य के मस्तिष्क के लगभग वे ही भाग होते हैं जो मेंढक के परन्तु मनुष्यों में सेरिब्रल हेमिस्फियर्स (Cerebral hemispheres) और सेरिबेलम (Cerebellum) बहुत बड़े होते हैं। ये इतने बड़े होते हैं कि खोपड़ी के सम्पूर्ण भीतरी भाग को ये ही घेरे रहते हैं और शेष भाग या तो बहुत छोटे होते हैं या इन्हीं के अन्दर धँस कर पड़े रहते हैं। सेरिब्रल हेमिस्फियर मस्तिष्क के शेष भाग से कई गुना बड़ा होता है। यह खोपड़ी में पीछे की ओर ऊपरी भाग में रहता है।
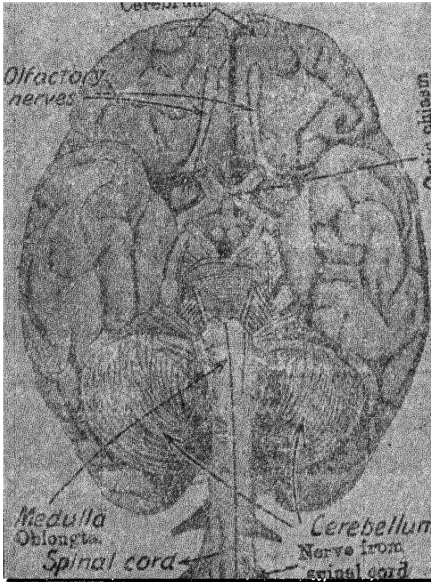
चित्र ५५—मनुष्य का मस्तिष्क।

मनुष्य का यह भाग बड़े से बड़े जानवर के इस भाग से भी बड़ा होता है, परन्तु यह सिकुड़ कर खोपड़ी में

पड़ा रहता है । मनुष्य के मस्तिष्क को देखने से तुमको उसमें बहुत से गड्ढे दिखलायी देंगे । सेरिब्रल हेमिस्फियर के आगे सफेद पतली दो लकीरें होती हैं जो ऑलफॅक्टरी लोब्स (Olfactory lobes) हैं। इसमें चार ऑप्टिक लोब्स (Optic lobes) होते हैं जो बाहर से दिखलाई नहीं देते। ये सेरिब्रल हेमिस्फियर में घुसे रहते हैं । दोनों सेरिब्रल हेमिस्फियर्स के बीच में नसों के बहुत सूक्ष्म रेशे होते हैं जिनसे ये जुटे रहते हैं । ये रेशे अन्य किसी जीव में नहीं पाये जाते । इनको कॉरपस कॅलोशम (Corpus Callosum) कहते हैं । इसके पीछे सेरिबेलम होता है जिसके नीचे से मेडुला ऑब्लांगेटा (Medulla oblongata) निकल कर सुषुम्ना में परिवर्तित हो जाता है (चित्र ५५) ।

मनुष्य के मस्तिष्क से १२ दाहिनी ओर १२ बाईं ओर नाड़ियाँ निकलती हैं जिनमें से १० नाड़ियों का वही कार्य है जो मेंढ़क की उन्हीं नाड़ियों का है । शेष दो नाड़ियाँ गर्दन की माँस पेशियों तक जाती हैं और मिश्रित कार्य करती है । सुषुम्ना से ३२ बाईं ओर और ३२ दाईं ओर नाड़ियाँ निकलती है जो शरीर के भिन्न भिन्न भागों में जाती हैं ।

मस्तिष्क शरीर के भिन्न भिन्न भागों से समाचार बराबर पाता रहता है । ये समाचार शरीर के पाँच मुख्य अंगों द्वारा भेजे जाते हैं, (१) आँख (२) कान (३) नाक (४) जीभ (५) चर्म । आँखों से देखने का समाचार या किसी वस्तु का अक्स पड़ जाने का प्रभाव ऑप्टिक नाड़ी के द्वारा पहुँचता है । कानों से सुनने अथवा शब्द का प्रभाव आठवीं नाड़ी या ऑडिटरी नाड़ी द्वारा पहुँचता है । नाक से किसी वस्तु की मँहक पहली ऑलफैक्टरी नाड़ी द्वारा पहुँचती है । किसी वस्तु का स्वाद जीभ के द्वारा और छूने का प्रभाव चर्म के द्वारा मस्तिष्क तक पहुँचता है ।

आँख (Eye)—आंखें शरीर के मुख्य अंग हैं । मनुष्य की आंखों के भी वही भाग होते हैं जो मेंढ़क की (चित्र ५६) । भिन्नता यही है कि मनुष्य की आंखों की पलकों में बाल होते हैं और भौंवें होती हैं, निक्टिटेटिङ्ग झिल्ली बहुत छोटी होती है और रोशनी और अक्स के प्रभाव का अनुभव करने की शक्ति अधिक होती है और आंख के कोने में दो थैलियां

होती हैं जिन्हें लैक्रिमल थैलियां (Lacrymal glands) कहते हैं। इनके अतिरिक्त मनुष्य में आंसू जमा करने की भी थैलियां होती हैं।
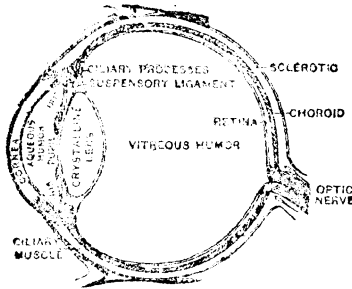
चित्र ५६—मनुष्य की आँख के भिन्न भिन्न भाग।

बहुत से मनुष्यों की आंखों में उनके जीवन के किसी न किसी समय दो या तीन दोष उत्पन्न हो जाते हैं; जैसे--(i) केवल पास की वस्तु को ही सरलता से देखना और दूर की वस्तु का न दिखायी देना—इसको मायोपिया शार्ट-साइटेडनस (Myopia or Short sightedness) कहते हैं। (ii) पास की वस्तु का न दिखायी देना और केवल दूर की वस्तु को भली भांति देखना—इसको हाइपरमेट्रोपिया या लॉग-साइटेडनेस (Hypermetropia or Long sightedness) कहते हैं। (iii) यह दोष पैदा होने के कुछ समय पश्चात् ही हो जाता है जिसमें एक पुतली दूसरी से छोटी व तिरछी हो जाती है। इसको ऐस्टग्मॅटिज्म (Astigmatism) कहते हैं।

मयोपिया अर्थात् शार्ट-साइटेडनेस में स्क्लेराटिक (Sclerotic) ऊपर और नीचे से दब जाता है और आंखें आगे व पीछे से फैल जाती हैं। परिणाम यह होता है कि रेटीना (Retina) भी साथ ही साथ दब कर पीछे हट जाता है। यही कारण है कि बाहरी वस्तुओं का अक्स इस पर नहीं पड़ता बल्कि इसके सामने आगे की ओर पड़ता है। इसलिये वह वस्तु बहुत धुँधली दिखलायी देती है। अब यदि चश्मा लगा लिया जाय जिसमें कान्केव लेंस (Concave lens) लगे हों तो प्रकाश की किरणें आंखों में पहुँचने के पहले कान्केव लेंस से पार होते समय बाहर की ओर फैल (Divergence) जायेंगी। अब ये फैली हुई किरणें आंखों में प्रवेश करने के पश्चात् रेटीना पर ही पड़ेंगी (चित्र ५७–A, B, C)। आंखों

में जितना दोष है उसी के अनुसार चश्मा लगाने से ठीक रेटीना पर ही वस्तुओं का अक्स पड़ जायगा।
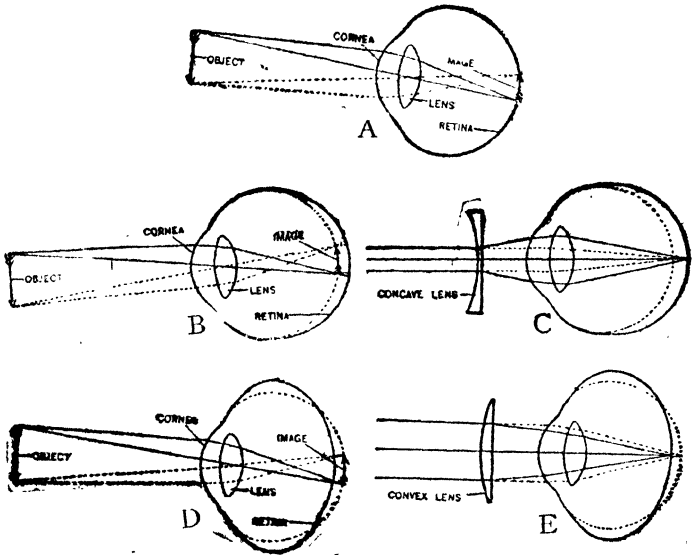
चित्र ५७—A—आँख साधारण दशा में ; B & C—शार्ट-साइटेडनेस और उसका उपाय ; D & E—लांग-साइटेडनेस और उसका उपाय।

हाइपरमेट्रोपिया अर्थात् लांग-साइटेडनेस स्क्लेराटिक आगे और पीछे से दब जाता है। ऊपर और नीचे की ओर फैल जाता है। इससे फोकस (Focus) ठीक रेटीना पर न पढ़ कर उसके पीछे पड़ता है। इसलिए पास की वस्तु बहुत धुँधली दिखलाई देने लगती है। इसके लिए ऐसा चश्मा लगाना चाहिए जिसमें कॉन्वेक्स लेंस (Convex lens) लगे हों। ये किरणों को अन्दर की ओर घुमा (Convergence) देता है जिससे फोकस आगे खिसक कर ठीक रेटीना पर पड़ जाता है और हर एक वस्तु का

अक्स उस पर पड़ने से वह स्पष्ट दिखलायी देने लगता है, (चित्र ५७-D, E)।

कान (Ear)—कान भी मनुष्य में एक अद्भुत यंत्र है। मेढ़क के विपरीत मनुष्य के बाहरी कान भी (External ear) होता है जो कर्टिलेज का बना होता है। यहाँ से लगभग एक इञ्च भीतर तक यह खोखला होता है जिसमें कुछ बाल भी लगे रहते हैं। इसी में कान से
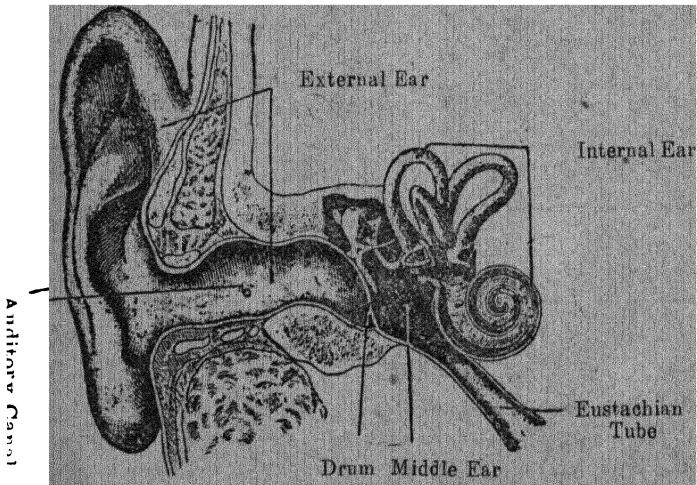
चित्र ५८—मनुष्य का कान।

(बाहरी कान, मध्य कान और भीतरी कान के भाग।)

निकला हुआ खोंट (Ear wax) इकट्ठा होता रहता है और समय समय पर बाहर निकल जाता है। कान भीतर की ओर एक परदे से ढँका रहता है जिसको टिम्पैनिक परदा या टिम्पेनम कहते हैं। इससे सटी हुई एक कतार में तीन हड्डियाँ होती हैं। सबसे पहले ऐनविल (Anvil) हड्डी

होती है जो इस परदे से बिलकुल सटी रहती है। ऐनविल से सटी हुई हैमर (Hammer) हड्डी होती हैं जो तीसरी हड्डी स्टरप (Stirrup) से सटी रहती है। इन हड्डियों के नाम इनके रूप के अनुसार रखे गये हैं (चित्र ५८)।

ठीक इसी स्थान से एक नली इसको श्वाँस-प्रणाली से मिलाती हैं। इस नली में श्वाँस-प्रणाली से वायु आकर तीव्र या धीमे शब्द के अनुसार इसके भीतर के दबाव को ठीक कर देती है जिससे कान के परदे पर कोई धक्का नहीं पड़ने पाता। इस नली को यूस्टेशियन नली (Eustachian tube) कहते हैं। स्टरप से लगी (मेंढ़क के भीतरी कान की भांति) एक झिल्लीदार यंत्र होता है जिसका बाहरी भाग यूट्रिकुलस (Utriculus) है और भीतरी कॉक्लिया (Cochlea) है। यूट्रिकुलस से तीन अर्ध-गोलाकार नलियाँ (Semi-circular canals) लगी होती हैं जो मिलने की जगह पर फूली हुई रहती हैं। इस फूले हुए भाग को एम्पुली (Ampullae) कहते हैं जिसमें बहुत सूक्ष्म नाड़ियों के रेशे रहते हैं। ये शब्द का अनुभव करने में बहुत ही तीव्र होते हैं। कॉकलिया से मिली हुई मस्तिष्क की आठवीं नाड़ी होती है।

यूट्रिकुलस और कॉकलिया में एक तरल पदार्थ एन्डोलिम्फ (Endo-lymph) भरा रहता है और उसके बाहर पेरीलिम्फ (Perilymph)। शब्द के प्रभाव से प्रारम्भ में कान का परदा हिलता (Vibrate) है जो पहली, दूसरी और फिर तीसरी हड्डी को हिला देता है। इससे एम्पुली के अन्दर के रेशे और पेरीलिम्फ हिल जाते हैं और तब शब्द का अनुभव आठवीं नाड़ी से मस्तिष्क तक पहुँच जाता है।

गंध (Smell)—नाक के भीतर मस्तिष्क की पहली नाड़ी से बहुत से सूक्ष्म रेशे लटके रहते हैं जिनका कार्य किसी सुगंध या दुर्गन्ध को ग्रहण करना है। यहाँ से यह प्रभाव नाड़ी के द्वारा मस्तिष्क तक पहुँच जाता है (चित्र ५९)।

स्वाद (Taste)—चखने के विशेष स्थान जीभ में ही रहते हैं।

जीभ में बहुत सी उभड़ने होती हैं जिनको टेस्ट बड्स (Taste-buds) कहते हैं। हम जीभ
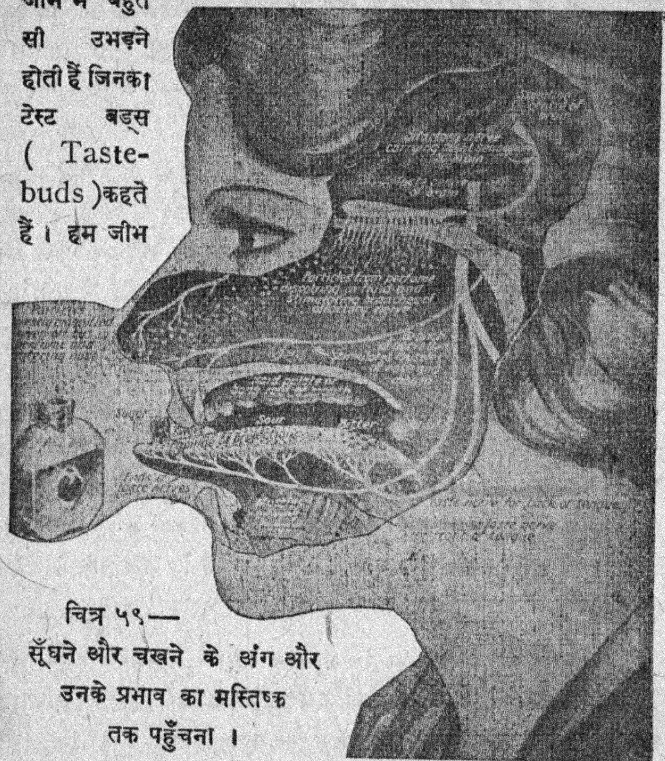
चित्र ५९—
सूँघने और चखने के अंग और उनके प्रभाव का मस्तिष्क तक पहुँचना।

के अगले भाग से मीठे, पिछले भाग से खट्टे और उससे भी पिछले भाग से तीखेपन का अनुभव करते हैं (चित्र ५९)।

स्पर्श (Touch)—हम लोगों में छूने की शक्ति चर्म में ही होती है।नाड़ियाँ डरमिस (Dermis) में आकर बहुत छोटे छोटे गुच्छों में बदल जाती हैं। किसी वस्तु के छू जाने से इन नाड़ियों के गुच्छों पर प्रभाव ज्ञात होता है। यहाँ से यह समाचार नाड़ी के द्वारा सुषुम्ना में पहुँचता है और उसके अनुसार आज्ञा आ जाती है। इन गुच्छों को टच पेपिली (Touch papillae) कहते हैं (चित्र ५२)।

अभ्यास

१. मनुष्य के मस्तिष्क का वर्णन चित्रों सहित करो। मनुष्य का मस्तिष्क मेंढक के मस्तिष्क से किस प्रकार भिन्न है ?

२. मनुष्य के स्नायु प्रणाली के कार्य का वर्णन करो।

३. मनुष्य के आँखों की साधारण दोष क्या क्या हैं ? ये दोष किस प्रकार दूर किये जा सकते है ? सुन्दर चित्रों की सहायता से उनका वर्णन करो।

४. मनुष्य के आँख का चित्र-रचित वर्णन करो। मनुष्यकी आँखें किस प्रकार मेंढ़ककी आँखोंसे भिन्न हैं ?

५. मनुष्यके कर्ण का एक सुन्दर चित्र बनाओ और उसके सभी भागों का नामकरण करो। मस्तिष्क तक शब्द किस प्रकार पहुँचते हैं ?

६. नोट लिखो :—स्पर्श गाँठ, स्वाद की कलियाँ, नासिक-नाडी के रेशे, कार्पस कैलासम।

Classification of Animals.
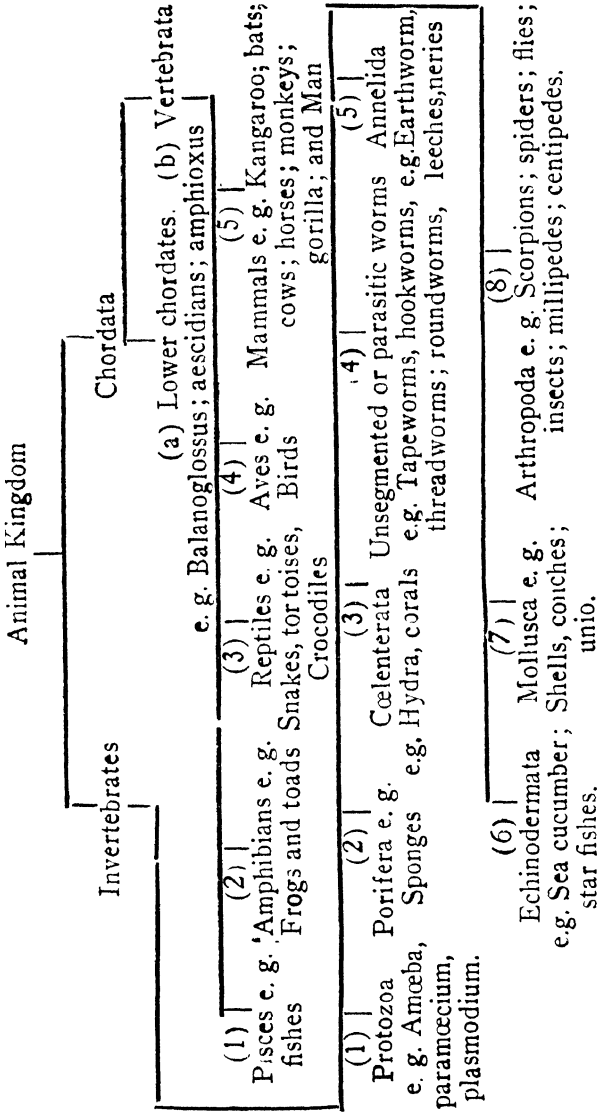
अध्याय २१

प्राणिमात्र का निरीक्षण

(General Survey of the Animal Kingdom)

संसार के प्राणिमात्र दो वर्गों में बाँटे जा सकते हैं। (१) वे जिनमें हड्डियाँ नहीं होतीं अथवा रीढ़ की हड्डियाँ (Vertebrae) नहीं होतीं; जैसे—केचुआ, बिच्छू, गोजर इत्यादि। (२) वे जिनमें रीढ़ की हड्डियाँ होती हैं, चाहे वह कुछ दिनों के ही लिए रहे या सर्वदा के लिए; जैसे—मेंढ़क, मछली, साँप इत्यादि। पहले प्रकार के जानवरों को इनवर्टिब्रेट्स (Invertebrates) और दूसरे प्रकार के जनवरों को कोर्डेटा (Chordata) कहते हैं। अब हम इनके भिन्न भिन्न वर्गों का निरीक्षण करें और इनके विषयमें ज्ञान प्राप्त करें।

Invertebrates.

प्रोटोजूआ (Protozoa)—यह इस वर्ग का पहला भाग है। इसको प्रोटोजूआ (Protozoa) कहते हैं (चित्र ६०)। ये सब से पुराने जीव हैं और इनका शरीर केवल एक सेल से (One-celled or unicellular) बना रहता है जिसमें बाहरी दीवाल होती है। इसके अन्दर तरल पदार्थ प्रोटोप्लाज्म (Protoplasm) होता है और मध्य में एक न्यूक्लियस (Nucleus); जैसे अमीबा (Amoeba)। इसका शरीर टेढ़ा-मेढ़ा रहता है और कुछ विशेष प्रकार के टेढ़े अंग (Pseudopods) से यह पानी में तैरता रहता है। एक दूसरे प्रकार का अमीबा हमारे शरीरमें पेचिस की बीमारी पैदा करता है और कुछ ऐसे भी जीव इस वर्ग में होते हैं जो काला आजार, मलेरिया इत्यादि की बीमारियाँ फैलाते हैं।
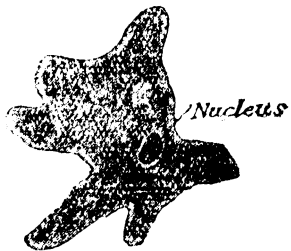
चित्र ६०—एक अमीबा।

पॉरिफरा (Porifera)—इस वर्ग के बाद कई सेल्स के बने हुए परन्तु बहुत ही सादे जीव हैं जिन को पारिफरा कहतेहैं और जिनमें अंगों की भिन्नता स्पष्ट नहीं है, जैसे—स्पंज। यह समुद्र में चट्टानो से चपका रहता है। इसमें बहुत से छिद्र होते हैं जिनसे पानी भोजन के साथ साथ आया जाया करता है। पानी ऊपर के एकमात्र छिद्र से निकलता है (चित्र ६१)।
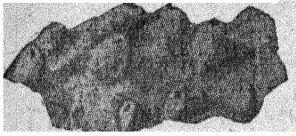
चित्र ६१—स्पंज।

सिलेण्ट्रेटा (Coelenterata)—स्पंज से कुछ बढ़कर ऐसे जीव होते हैं जिनका शरीर सुडौल होता है। इनके शरीर में दो कतारें होती हैं, मुँह ऊपर होता है जिससे मल भी निकलता है और उसी के चारों ओर शिकार पकड़ने के लिए एक विशेष प्रकार के बाल होते हैं। इनमें से कुछ जैसे—
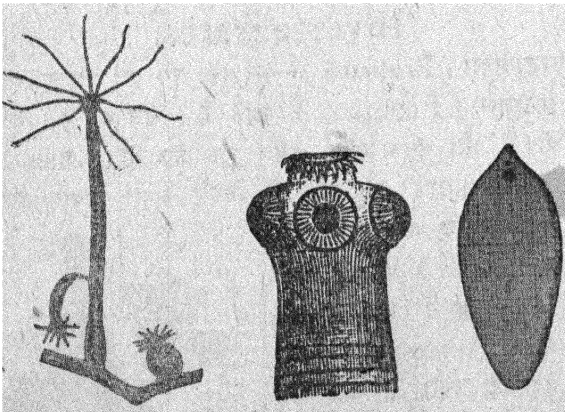
चित्र ६२—A-हाइड्रा ; B-टेपवर्म (मनुष्य के अँतड़ियों में रहनेवाला एक कीड़ा) ; C-लीवर फ्लियूक (भेड़ की यकृत में रहनेवाला एक कीड़ा)।

मूँगे इत्यादि के कारण ही बहुत से द्वीप जैसे—मालद्वीप, लंकाद्वीप आदि

बने हैं। इस वर्ग का दूसरा उदाहरण हाइड्रा (Hydra) है जो लगभग एक सेण्टीमीटर बड़ा होता है और पोखरों में घास से सटा हुआ मिलता है (चित्र ६२ A.)।

भागहीन कीड़े (Unsegmented Worms)—इस प्रकार के अधिकतर जीव अपने जीवन के अधिकतर भाग को दूसरों के शरीर के भीतर अथवा उनके बनाये हुए भोजन पर निर्वाह करते हैं। इसका उदाहरण टेपवर्म (Tapeworm); हुकवर्म (Hookworm); राउन्डवर्म (Roundworm); थ्रेडवर्म (Threadworm); लिवरफ्ल्यूक (Liver fluke) इत्यादि हैं। इनमें पूरी अन्नप्रणाली, मुँह और मल-द्वार, और रक्त की नलियों का प्रारम्भ होता है (चित्र ६२ B और C)

टेपवर्म मेंढकों और मनुष्यों के अँतड़ियों में पाया जाता है। मनुष्य के शरीर में रहने वाला तो कई फीट लम्बा, पतले श्वेत डोरे के समान होता है। हुकवर्म भी मनुष्य के अन्न-प्रणाली में पाया जाता है। और लिवरफ्लूक भेड़ों के यकृत में पाया जाता है।

A

B
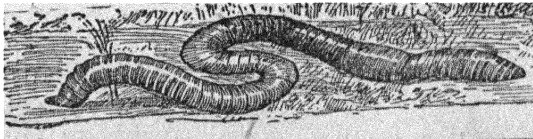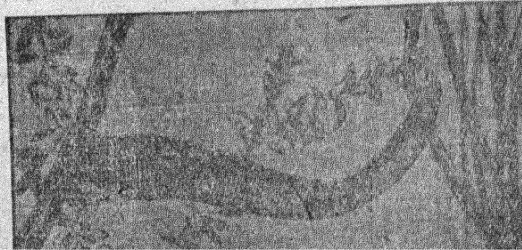
चित्र ६३— A–केचुआ; B–जोंक

ऐनिलीडा (Segmented worms or Annelida)—इस भाग के जीवों का शरीर लम्बा और कई भागों (Segments) में बँटा

रहता है। मुँह और मलद्वार होते हैं। शरीरगुहा, रक्त की ऊपरी और निचली नलियाँ भी होती हैं जिनमें हृदय का नकली स्वरूप होता है। इस नकली हृदय को स्युडोहार्ट (Pseudo-heart) कहते हैं।

इस वर्ग के उदाहरण केचुआ (Earthworm), जोंक (Leech) आदि हैं (चित्र ६३)। केचुआ सर्वदा नीचे की मिट्टी को ऊपर लाता रहता है जिससे भूमि नर्म और उपजाऊ हो जाती है। इस बात को पहले पहल इंगलैंड के रहनेवाले प्राणिशास्त्र के मुख्य विद्वान् चार्ल्स डारविन (Charles Darwin) ने कई वर्षों के प्रयोग के बाद मालूम किया था।

जोंक पोखरों में रहती है और अपने शिकार जैसे भैसे गाय अथवा मनुष्य के रक्त को चूस कर जीवन व्यतीत करती है।
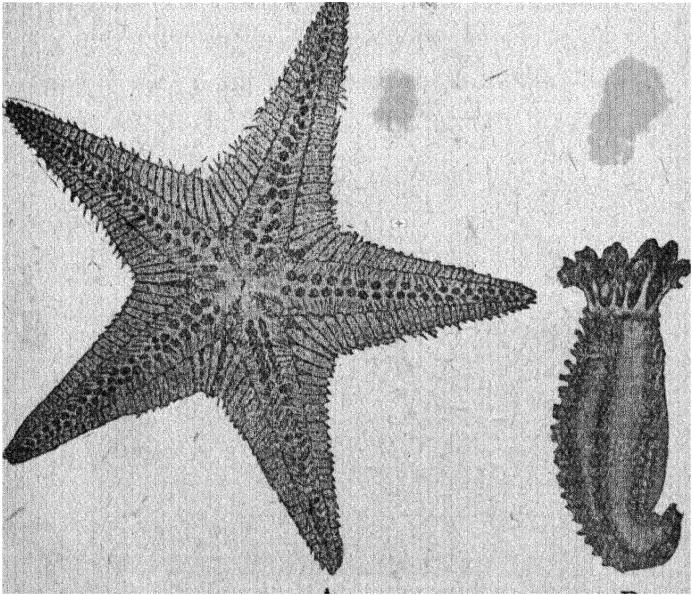
चित्र ६४—A-स्टार मछली; B-समुद्र की जीवधारी ककड़ी

एकिनोडरमेटा (Echinodermata)—इस वंश के सारे जीव

समुद्र में ही पाये जाते हैं। इनका शरीर सुडौल और अन्न-प्रणाली, श्वाँस-यंत्र रक्त की नलियाँ, नाड़ियाँ इत्यादि होती हैं। इसके उदाहरण स्टार-मछलियाँ (Star-fishes); समुद्री जीवधारी ककड़ी (Sea-cucumber) इत्यादि हैं (चित्र ६४)।
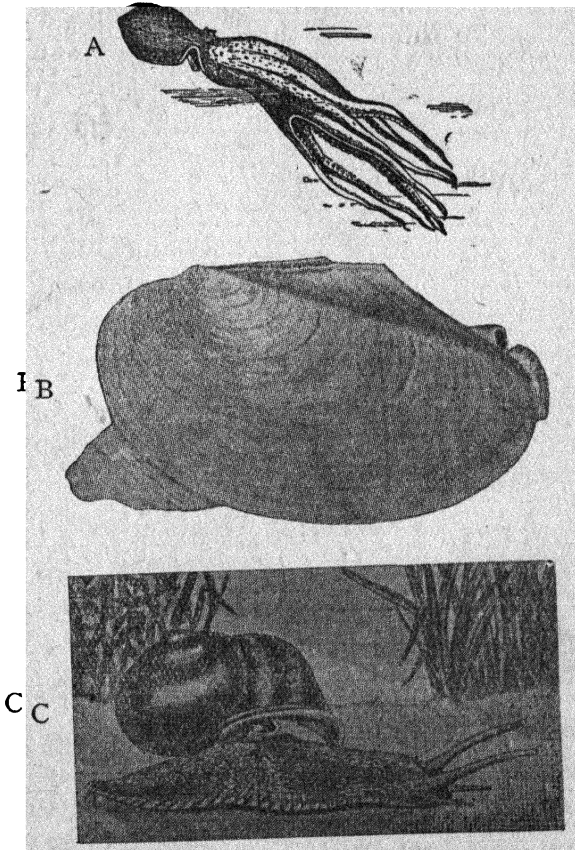
चित्र ६५—A-आक्टोपस; B-सितुही; C-घोंघा।

मालस्का (Mollusca)—इस वर्ग के जीवों के शरीर के चारों ओर

कड़ा ढक्कन होता है। किसी किसी में एक ही ढक्कन होता है जैसे संख (Conch) में और घोंघा (Snail) मे, किसी में दो भी होते हैं जैसे
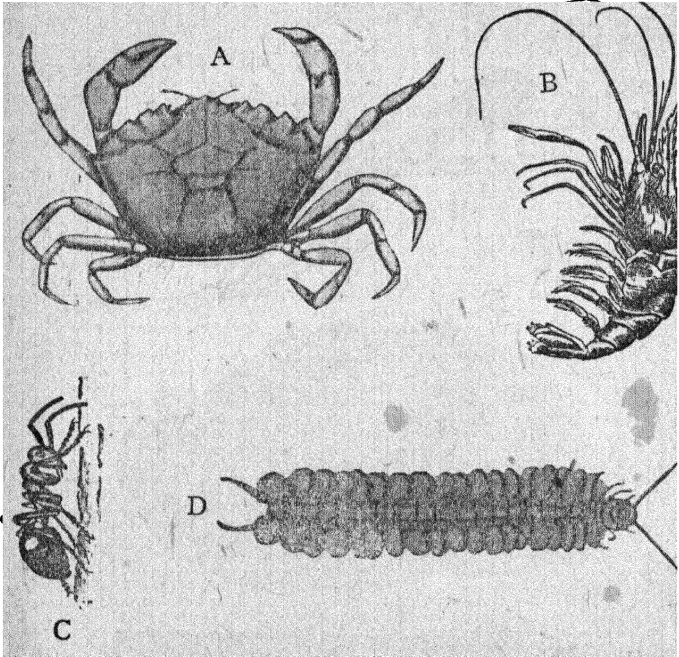
चित्र ६६—भिन्न भिन्न प्रकार के आर्थ्रोपाड्स।
A—केकड़ा; B—झींगा, C—चींटी; D—गोजर।

सितुही (Fresh water mussel), में। इनके मस्तिष्क और नाड़ियाँ होती हैं जो बहुत ही तीव्र होती हैं। इनके शरीर के ऊपर एक प्रकार का चर्म होता है जिससे ऊपर का कड़ा ढक्कन बनता है। इनमें आँखें भी होती हैं (चित्र ६५)।

आर्थ्रोपोडा (Arthropoda)—इस वर्गमें सारे कीड़े मकोड़े मक्खियाँ, तितलियाँ, मकड़ियाँ, बिच्छू, गोजर, केकड़ा, झींगा और चींटी, आदि हैं। इनके शरीर के तीन भाग—सर, धड़ और पेट (Head,

thorax and abdomen) होते हैं। नाड़ियाँ और मिश्रित आँखें (Compound eyes) होती हैं। इनमें छ पैर या किसी किसी में आठ पैर भी चलने के लिए होते हैं। किसी में स्पर्श प्रतीत करने के लिए ऍन्टेनी (Antenæ) और अगले पैर में पकड़ने का चिमटा भी होता है। इनमें से बहुत से हम लोंगो के हानि के कारण भी हैं, जैसे—मक्खियाँ मच्छड़, बिच्छू, इत्यादि। बहुत से लाभप्रद भी हैं जैसे रेशम का कीड़ा झींगा इत्यादि (चित्र ६६)।

Chordata.

इस वर्ग की मुख्य पहचान यह है कि इसके जीवों में मस्तिष्क और नाड़ियाँ शरीर के ऊपरी भाग (Dorsal side) में होती है। इन जानवरों के जीवन के आरम्भिक दशा में एक ऐसा भाग पाया जाता है जिसे नोटोकार्ड (Notochord) कहते हैं जो ऊँचे जीवों में रीढ़ की हड्डी के रूप में बदल जाता है। यही कारण है कि ऐसे ऊँचे जीवोंको वर्टीब्रेट्‌ह (Vertebrates) कहते हैं जो कार्डेटा के छोटे जीवों से भिन्न हैं। इनके उत्पत्ति के समय साँस लेने के लिए गिल्स (Gills)भी होते है जो मछलियों में सर्वदा रहते हैं। इनमें हृदय नीचे (Ventral side) रहता है और आँखे बहुत तीव्र होते हैं।

(१) छोटे कार्डेट्स (Lower chordates)—ये समुद्र में ही पाये जाते हैं। इनमें हड्डी का भाग नहीं होता और शेष सब भाग पाये जाते हैं। किसी किसी में नरम हड्डी का एक ऊपरी ढाँचा पाया जाता है। इसके उदाहरण बॅलेनोग्लासस (Balano glossus) और ऍम्फि-आक्सस (Amphioxus) हैं।

(२) बड़े कार्डेट अथवा रीढ़वाले प्राणीमात्र (Vertebrates)—इनमें शरीर के सब भागों के अतिरिक्त पीठ में रीढ़ की हड्डी भी होती है और शरीर में भी हड्डियाँ होती हैं। सारे अंग मजबूत और दृढ़ होते हैं। इस वर्ग के चार भाग हैं।

मछलियाँ (Fishes)—इस वर्ग में भिन्न भिन्न प्रकार की मछलियाँ

आती हैं। इनकी मुख्य पहचान यह है कि इनमें साँस लेने के लिए गिल्स होते हैं; पूँछ दृढ़ माँसपेशियों की बनी होती है। बहुतों के शरीर पर चोंई (Scales) होते हैं। इनके हृदय के दो ही भाग होते हैं। जिसमें केवल अशुद्ध रक्त ही रहता है। मछलियाँ भी दो प्रकार की होती हैं। एक वे
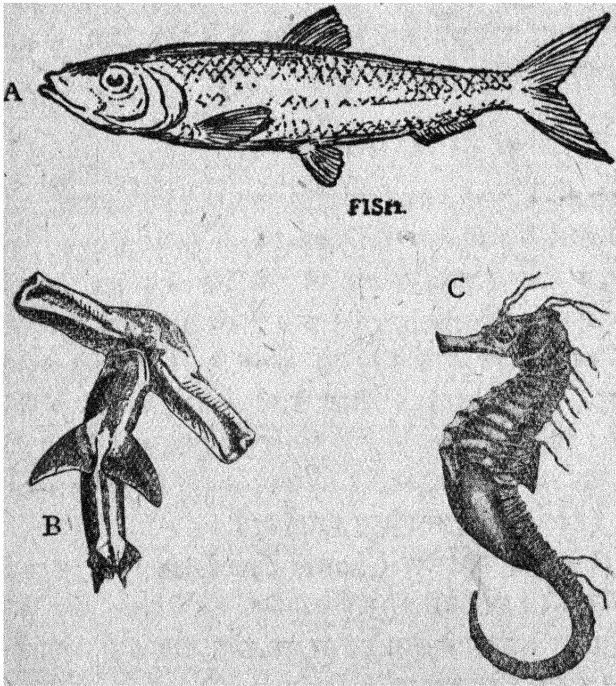
चित्र ६७—भिन्न भिन्न प्रकार की मछलियाँ—
A–रोहू; B–समुद्र की हथौड़ी के समान मछली; C–समुद्री घोड़ा जो लगभग ४ अथवा ५ इंच बड़ा होता है।

जिनमें केवल कार्टिलेज ही रहता है, जैसे शार्क (Shark) और दूसरे वे जिनके शरीर में हड्डियाँ भी होती हैं, जैसे रोहू इत्यादि (चित्र ६८)।

जलपशु (Amphibians)—इनमें मेंढ़क, टोड इत्यादि हैं

चित्र ६८—रेप्टाइल्स-A, साँप; B घड़ियाल; C गिरगिट;
D उड़न छिपकली।
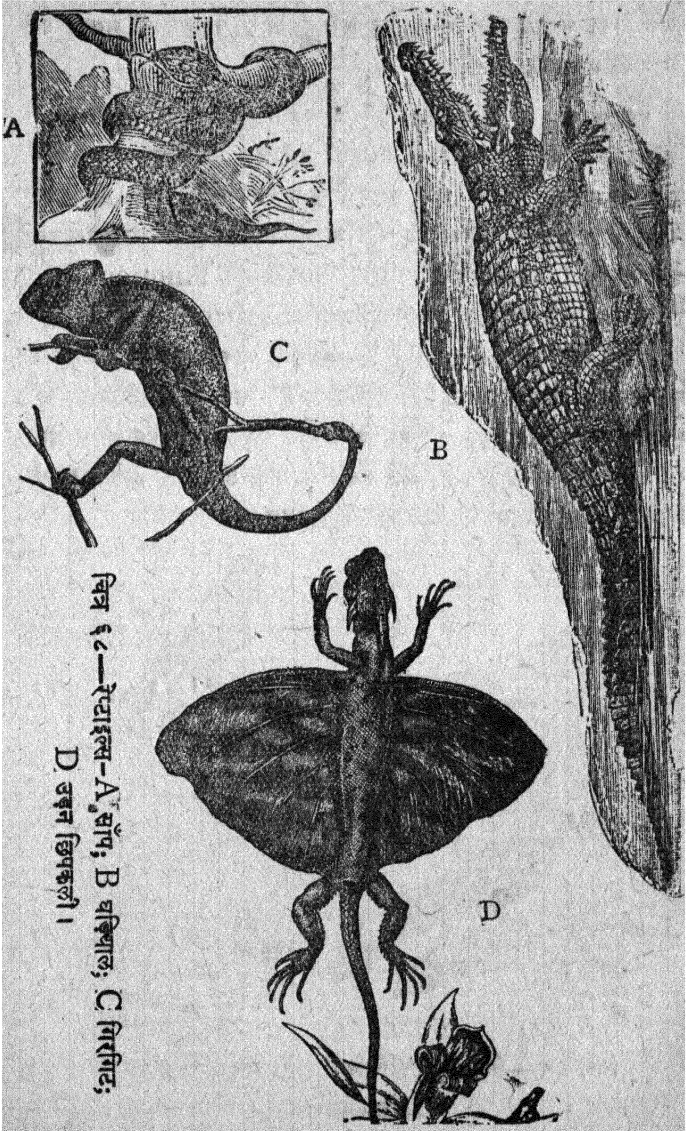
जिनके विषय में तुम भली भाँति पढ़ चुके हो और पहचान की मुख्य बातें भी तुमको मालूम हैं।

रेप्टाइल्स (Reptiles)—प्राणिमात्रों में पानी को बिलकुल छोड़ने वाले पहले जीव इसी वर्ग में पाये जाते हैं। इनमें से बहुत से जीव ऐसे हैं जो अपना जीवन भूमि पर ही बिता सकते हैं; जैसे—छिपकली, गिरगिट, गोह इत्यादि। ये अंडे देते हैं जिनकी उत्पत्ति में दो मुख्य झिल्लियाँ पाई जाती हैं। इनको एम्नियान और ऍलेन्टॉयस (Amnion and Allantois) कहते हैं जिनसे एम्ब्रियो (Embryo) श्वाँस लेते रहते हैं। ये ठंढे रक्त वाले (Cold-Blooded) जीव हैं क्योंकि जलवायु के अनुसार इनका तापक्रम रहता है। कहा जाता है कि बहुत पहले इस पृथ्वी पर केवल ये ही जीव रहते थे जब कि मनुष्य की उत्पत्ति हुई भी न थी। इनके शरीर पर स्केल्स होते हैं; और इनके हृदय के तीन भाग होते हैं परन्तु किसीकिसी में चार भाग भी पाये जाते हैं (चित्र ६९)।
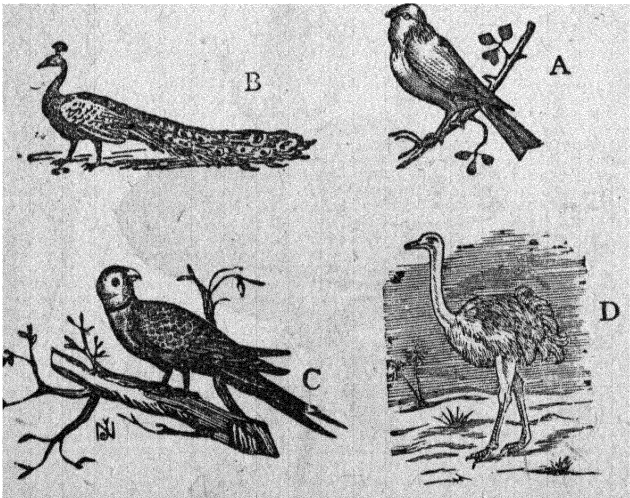
चित्र ६९—चिड़ियाँ–A चिड़िया ; B मोर ; C तोता ; D शुत्रमुर्ग।

चिड़ियाँ (Aves)—इस वर्ग के उदाहरण सब प्रकार की चिड़ियाँ हैं। इनके शरीर का तापक्रम बहुत अधिक रहता है परन्तु ऋतु परिवर्तन के साथ साथ इनके शरीर के तापक्रम में कुछ भी परिवर्तन नहीं होता। इसलिये ये उष्ण रक्त वाले (Warm-blooded) जीव हैं। इनके हृदय में चार भाग होते हैं। फेफड़े और शरीर के सारी माँस-पेशियाँ बहुत दृढ़ होती हैं। श्वाँस लेने के लिये दृढ फेफड़े के अतिरिक्त हवा रखने के लिये झिल्लीदार थैलियाँ (Air sacs) भी होती हैं। इनके अंडों के बढ़ने में भी वे दो झिल्लियाँ पाई जाती हैं जो रेप्टाइल्स के अण्डे में पायी जाती हैं। अगला अंग (Fore-limbs) डैनों के रूप में परिवर्तित हो जाता है (चित्र ६९)। इनकी हड्डियाँ खोखली होती हैं जिससे वे सरलता से वायु में उड़ सकें। इनके मुखमें दाँत नहींहोते इसलिये भोजन को पीसने के लिये इनमें आमाशय से सटा हुआ एक खास अंग होता है जिसको गिजर्ड (Gizzard) कहते हैं। बहुत सी चिड़ियाँ ऐसी भी हैं जिनमें उड़ने की शक्ति धीरे धीरे लुप्त हो गई है; जैसे शुतुर्मुग, कीवी। ऐसा कहा जाता है कि चिड़ियाँ और मैमल्स (Mammals) की उत्पत्ति रेप्टाइल्स से ही हुई है जिसके उदाहरण में एक ऐसी चिड़िया की हड्डी मिली है जिसकी कुछ बातें चिड़ियों
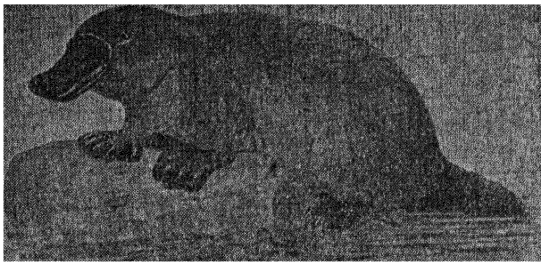
चित्र ७०—डकबिल

से और कुछ रेप्टाइल्स से मिलती हैं। उस चिड़िया को आर्किऑप्टरिक्स (Archæopteryx) कहते हैं। अब यह पृथ्वी पर नहीं पायी जाती।

मैमल्स (Mammals)—इनके शरीर पर बाल और अपने बच्चों

चित्र ७१—कंगारू
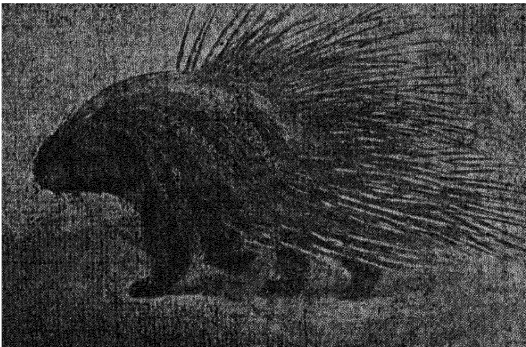
चित्र ७२—साही

को दूध पिलाने के लिये थन (Mammary glands) होते हैं। श्वाँस लेने में सहायता देने के लिये इनके शरीर में एक दृढ़ मांस-पेशी
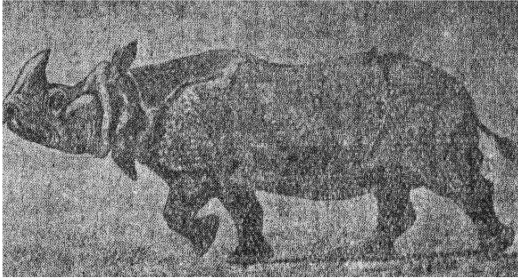
चित्र ७३—गैंडा

(महाप्राचीर पेशी) होती है जो भितरी शरीर को दो भागों में विभाजित कर देती है। हृदय में चार भाग होते हैं। शरीर का तापक्रम एक समान

चित्र ७४—बन्दर

सर्वदा रहता है और लाल रक्त के अणु में कोई न्यूक्लियस नहीं होता। कुछ मैमल्स ऐसे भी है जो अंडे देते हैं परन्तु और बातों में वे मैमल्स से मिलते हैं

ANIMALS IN RELATION TO MAN

अध्याय २२

मनुष्य को लाभ पहुँचाने वाले जानवर

(Useful Animals)

छोटे जीवों में से हमें पॉरिफेरा वर्ग से लाभ है। हम स्पंज अपने टेबुल पर पानी रखने के लिये बहुधा काम में लाते हैं। सीलेन्ट्रेट में से उदाहरण रूप हम भिन्न भिन्न रंग के मूँगे को भलीभाँति जानते हैं। यह गहनों में लगाने अथवा किसी स्थान को और सुन्दर बनाने के लिये हर एक में पाये जाते हैं। पर सब से अधिक लाभ पहुँचाने वाला जीव केंचुआ है जो ऐनीलिडा वर्ग का है। इङ्गलैण्ड का बहुत बड़ा विज्ञानवेत्ता चार्ल्स डारविन ने अपनी जवानी की अवस्था में कुछ पत्थर के टुकड़े अपने खेत में फेंक दिये थे। बीस वर्ष के बाद वे भूमि के सतह के लगभग ६ इञ्च नीचे पाये गये। उसने इसका कारण तलाश किया और मालूम किया कि उस भूमि में बहुत से केंचुए थे जो नीचे की मिट्टी को खाकर ऊपर अपने शरीर से निकाल कर छोड़ देते थे। इस प्रकार की मिट्टी को केंचुए का मल (Earthworm's castings) कहते हैं। इस प्रकार भुरभुरी की हुई मिट्टी
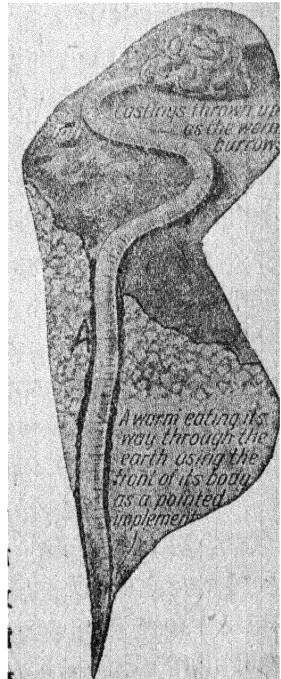
चित्र ७५—केंचुआ और उसका मल

अधिक उपजाऊ हो जाती है। इस भाँति केंचुआ किसानों का बड़ा मित्र है। यह प्रत्येक साल लाखों मन मिट्टी नीचे से ऊपर किया करता है (चित्र ७५)।

एक ही केंचुए में नर और मादा दोनों अंगें होते हैं। इसके शरीर में बहुत से भाग (Segments) होते हैं और १३ या १४ भागों के बाद एक चिकना भाग होता है जिसको क्लाइटेलम (Clitellum) कहते हैं। नीचे की ओर कुछ अंडे इत्यादि देने के छिद्र (Genital pores) होते हैं। इसमें श्वाँस का लेना वास्तव में हवा की ऑक्सीजन को चर्म द्वारा प्रवेश (Diffusion) करना और कारबन डाई-आक्साइड का इसी प्रकार निकल जाना है।

मॉलस्का के भी बहुत से उदाहरण हैं जो मनुष्य के लाभ के हैं जैसे मोती का सीप, शंख इत्यादि। मोती का सीप (Pearl-oyster) अपने भीतरी झिल्ली के द्वारा अन्दर मोती बनाता है जिसकी खोज में पनडुब्बे समुद्र में बराबर डुबकी लगाया करते हैं। कभी कभी ऐसा अच्छा मोती मिल जाता है जिसको बेंच कर इन लोगों को पर्याप्त धन मिल जाता है। शंख को भी तुमने देखा होगा जो हिन्दुओं के त्योहार अथवा पूजा में बजाया जाता है।

अर्थ्रोपोड जाति के बहुत से जीव हम लोगों को हानि पहुँचाते हैं तथापि बहुतों से हम लोगों को लाभ भी हैं जैसे झींगा (Prawn), गोडरा (Lobster), केकड़ा (Crab) इत्यादि जिन्हें बहुत से लोग खाते हैं। ये जानवर पानी को अशुद्ध करनेवाले कीड़ो मकोड़ो को भी खा लेते हैं। इनके अतिरिक्त बहुत से कीड़े हैं जैसे तितली, मधुमक्खी, रेशम का कीड़ा इत्यादि जिनसे मनुष्य मात्र को बहुत लाभ होता है।

तितली (Butterfly)—तुमने तितलियों को देखा होगा। वे भिन्न भिन्न प्रकार की होते हैं। (चित्र ७६)। उनका रंग, कद, पंख अनेक प्रकार के होते हैं। इनका मुख्य काम फूलों को पालिनेट (Pollinate) अथवा सेंचन करना है। परन्तु एक तितली सारे फूलों पर नहीं जाती। किसी एक प्रकार के फूल को सेंचन करने के लिये एक निश्चित प्रकार की तितली होति है जो उसी के पत्ती अथवा फूल पर अंडा भी देती है।

तितलियों का शरीर तीन भागों में बँटा रहता है। (१) सर

जिसमें आगे की ओर दो छूने के यंत्र (Antenæ or feelers) होते हैं; दो आँखें सर के दोनों ओर होती हैं और मुँह के जबड़े एक
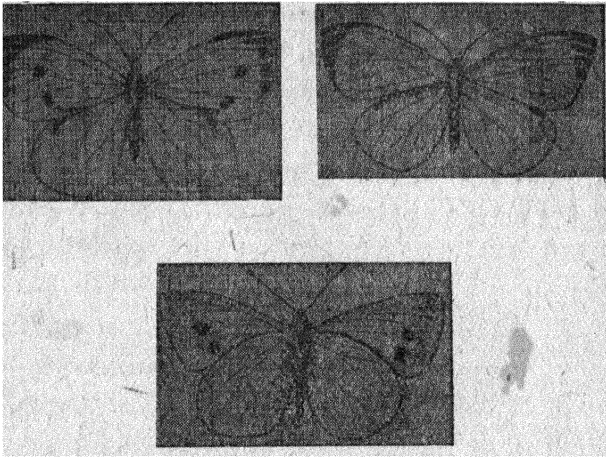
चित्र ७६—तितलियाँ

नीचे होते हैं जिसमें चूसने के लिए एक लम्बी नली (Proboscis) होती जिसको वह सिकोड़ सकती है। (२) छाती (Thorax) जहाँ से तीन दाहिनी ओर से और तीन बाईं ओर से पैर निकलते हैं और दो पंख दाईं ओर और दो बाईं ओर रहते हैं। (३) धड़ अथवा पिछला भाग (Abdomen), जिसमें कोई भी अंग नहीं लगा रहता।

जब तितली पत्तों पर हजारों की संख्या में अण्डे दे चुकती है तो कुछ ही दिनों बाद प्रत्येक अण्डे में से एक चलता फिरता जीव निकल आता है जिसको लारवा (Larva) कहते हैं। तितली के इस लारवा को केटरपीलर (Caterpillar) कहते हैं जो पत्तियों को बड़े तीव्रता के साथ खाता है। इस तरह पत्तियों को वह बहुत हानि पहुँचाता है। कुछ दिनों के बाद इसका चलना फिरना बन्द हो जाता है और यह आराम से

एक स्थान पर मुर्दे की भाँति निश्चेष्ट होकर पत्ती से चिपट जाता है। इसको प्यूपा अथवा क्राइसेलिस (Chrysalis) कहते हैं। इसके अन्दर बहुत से परिवर्तन होते हैं और कुछ दिनों के पश्चात् एक तितली निकल आती है।

शहद की मक्खी (Honey-bee)—इसके शरीर के भी उतने ही भाग होते हैं जितने तितली के। परन्तु इसके मुँह का प्रोबासिस छोटा होता है। इसकी ज्ञानइन्द्रियाँ बड़ी तीव्र होती हैं। इसमें जात पांत मनुष्य के ही भांति होता है। प्रत्येक जाति में तीन प्रकार की मक्खियां होती हैं जो मिलकर पूरे घरबार को लाभ पहुँचाने में काम किया करती हैं। इनमें एक रानी (Queen) होती है, कुछ नर (Drones) होते हैं और बहुत से काम करने वाली (Workers) होती हैं (चित्र ७७
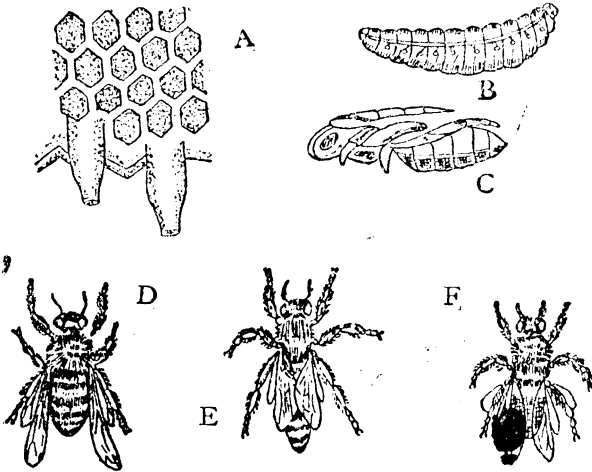
चित्र ७७—शहद की मक्खी की जीवनी—A छत्ते का एक भाग; B लारवा (केटरपीलर); C प्यूपा (क्राइसेलिस); D रानी; E नर (ड्रोन); F काम करनेवाली।

D, E, F)। रानी एक ही होती है जिसका धड़ बड़ा और कोमल होता है। इसका काम प्रत्येक छत्ते की कोठरियों में अण्डा देना है। यह एक दिन

में कई सहस्त्र अण्डे दे सकती है और अपने जीवन में लाखों की संख्या में अण्डे दे देती है। नर मक्खियां अर्थात् ड्रोन्स का धड़ चौड़ा होता है और इसमें डंक (Sting) नहीं होता। इसका काम केवल अण्डों के लिए स्पर्म्स देना है जो अण्डों में जीवन का संचार करते हैं। जिन अण्डों से स्पर्म्स मिलने नहीं पाते उनसे ड्रोन्स पैदा होते हैं।

काम करनेवाली मक्खियाँ इन दोनों से छोटी होती है लेकिन बहुत अधिक होती हैं। इन्हीं में डंक भी रहता है। इनकी भीतरी बनावट रानी की ही भाँति होती है परन्तु इनमें अण्डे देने की शक्ति नहीं रहती। ये उन अण्डों से पैदा होती हैं जिनसे स्पर्म्स मिल जाता है। इनका काम छत्ता और उसकी कोठरियों का बनाना है जिसके बनाने में ये बड़े से बड़े इन्जीनियर की बुद्धि से भी बढ़कर अपना दिमाग लगाती हैं (चित्र ७७)। यह छत्ता मोम से बनाया जाता है। कोठरियों में ठीक ठीक नपी हुई छः दिवारें होती हैं। मोम को ये अपने पेट से और कुछ शहद से जिसे ये इकट्ठा करती रहती हैं, निकालती हैं। नेक्टर (Nectar) को जिसकी खोज में ये प्रत्येक फूल पर जाया करती हैं अपने पेट के एक भाग में रख लेती हैं, जहाँ यह बदल कर शहद हो जाता है। छोटे छोटे लारवा इसी शहद को खाते हैं परन्तु कुछ समय के पश्चात् ये शहद से मिला पॉलन (Pollen) और शहद खाते हैं। परन्तु रानी केवल शहद पर ही निर्वाह करती है।

काम करने वाली मक्खियाँ नेक्टर के अतिरिक्त अपनी पिछली टाँगों में पॉलन को भी इकट्ठा करती हैं। इस स्थान को पॉलन की थैली (Pollen sac) कहते हैं। (तुम शहद की मक्खी का एक छत्ता और इन तीनों प्रकार की शहद की मक्खियों को स्वयं देखो और पूरा ब्योरा लिखो)। अंडे कुछ दिनों के पश्चात् लारवा और फिर प्यूपा में बदल जाते हैं जिनमें से कुछ दिनों के बाद पूरी शहद की मक्खी निकल आती हैं (चित्र ७७ B, C)। इन मक्खियों से हम लोगों को मोम और शहद मिलते हैं जो बड़े काम के हैं।

रेशम का भौंरा (Silk Moth)—जिसको हम रेशम का कीड़ा कहते हैं वह वास्तव में केटरपीलर है। इसकी भी उत्पत्ति वैसे ही

होती है जैसे तितली की। रेशम उत्पन्न करने वाली एक विशेष प्रकार की तितली होती है जिसको रेशम का भौंरा कहते हैं। प्रत्येक प्रकार का भौंरा एक निश्चित प्रकार के पौधे की पत्तियों पर अंडे देती है जैसे शहतूत वाली शहतूत की ही पत्ती पर अंडे देती है। अंडे कुछ दिनों के बाद केटरपीलर में बदल जाते हैं जो शहतूत की पत्तियों को खूब खा-खाकर बढ़ते हैं और कुछ दिनों के पश्चात् सुस्त होकर अपने चारों ओर रेशम बुनकर एक ककून (Cocoon) बनाकर उसी में बैठे रहते हैं। कई दिनों तक इस प्रकार रहकर ककून के ऊपरी भाग को काटकर भौंरा निकल आता है।

इस भौंरा से हम लोगों को रेशम मिलता है इसलिये भारतवर्ष, चीन, जापान, इटली, टर्की, और यूनान में इसको लोग पालते हैं और रेशम का बड़ा व्यापार करते हैं। रेशम निकालने के लिये ये लोग ककून को भौंरा निकलने के पहले ही खौलते हुए पानी में छोड़ देते हैं अथवा गर्म कर देते हैं ताकि प्यूपा मर जायँ। तत्पश्चात् रेशम के सूत को खींचकर गोली बना लेते हैं।। मद्रासी टसर और काशी सिल्क का कपड़ा तुमने कभी न कभी पहना ही होगा। ये इसी प्रकार से प्राप्त रेशों से बनाए जाते हैं।

मछलियाँ (Fishes)—मछलियाँ भोजन के रूप में प्रयोग की जाती हैं। नदियों अथवा समुद्रों के निकट रहनेवाले लोगों का तो यह मुख्य भोजन है। मैदान के बहुत से रहने वाले भी इसको खाते हैं। यह बहुत हलका और सस्ता भोजन है। मल्लाहों का जीवन ही इस पर निर्भर करता है। मछलियों से तेल भी निकाला जाता है। तेल निकालने के पश्चात् जो कुछ बच जाता है उसको खाद के रूप में उपयोग किया जाता है। तेल का उदाहरण काड लिवर तेल (Cod liver oil) है जो काड मछली से निकाला जाता है। यह तेल रोगियों को दिया जाता है।

मेंढक इत्यादि (Amphibians)—इस वर्ग का उदाहरण मेंढक है जिसके विषय में तुम पहले ही पढ़ चुके हो। यह कीड़े-मकोड़ों को खाकर अड़ोस-पड़ोस को स्वच्छ रखने का प्रयत्न करता है। टोड भी बाग के बहुत से कीड़ों को बहुधा खा जाता है। ब्रह्मा के निवासी मेंढक को खाते भी हैं। योरप और अमेरिका के कुछ भागों के लोग भी इसको खाते हैं।

रेप्टाइल्स (Reptiles)—छिपकिली, गिरगिट आदि भी बहुत से कीड़ों को खा जाते हैं। मल्लाह और अन्य असभ्य जातियाँ जैसे मुसहर लोग साँप और कछुआ को खाते भी हैं। गोह के चमड़े से छोटे छोटे ढोल के परदे और घड़ियाल के चमड़े से बक्स इत्यादि भी बनाये जाते हैं। बड़े बड़े कछुए के ऊपरी ढाल से चश्मे का फ्रेम भी बनाया जाता है।

चिड़ियाँ (Birds)—चिड़ियाँ भी हम लोगों के बहुत काम की हैं। बहुत सी चिड़ियों का शिकार मनुष्य द्वारा किया जाता है और मनुष्य उन चिड़ियों को खाने के काम में भी लाता है। चिड़ियों के पंखों को लोग टोपी या कपड़े में लगाते हैं। मनुष्य कुछ चिड़ियों को सुन्दरता के लिये पालता है और कुछ को गाने अथवा नचाने के लिये ; जैसे— तोता, मोर इत्यादि। कुछ चिड़ियो और उनके अण्डों को खाने के लिये भी लोग पालते हैं; जैसे—मुर्गी, तीतर इत्यायि। कुछ चिड़ियाँ जैसे नीलकंठ, भुजंग इत्यादि खेतों को हानि पहुँचाने वाले बहुत से कीड़ों और लारवा को खा जाते हैं। कुछ चिड़िया जैसे गिद्ध, चील इत्यादि सड़े गले और मरे हुए जीवों को खाकर स्थान को स्वच्छ कर देती हैं। फल खाने वाली कुछ चिड़ियाँ जैसे हारिल, तोता कुछ फलों के बीज को न पचा सकने के कारण भिन्न भिन्न स्थानों में मल के साथ बीज को गिरा देती हैं और इस प्रकार बीज के बिखरने में सहायता पहुँचाती हैं।

मैमल्स (Mammals)—इस जाति के बहुत से जीवों से मनुष्य की बड़ी मित्रता है। दूध के लिये गाय, भैंस, बकरी इत्यादि पाले जाते हैं। इनसे चमड़ा भी मिलता है जिससे जूता, बक्श इत्यादि बनाये जाते हैं। मांसाहारियों के लिए बकरा, भेंड़ा इत्यादि सरलता से प्राप्त हो जाते हैं। भेंड और अन्य जीवों के ऊन या बालों के कपड़े भी बनते हैं। बहुत से जानवर जैसे घोड़ा, हाथी, ऊँट, खच्चर इत्यादि लड़ाई में लड़ने अथवा बोझ ढोने के लिये पाले जाते हैं। घोड़ा और बैल खेत जोतने के लिये भी काम में लाये जाते हैं। कुछ जानवर पालतू हैं; जैसे कुत्ता, बिल्ली आदि जो घर की रखवाली करते हैं और चोर, बाहरी जीवों जैसे साँप; चूहा आदि से घर को

सुरक्षित रखते हैं। कुछ जानवरों को लोग पैसा पैदा करने की इच्छा से भी पालते हैं; जैसे बन्दर, भालू, शेर इत्यादि।

अभ्यास

१. यदि तुम्हें तितली के अण्डे दे दिये जायँ तो तुम उनसे किस प्रकार पूरी तितली प्राप्त करोगे। तितली की जिवनी के सभी वर्गों का वर्णन करो। [H. S. 1938]

२. मनुष्य को लाभ पहुँचाने वाली किन्हीं दो प्राणिमात्रों का नाम बताओ। प्रत्येक के बारे में कुछ लिखो और बतलाओ वे किस प्रकार लाभ दायक हैं। [H. S. 1938]

३. निम्नांकित प्राणिमात्र मनुष्य के किस लाभ के हैं—

कौआ ; कुत्ता ; गाय। [H. S. 1939]

४. रेशम के भौंरे की वाहरी बनावट और जीवनी का वर्णन करो। उससे रेशम किस भाँति प्राप्त किया जाता है?

५. शहद की मक्खी के छत्ते के भीतर की विविध जीवनी का विवरण दो।

६. निम्नलिखित पर नोट लिखो :—

काकून ; मछलियाँ ; घड़ियाल ; केटरपीलर ; और घोड़ा।

७. चिड़ियाँ मनुष्य को किस प्रकार लाभ पहुँचाती है?

अध्याय २३

हानि पहुँचाने वाले जानवर (Harmful Animals)

मनुष्य को लाभ पहुँचाने वाले जानवरों के अतिरिक्त बहुत से जीव हानि भी पहुँचाते हैं बल्कि उसके जीवन को अंत करने के लिये भी उतारू हो जाते हैं। मनुष्य और इनसे बराबर लड़ाई होती रहती है। परन्तु मनुष्य अपनी बुद्धि के बल से उनको प्रायः हराया करता है। कभी कभी उसकी भी हार हो जाती है और तब उसकी मृत्यु हो जाती है। इन सारी बातों से हम यह देखते हैं कि जितने जीव या पौधे हैं उन सब में एक घनिष्ट सम्बन्ध है चाहे वह हानि पहुँचाने के रूप में हो अथवा लाभ के। इस पारस्परिक सन्बन्ध (The web of life) से कोई भी अलग नहीं है।

हानि पहुँचाने वाले जीवों में से कुछ तो ऐसे होते हैं जो कभी कभी मनुष्य के रक्त, चर्म या अन्य अंगों अथवा उसके भोजन पर अपना निर्वाह करते हैं। कुछ ऐसे हैं जो मनुष्य ही पर अपने को निर्भर कर देते हैं। इसमें से कुछ नाम मात्र को हानि पहुँचानेवाले हैं और कुछ उनका अन्त ही कर देते हैं। ऐसे जीवों को पॅरासाईट्स (Parasites) कहते हैं। इनका सम्बन्ध दूसरे जानवरों के जीवन के साथ स्वयं अपने ही लाभ के लिये होता है अर्थात् ये उन जानवरों को हानि पहुँचाते हैं। इसके विपरीत उस दशा को जिसमें दो या दो से अधिक जीवों का सम्बन्ध एक दूसरे को लाभ पहुँचाने के लिये होसिम्बायोसिस (Symbiosis) कहते हैं। इन दोनों प्रकार के उदाहरण प्राणि-मात्र और वनस्पति-मात्र दोनों में पाये जाते हैं।

मनुष्य पर हर समय निर्वाह न करने वाले पॅरासाईट्स को अस्थायी पॅरासाईट्स (Occasional Parasites) कहते हैं; जैसे खटमल; मच्छर इत्यादि। परन्तु हर समय मनुष्य पर ही जीवन व्यतीत करने वालों को स्थायी परासाईट्स (Facultative Parasites) कहते हैं; जैसे

मलेरिया का किटाणु। ऐसे परासाईट जो शरीर के ऊपरी भाग पर ही निर्वाह करते हैं वे एक्टोपॅरासाईट्स (Ectoparasites) कहलाते हैं और जो शरीर के भितरी भागों में निर्वाह करते हैं वे एण्डोपरासाइट्स (Endo-parasites) कहलाते हैं।

कुछ ऐसे भी पॅरासाईट्स हैं जिनके रहने से शरीर को कोई हानि नहीं होती। परन्तु यदि वे ही शरीर के किसी दूसरे भाग में पहुँच जायँ तो बहुत हानि हो जाती है अथवा यदि ये दूसरे जीवों के शरीर में पहुँच जायँ तो उन्हें भी हानि पहुँचा सकते हैं। यदि हानि पहुँचाने वाले पॅरासाइट्स शरीर में प्रवेश कर जाते हैं तो वे एक प्रकार का विष (Toxin) उत्पन्न करते हैं जिससे शरीर को बहुत हानि पहुँचती है। इसके अधिक हो जाने से शरीर का अन्त भी हो सकता है। परन्तु प्रकृति ने ऐसे कीटाणुओं को कुछ अंशों तक नष्ट करने के हेतु मनुष्य के शरीर में श्वेत अणु दिये हैं जो शरीर में इन कीटाणुओं से विष फैलने के पहले ही उनको मार डालने का प्रयत्न करते हैं। लड़ाई घमाशान होती है। उसमें से यदि श्वेत अणु जीत जाते हैं तो शरीर को कोई हानि नहीं होती परन्तु यदि कीटाणु जीतने लगते हैं तो शरीर में विष फैलने लगता है और मनुष्य की दशा प्रतिदिन बिगड़ती जाती है और अन्त में उसकी मृत्यु हो जाती है।

इसके अतिरिक्त हमारे शरीर में लिम्फेटिक सिस्टम (Lymphatic system भी होता है जिसमें श्वेत तरल पदार्थ भरा रहता है और जो रक्त से कुछ सम्बन्ध रखता है। जिस प्रकार का विष शरीर में फैल रहा है उसी का उल्टा या दबाने वाला विष (Anti-toxin) यह पैदा करता है ताकि इससे मिलकर विष का प्रभाव नष्ट हो जाय। अधिकतर यह भी सफल नहीं होता। इसलिये बहुत से रोगों के लिये पहले से ही टीका या छापा (Inoculation or Vaccination) के रूप में विष शरीर में दे दिया जाता है। यह उन्हीं किटाणुओं को पालकर बनाया जाता है। कुछ कीटाणु गाय के थन में भी पाले जाते हैं जैसे चेचक के कीटाणु (Small-pox germs)। ठीक समय पर थन चीर कर उसे सावधानी से निकाल लेते हैं और उसी से वेक्सीन (Vaccine) बनाकर प्रत्येक स्थान पर

भेज देते हैं। यह उसी कार्य के लिए बने हुए अस्पतालों में ही तैयार होता है। इन्हें पास्तूर इन्स्टिट्यूट (Pasteur Institute) कहते हैं।

प्रोटोज़ुआ (Protozoa)—इस वर्ग के बहुत से कीटाणु मनुष्य के शत्रु हैं। इनमें से दो विशेषकर हैं—(१) अमीबा (Amoeba) (२) मलेरिया का कीटाणु (Malarial parasites)।

अमीबा (Amoeba)—अमीबा कई प्रकार के होते हैं परन्तु दो प्रकार के हीमनुष्य को अधिक हानि पहुँचाते हैं। एक अमीबा से लाल और दूसरे से सफेद पेचिस (Dysentry) होती है। इस बीमारी में मल फेन के सदृश्य होता है। यह फेन लाल होता है अथवा सफेद। प्रायः दही खा लेने से यह रोग ठीक हो जाता है। इसमें शरीर सुस्त पड़ जाता है। कमजोरी मालूम होती है और दिन रात में कई बार मल त्याग करना पड़ता है यद्यपि मल साफ नहीं होता। इससे बचने के लिए पानी साफ, उबाला हुआ पीना चाहिए अथवा लाल पोटाश (Potassium permanganate) डाला हुआ पानी पीना चाहिए।

मलेरिया का कीटाणु (Malarial Parasite)—इस कीटाणु का जीवन स्वतन्त्र नहीं है। यह मच्छड़ के आमाशय या लार की थैलियों में अथवा मनुष्य के रक्त के लाल अणु में रह सकता है। दूसरी दशा में यह मनुष्य में बीमारी उत्पन्न करता है जिसको अंतरिया अथवा मलेरिया कहते हैं। मच्छड़ के शरीर में रह कर यह उसको कोई हानि नहीं पहुँचाता। इसलिये मच्छड़ इस कीटाणु का पहला अतिथि (Primary host) और मनुष्य दूसरा (Secondary host)। इसके अतिरिक्त यह हर प्रकार के मच्छड़ो में नहीं रहता और न तो सारे प्रकार के मच्छड़ों द्वारा फैलाया ही जा सकता है। एक विशेष प्रकार के मच्छड़ के द्वारा जिसको एनॉफलीज (Anopheles) कहते हैं, यह मनुष्य में बीमारी लाता है। फैलाने के कार्य को भी केवल मादा ही करती है। क्योंकि उसको अण्डे देने होते हैं इसलिए उसे भोजन के लिए मनुष्य का रक्त चूसने की आवश्यकता पड़ती है। शायद इसीलिये मादा एनॉफलीज़ मच्छड़ का मुँह (Proboscis) लम्बा और नोकीला बना रहता है।

मलेरिया के कीटाणु को प्लाज़मोडियम (Plasmodium) कहते हैं। जब कीटाणु-ग्रसित मादा-अनाफलीज़-मच्छड़ मनुष्य के रक्त को चूसती है तो अपने लार वाली थैली से कुछ लार भी रक्त में मिला देती है। यदि दुर्भाग्यवश इन थैलियों में इस कीटाणु का वास हुआ तो यह भी लार के साथ रक्त में चला जाता है और रक्त के लाल अणु में घुसने का प्रयत्न करने लगता है। सफेद अणु इनको निगल-

चित्र ७८ — मलेरिया के कीटाणु की जीवनी।
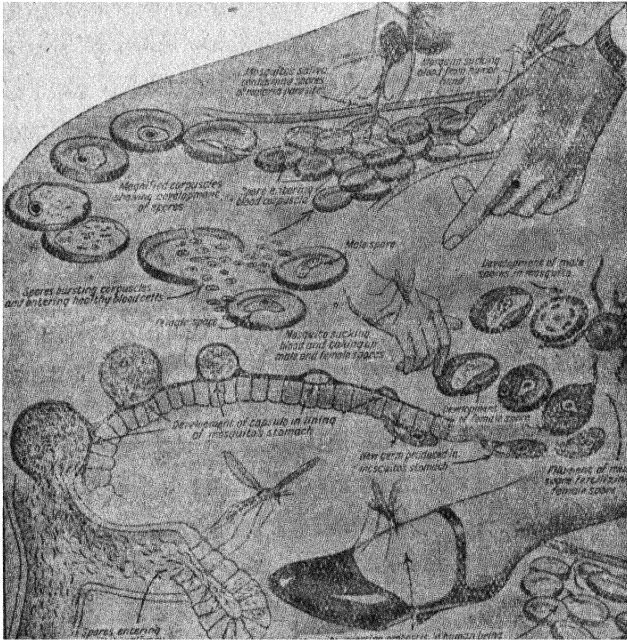
जाने का प्रयत्न करते हैं। यदि विजय प्राप्त हो गई तो कोई हानि नहीं होती अन्यथा यह लाल अणु में प्रवेश कर जाता है। यह उसी में बढ़ने लगता है और कुछ दिनों के पश्चात् बढ़ते बढ़ते एक कीटाणु से कई कीटाणुओं में बदल जाता है। रक्त का छोटा सा अणु इस भीतरी दबाव को सहन नहीं कर सकता

इसलिये फट जाता है। सारे कीटाणु जिन्हें इस दशा में स्पोर्स (Spores) कहते हैं रक्त में फैल जाते हैं और दूसरे लाल अणुओं में घुसने का प्रयत्न करते हैं (चित्र ७८)। ठीक इसी समय सफेद अणुओं से और इनसे संघर्ष होता है जिसके कारण शरीर का तापक्रम बढ़ जाता है और ज्वर आ जाता है। कुछ ही घंटों के बाद इन कीटाणुओं के लाल अणुओं में घुस जाने से लड़ाई स्थगित हो जाती है और ज्वर उतर जाता है।

ये कीटाणु भी तीन प्रकार के होते हैं — (१) अँतरिया वाले कीटाणु (२) तिजरिया वाले कीटाणु (३) चौथिया वाले कीटाणु। यदि शरीर में पहला कीटाणु प्रवेश कर गया है तो ४८ घण्टे पश्चात् लाल अणु के अन्दर फिर एक से कई स्पोर्स बन जाते हैं जिससे वह फट जाता है। इसी प्रकार प्रत्येक ४८ वें घंटे पर ज्वर चढ़ता रहता है।

इसी प्रकार यदि दूसरे प्रकार के कीटाणु का प्रवेश हुआ है तो हर ७२ वें घण्टे पर ज्वर आता है। तीसरे प्रकार के कीटाणुओं के आक्रमण से ज्वर का कोई समय निश्चित नहीं है। इन तीनों दशाओं में ज्वर इसी प्रकार सर्वदा चालू रहता है। तिल्ली (Spleen) को बहुत से मरे हुए लाल अणुओं को छानना पड़ता है। फल यह होता है कि तिल्ली इनको छान छानकर अपने में रखते रखते बहुत बड़ी हो जाती है और शरीर के अन्य अंगों के कार्य को रोकने लगती है। इसके बढ़ने और लाल अणु की कमी (Anaemia) के कारण शरीर क्षीण होने लगता है और बहुधा रोगी की मृत्यु हो जाती है।

रोगी के भाग्यवश और पड़ोसियों के अभाग्यवश प्रायः ऐसा भी होता है कि ये (Spores) लाल अणु के भीतर नर और मादा गैमीट्स (Male and female gametes) में परिवर्तित हो जाते हैं और इनका जीवन रोगी के शरीर में समाप्त हो जाता है।

यदि अब कोई दूसरी मादा एनॉफिलीज मच्छड़ इस रोगी को काटे और यदि रक्त चूसने के साथ साथ ये गैमीट्स भी उसके पेट में चले जायँ तो वे मच्छड़ के आमाशय में पहुँचकर बढ़ने का प्रयत्न करते हैं। वहाँ इन दोनों में कुछ भेद हो जाता है और ये आपस में सम्पर्क होने से ऊओसाइट (Oocyte)

में परिवर्तित हो जाते हैं। यह आमाशय की मांस-पेशियों से चिपक जाता है। इन्हें बेधकर यह शरीर-गुहा की ओर चला आता है। यहाँ यह बढ़ने लगता है और कुछ समय के पश्चात् इसमें बहुत से स्पोर्स बन जाते हैं जो शरीर-गुहा से होकर लार की थैली तक पहुँच जाते हैं (चित्र ७८)। यहाँ ये पड़े रहते हैं और मच्छड़ के काटने पर मनुष्य के रक्त में प्रवेश कर जाते हैं। इस तरह यह रोग एक से कई मनुष्यों को हो जाता है।

यदि यह (मादा) मच्छड़ किसी दूसरे जीव के रक्त को चूसती है तो स्पोर्स उसके रक्त में पहुँच कर कोई हानि नहीं पहुँचा सकते।

अति-निद्रा-रोग (Sleeping Sickness)—यह ट्राइपेनोसोम (Trypanasome) प्रोटोजून से होता है। इस बीमारी को ट्सी-ट्सी मक्खी फैलाती है जो अफ्रीका में पायी जाती है। अधिकतर यह बीमारी उसी जगह होती है। इस मक्खी के काटने से कुछ खुजलाहट होती है
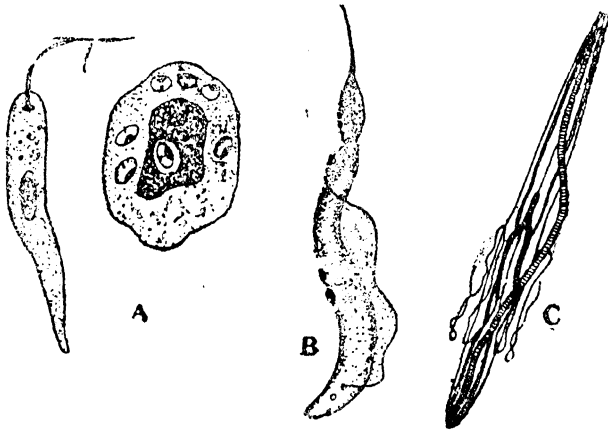
चित्र ७९—कई प्रकार के कीटाणु—A काला-अजार का; B अति-निद्रा-रोग का ; C राउंड्वर्म्स।

और फिर ज्वर आने लगता है। रोगी के शरीर में रक्त घटने लगता है और वह सुस्त हो जाता है तथा कभी कभी बक-झक भी करने लगता है। अन्त में

ये कीटाणु रक्त की नलियों में पहुँच जाते हैं और बहुधा रोगी की मृत्यु हो जाती है (चित्र ७९)।

काला-ज़ार (Kala-azar)—यह रोग एक प्रोटोज़ून कीटाणु के कारण होता है जिसको लीशमॅनया (Leishmania) कहते हैं। अभी तक इस बात का पता नहीं चला है कि यह रोग कैसे फैलता है परन्तु कुछ वैज्ञानिकों का संदेह खटमल (Bed bug) और पिस्सू (Fleas) पर है। अधिकतर लोगों का ख्याल है कि यह बीमारी रेत मक्खियों (Sand flies) के काटने से होती है। इस रोग में पहले बुखार आता है और शरीर में रक्त घटने लगता है। ये कीटाणु (चित्र ७९ A) यकृत, तिल्ली, हड्डी के गुदे या अँतड़ियों की झिल्लियों में पाये जाते हैं। यह रोग अधिकतर आसाम प्रान्त में होता है। परन्तु धीरे धीरे मद्रास, ब्रह्मा, चीन और भारतवर्ष के अन्य प्रान्तों जैसे संयुक्तप्रान्त आदि में फैल रहा है। इस रोग में ज्वर तेज़ आने लगता है और रोगी धीरे धीरे क्षीण हो जाता है और अन्त में मृत्यु हो जाती है। इससे बचने के लिए मकान को खूब स्वच्छ रखना चाहिए और खटमल और पिस्सू से बचे रहना चाहिए। इसकी निर्मूल दवा सूई लगवाना (Injection) है जिसके द्वारा एक दवा शरीर में डाल दी जाती है जिसे डा० यू० सी० ब्रह्मचारी ने निकाली है।

पॉरीफेरा और सीलेन्ट्रेटा वर्गों के कोई जीव मनुष्य को हानि पहुँचाने वाले अभी नहीं पाये गये हैं।

भागहीन शरीर वाले कीड़े

राउंड वर्म (Round-worm)—यह विशेषकर बच्चों के पेट में और बहुधा पुरुषों के पेट में भी पाया जाता है (चित्र ७९)। यह अँतड़ियों में रहता है और जो कुछ भोजन हम करते हैं उसी पर निर्भर रहता है। पेट में इन कीड़ों के होने से बच्चे सुस्त और चिड़चिड़े हो जाते हैं और प्रायः रोया करते हैं। भूख नहीं लगती और कभी कभी पेट में दर्द भी हो जाया करता है। कभी कभी यह यकृत में घुस कर पित्त की नली

बन्द कर देता है और यकृत में सूजन आ जाती है। यह कीड़े कच्चा साग खाने से या गन्दा पानी पीने से पेट में पैदा हो जाते है। ऐसे बच्चों का मल तुरंत जला देना चाहिए जिससे निकले हुए सारे कीड़े मर जायँ।

हूक वर्म (Hook-worm) यह कीड़ा दो प्रकार का होता है। एक का नाम ऍन्कीलॉस्टोमा (Ankylostoma) और दूसरे का नाम निकेटर (Nicator) है। यह एक सेन्टीमीटर लम्बा और कुछ पीला होता है। इसके दो दाँत होते हैं जो पीछे की ओर मुड़े होते हैं। इन्हीं से ये ड्युआडेनम में लटके रहते हैं और उसकी झिल्लियों को खाया करते हैं। कभी कभी रक्त की नली के फट जाने से ड्युआडेनम में से रक्त निकलने लगता है।

नर कीड़ा मादा से कुछ छोटा होता है और उतना शरीर को दुःख भी नहीं देता। इन दोनों के सपर्क से अण्डे पैदा होते हैं। जो मल द्वारा सहस्रों की संख्या में निकलते रहते हैं। मिट्टी में पहुँच कर और कुछ नमी के कारण इन अंडों से लारवा निकल आता है जो कुछ ही दिनों में बढ़कर मनुष्य के पैर में चिपट जाता है और चर्म में घुस कर रक्त की नली में चला जाता है। इस नली से होते हुए यह हृदय में पहुँचता है जहाँ से यह हृदय की धड़कन से फेफड़े में पहुँच जाता है। फेफड़े की सूक्ष्म वायु की नलियों से रेंगता हुआ यह एपीग्लॉटिस (Epiglottis) से घूमकर और अन्न-प्रणाली छिद्र से उतर कर अन्न-प्रणाली में चला आता है। यहाँ से आमाशय में पहुँच कर यह कुछ बड़ा हो जाता है और पाइलोरस से होकड्डुर आडेनम में पहुँच जाता है। तत्पश्चात् अपने दोनों दाँतों से ड्युआडेनम की झिल्लियों से लटक जाता है।

टेपवर्म (Tape worm) इसको टीनिया (Tænia) भी कहते हैं। इसमें एक सर होता है जिसमें खूँटीदार सकर चूसने वाला मुँह (Sucker) होता है। इन खूँटियों से यह कीड़ा अँतड़ियों की माँसपेशियों से चिपका रहता है। इसके सर से बहुत से टुकड़े लगे रहते हैं जिसके कारण यह कीड़ा सफेद डोरे की तरह प्रतीत होता है। इन्हीं टुकड़ों से अण्डे पैदा होते हैं जो निकल कर मल के साथ बाहर आ जाते हैं। ये केवल मनुष्य

और सूअर में ही पाये जाते हैं। इसलिए सूअर का माँस खाने वाले लोगों की अँतड़ियों में यह कीड़ा बहुधा पाया जाता है। दूसरे प्रकार के टीनिया बैल या गाय में होते हैं। टेपवर्म मेंढ़क में भी पाया जाता है। मनुष्य में यह कई फीट लम्बा होता है। पेट में इस कीड़े के आ जाने से रक्त में कमी आ जाती है और उल्टी भी आने लगती है।

फाइलेरिया (Filaria)—एक ३ सेंटीमीटर लम्बा कीड़ा है। इसके कारण फीलपाँव (Elephantiasis) की बीमारी पैदा होती है।

एनिलिडा (Annelida)—इस वर्ग का केवल जोंक(Leeches) ही ऐसा कीड़ा है जो मनुष्य के रक्त को पीकर हानि पहुँचाता है।

आर्थोपोडा (Arthropoda)—इस वर्ग के बहुत से कीड़े मकोड़े ऐसे हैं जो रोग के कीटाणुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान तक अपने शरीर के भीतर से अथवा बाहर से ले जाते हैं। इसी कारण ये रोग के फैलाने में बड़ी सहायता पहुँचाते हैं। इसलिए मनुष्य के ये बड़े शत्रु हैं। इस प्रकार के कीड़े मच्छर, पिस्सू और खटमल हैं।

मच्छर (Mosquito)—मच्छर कई प्रकार के होते हैं। ये सब स्थानों में पाये जाते हैं। परन्तु संयुक्त प्रान्त में अधिकतर दो ही प्रकार के मच्छर पाये जाते हैं—(एनॉफलीज (Anopheles) और (२) क्यूलेक्स (Culex)। इनमें से क्यूलेक्स अधिक संख्या में पाया जाता है। मादा मच्छर रुके हुए अथवा स्थिर पानी में अण्डे देती हैं। इन अण्डों से कुछ दिन के पश्चात् लारवा निकल आते हैं जो पानी में बहुत तीव्रता के साथ तैरते, डूबते और निकलते रहते हैं। ये सूक्ष्म जीवों को खाकर बढ़ते हैं। कुछ दिनों के बाद ये प्यूपा में बदल जाते हैं प्यूपा कामा (Comma) के आकार के होते हैं। इनमें से कुछ दिनों के पश्चात् पूरे मच्छड़ निकल आते हैं (चित्र ८० और ८१)।

एनॉफलीज और क्यूलेक्स मच्छरों में बहुत अन्तर होता है। एनॉफलीज अपने अण्डों को पानी की सतह पर सजा कर चित्र सदृश्य कर देती है परन्तु क्यूलेक्स अपने अण्डों को नाँव की भाँति बनाती हैं (चित्र ८० और ८१ A) एनॉफलीज का लारवा पानी में तैरते समय साँस लेने के

लिए पानी की सतह से समानान्तर रहता है। क्यूलेक्स का लारवा पानी में साँस लेते समय सतह से उल्टा लम्ब बनाता है (चित्र ८० और ८१ B)। दोनों के प्यूपा में कोई विशेष अन्तर नहीं होता। परन्तु मच्छड़ बन
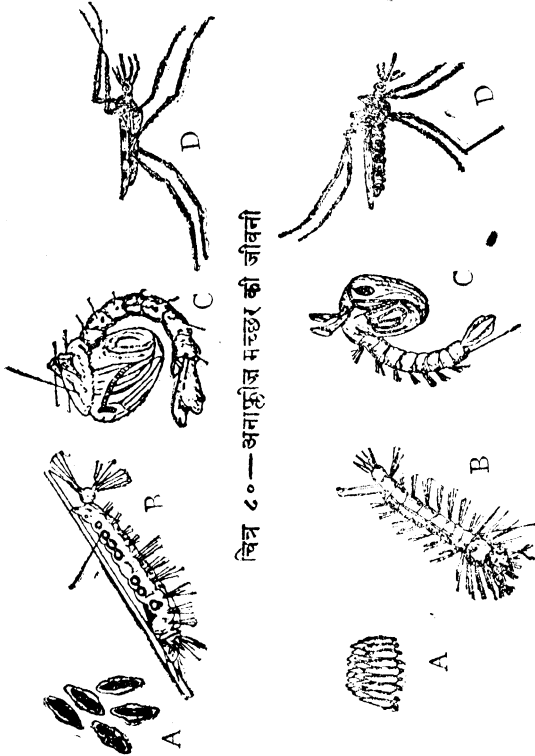
चित्र ८०—अनाफ्लीज मच्छड़ की जीवनी

चित्र ८१—क्यूलेक्स मच्छड़ की जीवनी
A अण्डे; B लारवा; C प्यूपा; D पूरा मच्छड़

जाने पर इनमें बहुत अन्तर हो जाता है। एनॅफलीज के पंखों पर काले धब्बे होते हैं परन्तु क्यूलेक्स में ऐसा नहीं होता। एनॉफलीज अपने छः पैरों पर बैठता है लेकिन क्यूलेक्स अगले चार पैरों पर बैठता है और पिछले दो पैरों को ऊपर उठाये रहता है। इसके अतिरिक्त क्यूलेक्स कुछ कुबड़ा भी होता है।

नर और मादा मच्छड़ों में भी बहुत भेद है। यह भेद विशेषतः सिर के हिस्से में ही स्पष्ट रूप से होता है। नर मच्छड़ का रक्त चूसने वाला मुँह छूने वाले यंत्र (Anenæ) से छोटा होता है परन्तु मादा मच्छड़ में चूसने वाला मुँह छूने वाले यंत्र से बहुत बड़ा होता है (चित्र ८२)। इसके अतिरिक्त नर के छूने वाले यंत्र में बहुत से बाल होते हैं। नर
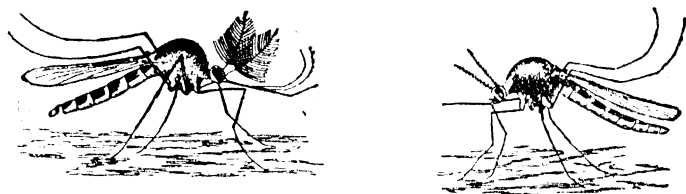
चित्र ८२—नर और मादा मच्छड़ और उनके मुँह के बनावट का भेद।

मच्छड़ मादा से छोटा और दुबला भी होता है। इस प्रकार के मुँह होने के ही कारण मादा मनुष्य के रक्त को चूसने में सफल होती है। नर मच्छड़ के काटने के पहले ही मनुष्य उसके छूनेवाले बालदार यंत्र के कारण किसी वस्तु के अपने चर्म पर बैठने को प्रतीत कर लेता है और वह उसको उड़ा देता है। परन्तु मनुष्य मादा मच्छड़ को उसके काटने के पहले प्रतीत नहीं कर पाता। यही कारण है कि मादा एनॉफलीज ही मलेरिया के कीटाणुओं को अपने शरीर में रखती है। और मनुष्य के रक्त को चूसते समय इनको रक्त में डाल देती है।

मलेरिया से बचने के लिए अपने मकान के चारों ओर कोई भी गड्ढा न रखना चाहिये और यदि कोई हो भी तो उसे मिट्टी डाल कर भर देना चाहिये जिससे पानी एकत्रित न हो। यदि मकान के समीप किसी स्थिर पानी में मच्छड़ के लारवा दिखलायी दें तो तुरत मिट्टी का तेल उस पानी में डाल देना चाहिये ताकि लारवा की साँस लेनें की नली बन्द हो जाय और वे मर जायँ। खूटियों पर आवश्यकता से अधिक या काले कपड़े न टाँगने चाहिये क्योंकि मच्छड़ विशेषकर इन्हीं में छिपते हैं। रात में

मसहरी में सोना चाहिये या शरीर पर सरसों का तेल लगा कर सोना चाहिये। हो सके तो बरसात में कभी कभी कुनैन (Quinine) भी खा लेनी चाहिये।

मक्खी (House-fly)—मक्खियाँ भी हम लोगों की शत्रु हैं। सम्भवतः इनसे बढ़कर शत्रु और कोई नहीं है। यह कई प्रकार की बीमारियाँ जैसे—हैजा (Cholera), मियादी ज्वर (Typhoid), पेचिस (Dysentry), चेचक (Small-pox) इत्यादि को फैलाती है जिनसे एक साल में बड़ी से बड़ी लड़ाई से भी अधिक मनुष्य मर जाते हैं।

यह मक्खी १० दिन की ही अवस्था पर अण्डे देने लगती है। यह एक समय में १००–१५० तक अण्डे गन्दे स्थानों पर देती है जैसे—सड़े
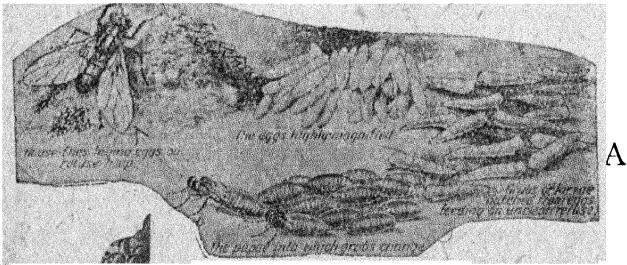
चित्र ८३—A मक्खी की जीवनी ; B गन्दगी और कीटाणुओं से भरा हुआ मक्खी का पैर।

हुए कूड़े या गोबर। परन्तु घोड़े की लीद इसके लिए बहुत ही उपयुक्त है। प्रत्येक से कुछ दिन के बाद लारवा निकलते हैं जिनको ग्रब्स या मैगॉट्स (Grubs or maggots) कहते हैं। ये गन्दी वस्तुओं से ही अपना भोजन प्राप्त करते हैं। कुछ समय के पश्चात् ये प्यूपा में बदल जाते हैं जो स्थिर होकर एक स्थान पर पड़े रहते हैं। कुछ दिनों के पश्चात् इनमें से मक्खियाँ निकल आती हैं जो १० दिन के बाद फिर अपनी जीवनी आरम्भ करने योग्य हो जाती हैं

(चित्र ८३)। इसकी पूरी जीवनी १५ दिन से अधिक समय नहीं लेती। कभी कभी केवल १० दिन में ही अण्डे से पूरी मक्खी तक समय लगता है।

मक्खी के भी सर, छाती व धड़ होते हैं। इसमें भी पंख और ६ पैर होते हैं। छाती और धड़ के मध्य में दोनों ओर आलपीन की भांति सँभलने के यंत्र (Balancer) होते हैं। मक्खी का पैर बड़ा ही अद्भुत होता है। इसका पैर ही सब बीमारियों की जड़ है। मक्खी कभी काटती नहीं क्योंकि इसका प्रोबोँसिस छोटा और मोटा होता है। यह केवल भोजन को चाट चाट कर खाती है। इसलिए यह अपने मुँह से हैजे इत्यादि के कीटाणुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले भी जा सकती है।

इसके पैर में बहुत से बाल नीचे की ओर झुके हुए रहते हैं। इसलिए जब यह किसी अशुद्ध वस्तु पर बैठती है तब भिन्न भिन्न प्रकार के कीटाणु उसके बालों से लिपट कर पैर पर रह जाते हैं (चित्र ८३ B)। फिर जब वह हम लोगों के भोजन पर बैठती है तो इस गन्दी वस्तु का कुछ अंश वहाँ छोड़ती जाती है। वह इन बातों को जान-बूझकर नहीं करती बल्कि उसका यह स्वभाव ही है। इसके पैरों में दो गद्दार और नोकीली वस्तुएँ होती हैं जिनसे यह दीवाल पर उलटे भलीभाँति बैठ सकती है।

मक्खियों से बचने के लिये मकान को खूब साफ-सुथरा रखना चाहिये। अपने मकान के आस-पास कोई भी गन्दी वस्तु न डाल रखनी चाहिये। मक्खियाँ गन्दी वस्तुओं को ही पसन्द करती हैं जिनके न रहने से वे वहाँ दिखलायी भी न देंगी। पाखाना व नलियों में समय समय पर फेनाइल (Phenyle) डाल देना चाहिये ताकि वे वहाँ अण्डे न दे सकें। बाजार से मक्खी पकड़ने वाला कागज (Fly-paper) खरीद कर कमरे में लटका देने से मक्खियाँ उसके मीठेपन के कारण उस पर बैठ जायँगी परन्तु लसदार होने के कारण उसी पर चिपक जायँगी। उसमें एक प्रकार का विष भी होता है जिसके कारण वे मर जाती हैं। जाड़े के दिनों के अपेक्षा ये गर्मी और बरसात में बहुत अधिक पायी जाती हैं। ये आँखों की बहुत सी बीमारियों को भी फैलाती हैं।

पिस्सू (Fleas)—ये छोटे और बेपंख के होते हैं। नर व मादा

पिस्सू दोनों ही काटने में बहुत तेज़ होते हैं। और बहुत सी बीमारियों को फैलाते हैं। विशेषतः प्लेग (Plague)। इनका प्रोबासिस बहुत नोकीला होता है। प्लेग का पिस्सू (Plague flea) चूहे के बालों में घुसा रहता है और उसके रक्त को चूसा करता है। यदि वह चूहा प्लेग से बीमार है और उसकी मृत्यु भी उसी से हुई है तो पिस्सू रक्त चूसने के साथ साथ प्लेग के कीटाणु को भी ले लेता है। चूहे के मर जाने पर पिस्सू उसको छोड़ दूसरे चूहे की खोज में फुदकने लगता है। चूहे के न मिलने पर ही यह मनुष्य पर आक्रमण करता है और रक्त चूसते समय प्लेग के कीटाणु को जिसे बेसिलस-पेस्टिस (Bacillus Pestis) कहते हैं उसके रक्त की धारा में छोड़ देता है। ऐसा होने से वह मनुष्य प्लेग से बीमार पड़ जाता है अर्थात् कीटाणु के प्रवेश करने के लगभग ५ या ६ दिनों के पश्चात् बहुत तेज़ ज्वर आता है और शरीर के जोड़ों के बीच सूजन हो जाती है जैसे जंघों, काँखों या गर्दन में गिल्टियाँ निकल आती हैं। यदि रोगी को ठीक दवा तुरंत न मिली तो तीन या चार दिनों के भीतर ही उस रोगी की मृत्यु हो जाती है। इस रोग को ब्यूबॉनिक प्लेग (Bubonic plague) कहते हैं।
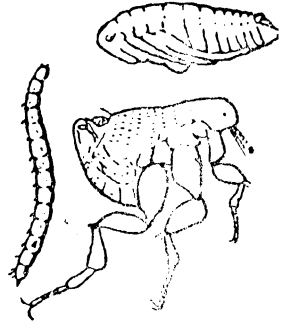
चित्र ८४—पिस्सू की जीवनी।

हिन्दुस्तान में १८९६ के पहले प्लेग की चर्चा ही न थी परन्तु उस समय से यह बहुत शीघ्रता से फैल रहा है और हर साल इससे लाखों आदमियों की मृत्यु होती है। इससे बचने के लिये पहले टीका (Inoculation) ले लेना चाहिए जिसका प्रभाव छः महीने तक रहता है। मकान से सारे चूहों को मूसदानी (Rat-trap) में फँसा कर मार डालना चाहिये अथवा उसके रहने के बिलों में गंधक का धुआँ देना चाहिए जिससे ये निकल कर मर जायँ। आँटे की छोटी छोटी विष मिली हुई गोलियाँ इनके बिलों के समीप रख देनी चाहिये जिसके खाने से भी इनकी मृत्यु हो जाती है। दूसरे

प्रकार के प्लेग को जो हिन्दुस्तान में कम है नीमोनिक प्लेग (Pneumonic plague) कहते हैं।

मादा पिस्सू कमरे के कोने में अथवा छोटी जगहों में भूमि पर अण्डे देती है जो गर्मी पाने पर शीघ्र ही लारवा में बदल जाते हैं। ये धूल, मिट्टी या कोने में पड़ी हुई सड़ी वस्तुओं को खाते हैं और कुछ समय पश्चात् प्यूपा में बदल जाते हैं। प्यूपा के ऊपर काकून भी बना रहता है। कुछ समय के बाद इनमें से पूरा पिस्सू निकल कर अपना कार्य प्रारम्भ कर देता है (चित्र ८४)।

खटमल (Bed bugs)—खटमल का शरीर चपटा और भूरे लाल रंग का होता है। इसमें पंख नहीं होते। यह चारपाई के, चौकी के अथवा
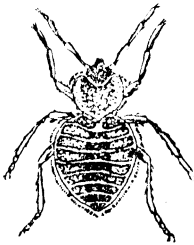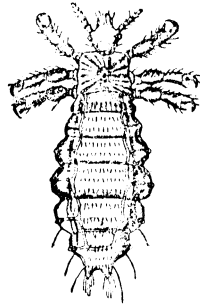
चित्र ८५—A खटमल ; B जूँ।

अन्य वस्तुओं के छिद्रों में दिन को छिपा रहता है और रात होते ही बिस्तर पर रेंगने लगता है। यह सोते हुए मनुष्य के रक्त को चूसता है और एक स्थान से दूसरी स्थान तक बहुत सरलता के साथ जा सकता है। यह बहुत दिनों तक बिना मनुष्य के रक्त को चूसे रह सकता है। संभवतः इसके द्वारा भी काला आजार का रोग फैलता है। यह चारपाइयों से मिट्टी का तेल या गर्म पानी डालकर निकाला जा सकता है (चित्र ८५ A)।

जूँ (Louse)— जूँ दो प्रकार के होते हैं (१) कपड़े में रहने वाला जूँ

जो सफेद रंग का होता है और अधिकतर उन आदमियों के कपड़ों में पाया जाता है जो स्नान नहीं करते और कपड़े नहीं बदलते। (२) सर के बालों में रहने वाला जूँ जो काले रंग का होता है और उन लोगों के बालों में रहता है जो अपने बालों को साफ नहीं रखते। अधिकतर छोटे छोटे लड़कों और विशेषकर लड़कियों के बालों में ये पाये जाते हैं। ये बाल के अनुसार अपना रंग भी बदल सकते हैं। इनके भी पंख नहीं होते। ये अपने अण्डे बालों की जड़ों में देते हैं जिनसे वे चिपके रहते हैं। इनसे बचने के लिए बालों को खूब स्वच्छ रखना चाहिए। यदि हो सके तो सिरका या नीबू से बाल साफ करना चाहिये (चित्र ८५ B)।

खुजली का कीड़ा (Itch mites)—ये बहुत सूक्ष्म मकड़ी जैसे कीड़े होते हैं जो मनुष्य के चर्म में घुसकर खुजली पैदा करते हैं। ये एक आदमी से दूसरे आदमी पर सरलता से चले जाते हैं। परन्तु शरीर को खूब साफ रखने से यह बीमारी नहीं होती।
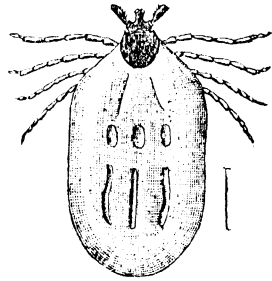
किलनी (Ticks)—यह कुत्तों के बालों में बहुत पायी जाती है और उनके चमड़े से दृढ़ता के साथ चिपकी रहती है। छुड़ाने पर भी जल्दी नहीं छूटती। यह कुत्ते के रक्त को बराबर चूसा करती है जिससे रक्त की कमी और हृदय की दुर्बलता पैदा हो जाती है जिससे अधिकतर कुत्तों की मृत्यु भी हो जाती है। यह कुत्तों के शरीर में एक प्रकार के कीटाणु पहुँचा देने से उनमें आँख की बीमारी भी उत्पन्न करती है (चित्र ८६)।

चित्र ८६—किलनी।

इनके अतिरिक्त गोजर, दीमक, बिच्छू (चित्र ८७) भी मनुष्य के शत्रु हैं। बिच्छू के डंक में एक प्रकार का विष होता है जिसके कारण जब यह मनुष्य के शरीर में घुस जाता है तो बहुत कष्ट देता है।

मछलियाँ (Fishes)—कुछ समुद्री मछलियाँ जैसे शार्क (Shark), बिजली का ईल (Electric eel) इत्यादि भी समुद्र से मूँगा अथवा

मोती निकालने वालों को कष्ट दिया करती हैं। कभी कभी इनके चंगुल में पड़ जाने से पनडुब्बों की मृत्यु भी हो जाया करती है।

रेप्टाइल्स (Reptiles)—इनमें से साँप मनुष्य का भारी शत्रु है। इसका शरीर लम्बा रस्सी के समान होता है। चलने फिरने के लिए इसके कोई पैर नहीं होते; परन्तु रेंगने के लिए मांस-पेशियाँ काम देती हैं और नीचे कुछ खुरदरापन होता है जिसके कारण यह चलता है। ये कई रंग के होते हैं। कुछ के शरीर पर बहुत सी चित्तियाँ भी होती हैं और चोईं (Scales) भी होती हैं। इनके अन्य छोटे छोटे दाँतों के अतिरिक्त दो बड़े दाँत भी होते हैं जो दो विष की थैलियों से विष की नली (Poison duct) द्वारा मिले रहते हैं (चित्र ८८)। जब साँप किसी मनुष्य या अन्य जानवर को काटता है तो इसके ये ही दाँत उसके शरीर में घुस जाते हैं जिससे विष निकल कर उसके शरीर में प्रवेश कर जाता है। रक्त के द्वारा उसके शरीर में यह विष फैल जाता है और ठीक समय पर दवा न मिलने पर उस आदमी या जानवर की मृत्यु हो जाती है। इस प्रकार के कुछ और रेप्टाइल्स जैसे—विषखोपड़ा, गोह इत्यादि भी विषैले जानवर हैं।
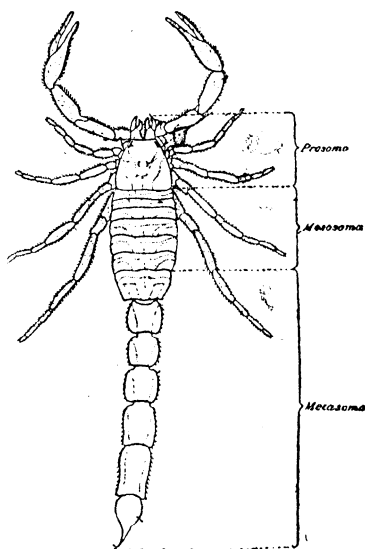
चित्र ८७—बिच्छू और उसका डंक।

दूसरे रेप्टाइल्स जैसे कछुआ (Tortoise) और घड़ियाल (Crocodile) जहरीले नहीं होते, परन्तु नदियों के किनारे नहाते हुए मनुष्यों या अन्य जानवरों को पानी में घसीट ले जाते हैं और वहाँ उनको खाते हैं।

चिड़ियाँ और मैमल्स (Birds and Mammals)—कुछ

चिड़ियाँ जैसे तोता, कौआ इत्यादि भी मनुष्य के शत्रु हैं; क्योंकि फसल के समय ये अनाज के दानों को खा जाते हैं।

मैमल्स वर्ग का चूहा मनुष्य का सबसे भारी शत्रु है क्योंकि अनाज खाने के अतिरिक्त यह प्लेग भी फैलाता है जिससे प्रतिवर्ष हजारों आदमियों की मृत्यु हो जाया करती है। कुछ जंगली जानवर जैसे भेड़िया, चीता, शेर इत्यादि भी मनुष्य के जान के पीछे पड़े रहते हैं; क्योंकि मनुष्य के रक्त को पीकर वे बहुत खुश रहते हैं। मनुष्य भी इनका शिकार खूब करता है और चीते और शेर के चमड़े को अपने काम में लाता है। बन्दर भी मनुष्य का शत्रु है क्योंकि यह गुस्से में छोटे छोटे बच्चों को काट लेता है और बड़ा कष्ट देता है।
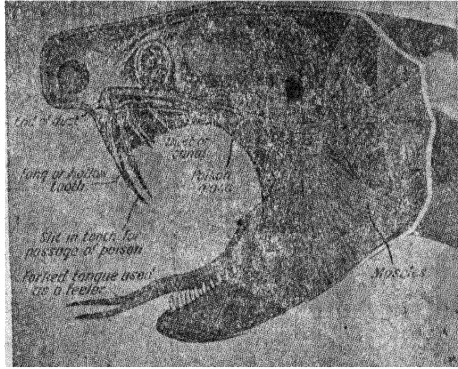
चित्र ८८—साँप और उसका खुला हुआ मुँह जिसमें विष की थैली स्पष्ट है।

अभ्यास

१. कुछ ऐसे कीड़े मकोड़ों का नाम बतलाओ जिनके द्वारा मनुष्य में बीमारियाँ फैलती हैं। वे किस प्रकार उन बीमारियों के कीटाणुओं को ले जाती हैं और रोग को फैलाने में सफलता पहुँचाती हैं? इन कीड़े मकोड़ों की प्रगति को कैसे रोका जा सकता है?

२. मच्छर और मक्खियाँ कहाँ और कब अण्डा देती हैं? साधारण घरेलू मक्खी का जीवन-चरित्र लिखो और उनकी आदतों का वर्णन करो।

वनस्पतिमात्र
के वृक्ष
Orchids
Geranium
Bean
Rose
Lily
Oak
Parsley
Willow
Daisies
Mint
Gentian
Ferns
Pine
Ginkgo
Cycads
Liver Worts
Mosses
Mushrooms
Yeasts
Laminaria
Volvox
Gymnosperms
PLANT DIVISION
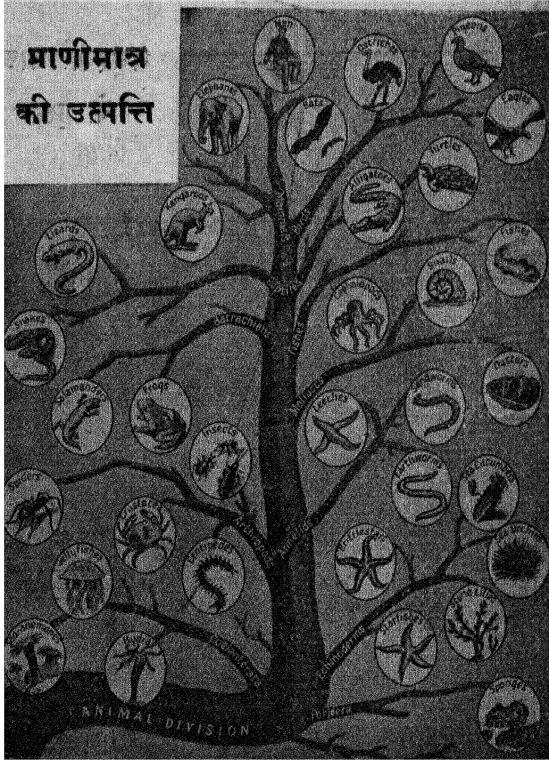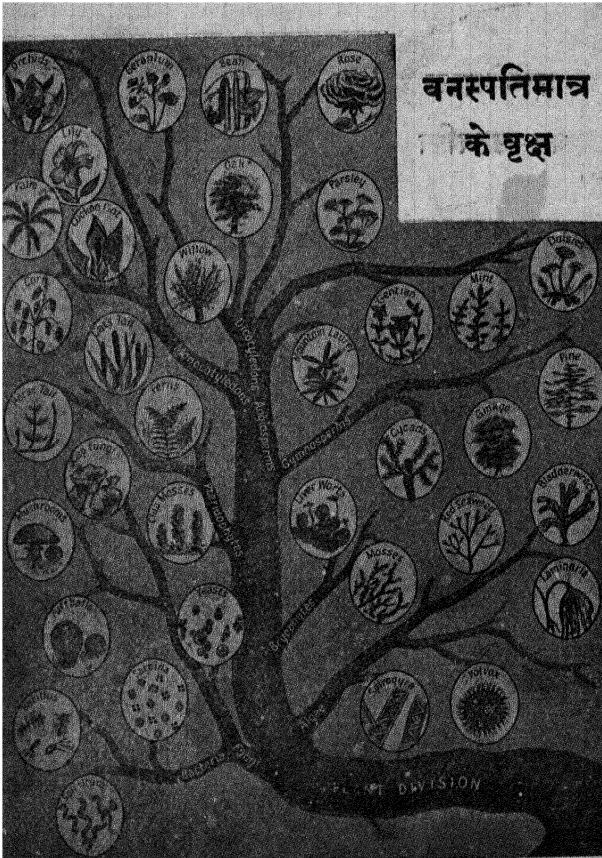
३. पैरासाइट्स (Parasites) क्या हैं ? दो प्राणिमात्र पैरासाइट्स का नाम लिखो। वे किस प्रकार से मनुष्य को हानि पहुँचाती हैं और उनके हानियों से बचने के लिए तुम क्या उपाय कर सकते हो ?

४. मनुष्य को हानि पहुँचाने वाले तीन कीड़े मकोड़ों के नाम लिखो। वे किस प्रकार से हानि पहुँचाते हैं और उनको तुम किस प्रकार नष्ट करोगे ?

५. निम्नांकित बीमारियों को फैलने से रोकने के लिए तुम कौन कौन से साधारण उपाय करोगे :—

अतरिया ; क्षय ; प्लेग ; हैजा।

६. निम्नलिखित पर नोट लिखो :—

पिस्सू ; टेपवर्म ; हुकवर्म ; दीमक ; काला आजार।

७. अतरिया (Malaria) के कीटाणु का जीवन चरित्र लिखो। यह बीमारी किस प्रकार होती है ? इस बीमारी को रोकने का तुम क्या उपाय करोगे ?

८. सुन्दर नामकरणीय चित्रों द्वारा निमांकित का वर्णन करो : —

(क) गेहुँअन (Cobra) का मुख ; (ख) बिच्छू का डंक।

९. निम्नलिखित के बारे में तुम जो कुछ जानते हो लिखो :—

आँव (Dysentry) ; चूहा ; खजुली का कीटाणु ; किलनी (Ticks) ; खटमल (Bedbug) ; जूँ (Louse) ; पेट का केंचुआ (Roundworm); ट्रिपनासोम; शार्क; फीलपाँव (Filaria)।

१०. क्यूलेक्स और एनाफलीज मच्छरों में क्या अन्तर है ? उनके नर और मादा की पहचान तुम कैसे करोगे ? वे कौन कौन सी बीमारियाँ फैलाती हैं ? क्यूलेक्स अथवा एनाफलीज मच्छर के जीवन चरित्र का वर्णन करो।

वनस्पति-शास्त्र

अध्याय १

सरसो का पेड़ और उसके बाहरी भाग

(External Parts of Mustard Plant)

सरसो वसन्त ऋतु का पौधा है। यह वसन्त ऋतु में लगभग प्रत्येक खेत में पाया जा सकता है। इसके बाहरी भागों को देखने के लिए एक सरसो का पौधा पूरी जड़ समेत खेत से उखाड़ लाओ। इसे पानी में धो डालो ताकि जड़ों में लगी हुई मिट्टी धुल जाय। अपने सामने रख कर इसके प्रत्येक भाग को देखो और उनका चित्र बनाओ।

चित्र ८९—एक कल्पित पौधा जिसमें पौधे के सभी भाग दिखलाए गये हैं।

जड़ (Root)—जड़ पौधे के नीचे की ओर होती है जो भूमि के अन्दर रहती है—अधिकतर इसका रंग सफेद होता है। इस का एक भाग सीधा जाता है जिसको मुख्य जड़ (Primary root) कहते हैं।

इससे निकली हुई और कुछ पतली जड़ें होती हैं जिनको दूसरी जड़ (Secondary root) कहते हैं। इन जड़ों से और भी छोटी छोटी पतली जड़ें निकलती हैं जिनको तीसरी जड़ (Tertiary root) कहते हैं (चित्र ९०)। इन पतली जड़ों के चारों ओर बहुत छोटे छोटे बाल (Root hairs) होते हैं जिन पर मिट्टी के कण लगे रहते हैं। जड़ों के अंत में एक टोपी के आकार का भाग होता है जिसको जड़ की टोपी (Root cap) कहते हैं (चित्र ९०)।

चित्र ९०— सरसो का पौधा।
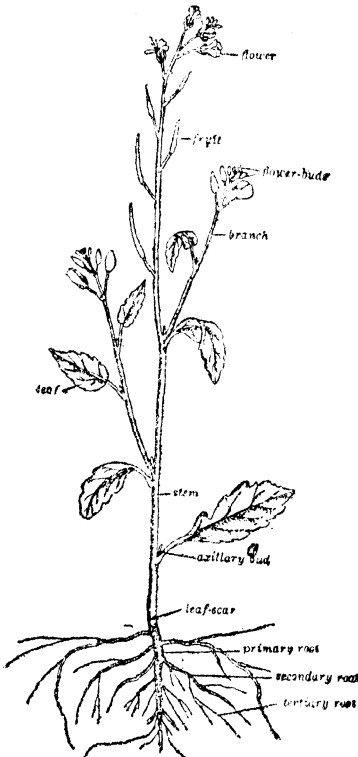
डाली (Shoot)—भूमि से ऊपर की ओर निकले हुए भाग को डाली कहते हैं। इसमें तना, बहुत सी शाखाएँ और पत्तियाँ रहती हैं। ऊपरी भाग से अथवा गाँठों से फूल भी निकले हुए रहते हैं। सरसो का तना कुछ हरा और गोलाकार होता है। शाखाएँ पत्ती और तने के कोने (Axil) से निकलती हैं। शाखाएँ तने की अपेक्षा पतली और हरी होती हैं। पत्तियाँ हरी, पतली और चपटी होती हैं; परन्तु नीचे की ओर बड़ी और चौड़ी होती हैं। प्रत्येक पत्ती के हरे चिपटे भाग को लेमिना (Lamina) कहते हैं और जिस भाग पर यह होता है उसे पीटियोल (Petiole) कहते हैं। जहाँ पत्ती तने से मिली रहती है उसे पत्ती का आधार (Leaf-base) कहते हैं। पत्ती के बीच में आगे से पीछे की ओर एक मोटी नस जाती है जिसे मिडरिब

(Midrib) कहते हैं। इसी से निकली हुई बहुत सी नसें (Veins) पत्ती के चारों ओर जाती हैं।

पीटियोल और तने के मिले हुए भाग को ऍक्सिल (Axil) कहते हैं। यहीं से शाखाएँ (Branches) निकलती हैं। इन डालियों और तनों के ऊपर फूल की कलियाँ (Buds) होती हैं जिनको टरमिनल कलियाँ (Terminal buds) कहते है। इनके अतिरिक्त कलियाँ पत्ती और तने के ऍक्सिल में भी पायी जाती हैं। ऐसी कलियों को ऍक्सिलरी कलियाँ (Axillary buds) कहते हैं (चित्र १०)।

तने पर कहीं कहीं कुछ चिन्ह भी दिखलायी देंगे। ये पुरानी या कमज़ोर पत्तियों के टूट जाने से पड़ जाते हैं। इनको गिरी हुई पत्ती का चिन्ह (Leaf-scar) कहते हैं। इस स्थान पर और जहाँ से पत्तियाँ निकलती हैं वहाँ पर तना और डालियाँ कुछ फूली हुई प्रतीत होंगी। सरसो में यह स्पष्ट नहीं है जितना ईख, मक्का इत्यादि में रहता है। इन फूले हुए भागों को गाँठ (Node) और प्रत्येक दो गाँठों के बीच के भाग को इन्टरनोड (Internode) कहते हैं। शाखाएँ जब कभी निकलती हैं तो इन्हीं गाँठों से अथवा पत्ती व तने के कोने से निकलती हैं।

सब से ऊपर और डालियों के अन्त में अथवा पत्तियों के कोनों में फूल होता है। यदि बहुत से फूल एक ही स्थान पर निकलते हैं अथवा गुच्छे के रूप में हो जाते हैं तो उनको फूल का गुच्छा या इनफ्लोरेसेंस (Inflorescence) कहते हैं। सरसो में भी ऐसा ही पाया जाता है। इन गुच्छों में सब से छोटा फूल बीच में होता है और बड़े फूल किनारों पर होते हैं।

फूल का वह भाग जिससे वह तने अथवा डाली से लगा रहता है फूल का तना (Flower-stalk) कहलाता है। इस पर ऊपर की ओर चार धन निशान (+) की भाँति लगे हुए कुछ पीली हरी पंखड़ियाँ (Sepals) होती हैं। इनके कोनों पर ऊपर की ओर लगी हुई चमकदार पीली चार रंगीन पंखड़ियाँ (Petals) होती हैं। ये भी क्रॉस (×) की भांति लगी रहती हैं। इसलिए उस वर्ग को जिसमें सरसो

का पौधा है क्रुसीफेरी (Cruciferae) कहते हैं। रंगीन पंखड़ियों के समीप ही यदि ध्यान से देखा जाय तो कुछ छोटी छोटी हरी, गोल थैलियाँ दिखलायी देंगी। इनको नेक्टरी (Nectary) कहते हैं। इन्हीं में शहद एकत्रित रहता है जिसकी खोज में मधु-मक्खियाँ आती हैं और प्रकृति का बहुत बड़ा काम कर जाती हैं।

रंगीन पंखड़ियों से भीतर की ओर हटकर ६ स्टेमन्स (Stamens) होते हैं जिनमें से चार बड़े और दो छोटे होते हैं। इनमें ऊपर की ओर दो तिरछे लगे हुये भाग दिखलायी पड़ते हैं जिनको ऍन्थर्स (Anthers) कहते हैं। इन्हीं के अन्दर पराग या पॉलेन्स (Pollens) भरे होते हैं। वह डंठल जिसमें ऐन्थर्स लगे रहते हैं फिलामेंट (Filament) कहलाता है। स्टेमन्स (Stamens) फूल का नर भाग (Male part) है। इनके बीच सुराही जैसा एक भाग होता है जिसको कारपेल या पिस्टिल (Carpel or pistil) कहते हैं। यह फूल का मादा भाग (Female part) है। इसके तीन भाग होते हैं। नीचे के फूले हुए भाग को ओवरी (Ovary) कहते हैं। बीच के पतले बेलनाकार भाग को स्टाइल (Style) और ऊपर के लसदार मखमली भाग को स्टिग्मा (Stigma) कहते हैं (चित्र ९०)।

सेम के पौधे के भी इन सभी भागों को ध्यान से देखो और अध्ययन करके इसकी सरसों के पौधे से भिन्नता ज्ञात करो।

सरसो के पेड़ में कहीं कहीं फूल के स्थान पर एक लम्बा हरा भाग दिखलायी देगा जो सरसो का फल (Fruit) है। सूख जाने पर यह दो भागों में फट जाता है और अपने बीज को दूर फेंक देता है। अच्छे स्थान पर बीज के पड़ जाने से और उपयुक्त दशा पाने पर नये पौधे फिर निकल आते हैं।

इन भागों के अतिरिक्त पेड़ में स्टिप्यूल्स (Stipules), ब्रैक्ट्स (Bracts), टेन्ड्रिल्स (Tendrils), काँटें (Thorns or Spines) भी होते हैं जैसा कि चित्र नं० ८९ में दिखाया गया है।

भिन्न भिन्न प्रकार के पौधे (Kinds of plants)—पौधे भी

कई प्रकार के होते हैं। उनकी भिन्नता उनके बाहरी आकार को देखकर ही मालूम की जा सकती है।

(१) **वृक्ष (Trees)**—इनमें एक लम्बा मोटा तना होता है जिसमें बहुत सी शाखायें होती हैं। ये बहुत दिनों तक जीवित रहते हैं।

(२) **झाड़ियाँ (Shrubs)**—जिनमें तने का आकार स्पष्ट नहीं होता लेकिन बहुत सी शाखायें होती हैं, जो अधिक ऊँची नहीं होतीं। इनकी ऊँचाई केवल ८ या १० फीट तक होती है।

(३) **जड़ी-बूटी (Herbs)**—इनके तने और भी छोटे और पतले होते हैं। ये अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहते।

(४) **लतायें (Creepers)**—ये दो प्रकार के होते हैं; (अ) घूमकर चढ़नेवाले पौधे (Twining plants) और (ब) पकड़कर चढ़नेवाले पौधे (Climbing plants)। इनके तने कमजोर और नरम होते हैं। इसलिए प्रकाश प्राप्त करने के लिए इनको घूमकर या पकड़कर ऊपर चढ़ना पड़ता है।

(५) **हरियाली-हीन पौधे (Non-green plants)**—जिन पौधों में पत्तियाँ या उनके और भाग हरे नहीं होते हरियाली-हीन पौधे (Non-green plants) कहे जाते हैं। इनमें हरापन (Chlorophyll) न होने के कारण ये स्वयं अपना भोजन हरे पौधों की भाँति नहीं बना सकते। इनमें से कुछ पौधे सड़ी गली चीजों पर अपना निर्वाह करते हैं। इनको सैप्रोफ़ाइटिक पौधे (Saprophytic plants or saprophytes) कहते हैं। दूसरे प्रकार के पौधे ऐसे होते हैं जो हरे पौधों पर अपना निर्वाह करते हैं। अर्थात् हरे पौधों के बनाये हुए भोजन को अपने विशेष अंगों द्वारा खींच लेते हैं ऐसी दशा में अधिकतर हरे पौधों की मृत्यु हो जाया करती है। ऐसे पौधों को पॅरासाइटिक पौधे (Parasitic plants or parasites) कहते हैं। इनके बारे में तुम आगे पढ़ोगे।

(६) इस वर्ग में बहुत से छोटे छोटे पौधे अथवा एक सेल वाले पौधे (Unicellular plants) हैं जो पानी में अपने बालों (Flagella) द्वारा तैरते रहते हैं।

अभ्यास

१. किसी पौधे के सभी भागों का नाम लिखो और उन भागों के ठीक स्थानों को एक चित्र द्वारा दिखलाओ।

२. सरसों के पौधे का एक सुन्दर चित्र बनाओ और उसके भागों को दिखलाओ। यह पौधा किन किन बातों में सेम से भिन्न है?

३. निम्नलिखित पर नोट लिखो :—

ऐन्थर; चोटी की कली (Terminal bud); फूलों का समूह (Inflorescence); पत्ती-चिह्न (Leaf-Scar); जड़-बाल (Root-hairs) और पैरासिटिक पौधे।

४. बाहरी बनावट के विचार से जड़ और तने में कौनसी भिन्नता है?

५. तुम कितने प्रकार के पौधे जानते हो? प्रत्येक प्रकार के पौधों के दो दो उदाहरण दो। एक घूमकर चढ़नेवाला पौधा पकड़कर चढ़नेवाले पौधे से किस प्रकार भिन्न है?

अध्याय २

बीज और उनका उगना

(Seeds and their Germination)

अंकुर का निकलना (Germination)—पौधे के भिन्न भिन्न अंगों के विषय में विस्तार पूर्वक ज्ञान प्राप्त करने के पहले यह जान लेना आवश्यक है कि पौधा कैसे उगता है। यह तो सभी जानते हैं कि पौधा बीज से उगता है। बीज का पौधे के रूप में परिवर्तित होने को उगना अर्थात् अंकुर का निकलना कहते हैं। एक छोटे से बीज के अन्दर पूरे पौधे के सारे गुण छिपी दशा में एकत्रित रहते हैं जो उगने के साधनों को पाकर उस पौधे में परिवर्तित हो जाते हैं।

बीज क्या है?—बीज पौधे का वह भाग है जो सेंचन क्रिया के पश्चात् पके हुए फल के ओव्यूल से प्राप्त हो, जिसमें पौधों के सभी गुण छिपी दशा में उपस्थित हों और जो आवश्यक साधनों को पाकर पौधे के रूप में परिवर्तित हो जायँ।

अंकुर निकलने के लिए आवश्यक साधन (Conditions necessary for germination)—यह तो सब ही जानते हैं कि प्रत्येक पौधा विशेष समय पर ही बोया जाता है और समय समय पर पानी पाता रहता है, जैसे—गेहूँ और मटर का पौधा कार्तिक के महीने में और धान असाढ़ में इत्यादि। इसका कारण यह है कि प्रत्येक पौधे को उगने और पनपने के लिए विशेष प्रकार की जलवायु की आवश्यकता होती है। लेकिन प्रत्येक बीज को उगने के लिए केवल (१) नमी, (२) आवश्यकता अनुसार गर्मी और (३) हवा चाहिये। इसको सिद्ध करने के लिए हम कुछ प्रयोग (Experiments) करें।

प्रयोग नं० १—यह देखना कि बीज में कितने भाग होते हैं।

बीज के भाग (Parts of a seed)—कुछ सेम के बीज को लेकर पानी में भिगो दो। चौबीस घण्टे भींगे रहने के पश्चात् उनको ध्यान

से देखो। ऊपर के छिलके को सीड-कोट या टेस्टा (Seed-coat or Testa) कहते हैं। बीज के पार्श्व में टेस्टा पर सफेद लम्बी रेखा होती है जिसको हाइलम (Hilum) कहते हैं। बीज को दबाने से हाइलम के ऊपर से कुछ पानी निकलता हुआ दिखलायी देगा। उस छिद्र को जिससे पानी निकलता है माइक्रोपाइल (Micropoyle) कहते हैं। इसी के द्वारा भिगोने पर पानी बीज के भीतर सोखता रहता है (चित्र ९१)।

अब टेस्टा को धीरे से निकाल दो। इसको निकालते समय तुम्हें इससे सटी हुई एक सफेद झिल्ली दिखलायी देगी जिसे टर्गम (Tergum) कहते हैं। छिलका निकाल देने पर बीज में दो दालें (Cotyledons) दिखलायी देंगी। ऐसे बीजों को जिनमें दो दालें पायी जाती हैं, दो दालवाले बीज (Dicotyledonous seeds) कहते हैं और ऐसे पौधों को दो दाल वाले पौधे (Dicotyledonous plants) कहते हैं; जैसे मटर, चना, सरसो रेंडी, लौकी इत्यादि। इसके विपरीत ऐसे बीजों को जिनमें केवल एक ही दाल हो, एक दाल वाले बीज (Mono-cotyledonous seeds) कहते हैं और ऐसे पौधों को एक दाल वाले पौधे (Mono-cotyledonous plants) जैसे गेहूँ, मक्का, जौ, ताड़ इत्यादि।
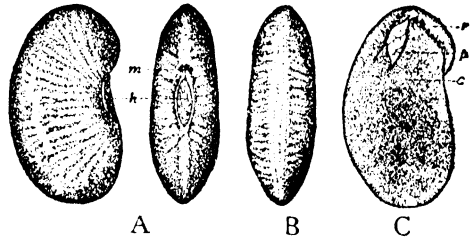
चित्र ९१—सेम का बीज और उसके भाग—A सामने और बगल से m—micropyle; h—hilum; B पीछे से; C एक दाल हटाने पर r—radicle; p—plumule; c—cotyledons.

अब इस बीज की दोनों दालों को फैला दो। इनके बीच जहाँ वे आपस में मिली रहती हैं तुम्हें एक विचित्र चोंच के रूप का अंग दिखलाई देगा। इसको एम्ब्रियो (Embryo) कहते हैं। इसके दो भाग होते है। चिकने कोनेदार भाग को रैडिकल (Radicle) कहते हैं जो आगे चलकर पहली

कुछ बीज लेकर एक टेस्ट ट्यूब (Test-tube) में डाल दो और उसे गर्म करो। गर्म करने पर कुछ नमी (पानी की बूँदें) बीज से निकल कर टेस्टट्यूब की भीतरी दीवारों में लग जायगी। यदि इन बीजों को पानी में भिगो दिया जाय और फिर गीले बुरादे में डाल दिया जाय तो इनसे अंकुर निकलते हुए दिखलायी नहीं पड़ेंगे। इससे यह सिद्ध होता है कि बीज की भीतरी नमी के अतिरिक्त बीज से अंकुर निकलने अथवा उगने के लिए ऊपर की नमी की आवश्यकता है (चित्र ९३)।
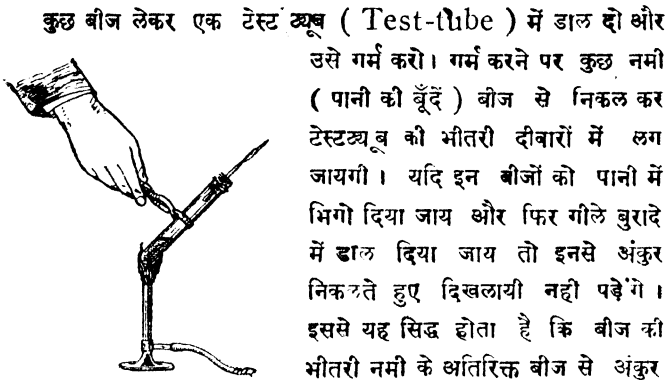
चित्र ९३—एक परख नली में कुछ बीजों को गरम करना।

प्रयोग नं० ४—यह देखना कि बीज से अंकुर निकलने के लिए वायु की आवश्यकता है।

वायु (Air)—कुछ सेम के बीजों को भिगो दो। दूसरे दिन उनमें से कुछ को नम बुरादे पर रख, खुली हवा में रख दो। बचे हुए बीजों को साधारण बैरोमीटर (Ordinary barometer) के ऊपरवाले खाली (Vacuum) भाग में रख दो। पारे से हलका होने के कारण बीज ऊपर चढ़ जायगा। पिपेट से कुछ पानी भी ऊपर चढ़ा दो। कुछ समय के पश्चात् वायु में रखे हुए बीजों से अंकुर निकल आयेंगे परन्तु बैरोमीटर के खाली भाग में रखे हुए बीज में कुछ भी न होगा। इससे यह सिद्ध होता है कि बीज से अंकुर निकलने और उगने के लिए वायु की आवश्यकता है।

प्रयोग नं० ५—यह देखना कि बीज से अंकुर निकलने और उगने के लिए एक उपयुक्त तापक्रम की आवश्यकता होती है।

उपयुक्त तापक्रम (Suitable temperature)—कुछ सेम के बीज भिगो दो। उनमें से कुछ को नम बुरादे पर रखकर वायु में रख दो। बचे हुए बीजों को एक दोहरी दीवाल वाले बरतन (Double walled

vessel) में रक्खे हुए नम बुरादे पर रख दो। बरतन की दोनों दीवालों के बीच के भाग को बर्फ या गर्म पानी से भर दो। इससे बीजों के चारों ओर का तापक्रम आवश्यकता से बहुत कम या अधिक हो जायगा फिर इसको वायु में रख दो। दो या तीन दिन के पश्चात् पहले बरतन में रखे हुए बीजों से अंकुर निकल आयेंगे और दूसरे से नहीं। इससे यह सिद्ध होता है कि प्रत्येक प्रकार के बीज से अंकुर निकलने और उगने के लिए उपयुक्त तापक्रम की आवश्यकता होती है (चित्र ९४)।
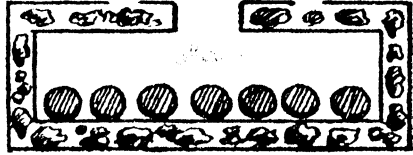
चित्र ९४—दोहरी दीवालवाला बर्तन जिसके भीतर बीज है और चारों ओर बर्फ।

प्रयोग नं० ६—यह देखना कि रैडिकिल नीचे पृथ्वी की ओर जाता है और प्ल्युम्यूल ऊपर की ओर।

चित्र ९५—बीज के उगने पर नमी वायु और उपयुक्त ताप क्रम का प्रभाव

रैडिकिल और प्ल्यूम्यूल के निकलने की दिशा (Direction of Radicle and Plumule)—कुछ सेम के बीज भिगा दो। एक गैस-जार (Gas-jar) लो और उसमें सोख्ता कागज को बेलनाकार (Cylindrical) बना कर डाल दो। थोड़ा पानी भी उसमें छोड़ दो। ऐसा करने से कागज नम हो जायगा। अब कुछ भिगोये हुए बीजों को सोख्ते और गैस-जार की दीवालों के बीच रख दो। बीजों को प्रतिदिन देखते रहो। कुछ समय के बाद अंकुर अर्थात् रैडिकल और प्ल्युम्यूल निकल आवेंगे। रैडिकल नीचे की ओर जाता हुआ दिखलायी देगा और प्ल्युम्यूल ऊपर की ओर।

अब इस बीज को इस प्रकार घुमाकर सोख्ते के बीच छोड़ दो जिसमें रैडिकल ऊपर की ओर आ जाय और प्ल्युम्यूल नीचे। अब इसको ध्यान से प्रतिदिन देखते रहो। रैडिकल धीरे धीरे घूमकर फिर नीचे की ओर जाने लगेगा और प्ल्युम्यूल घूमकर ऊपर की ओर। इससे यह ज्ञात होता है कि रैडिकल सर्वदा भूमि में नीचे की ओर जाता है और प्ल्युम्यूल ऊपर प्रकाश

की ओर। इसका कारण यह है कि पृथ्वी की आकर्षण शक्ति से रैडिकल पृथ्वी की ओर जाता है और प्ल्युम्यूल में प्रकाश की ओर जाने का गुण है।

इस प्रकार पौधे के उगने पर पृथ्वी के प्रभाव को जिऑट्रापिज़्म (Geotropism) कहते हैं और प्रकाश के प्रभाव को हीलियॉट्रापिज़्म (Heliotropism) कहते हैं। इस विषय में तुमको आगे चलकर और भी जानकारी प्राप्त होगी।

कुछ बीजों का उगना
(Germination of Various Seeds)

सेम का बीज (Bean seed)—कुछ सेम के बीजों को भिगा दो। एक दिन भिगोये रहने के पश्चात् उनको एक गैसजार में सोख्ते के बीच रख दो। गैसजार में थोड़ा पानी भी डाल दो जिसमें सोख्ता सदा नम रहे। एक अथवा दो दिन के बाद ऊपर का छिलका अर्थात् टेस्टा (Seed-coat or testa) बीज के भीतरी नमी के दबाव से फट जायगा। रैडिकल नीचे पानी की ओर जाने लगेगा। कॉटिलिडन्स अथवा दालें घूमकर ऊपर आने का प्रयत्न करती हुई दिखलायी देंगी। प्रारम्भ में ये दालें पीली रहती हैं परन्तु अब धीरे धीरे हरी होती हुई दिखलायी देंगी। दोनों दालों के बीच से प्ल्युम्यूल भी झाँकता हुआ दिखलायी देगा। इस प्रकार बीज से अंकुर फूटने और दालों के ऊपर आ जाने को इपीजियल रीति से उगना (Epigeal type of germination)
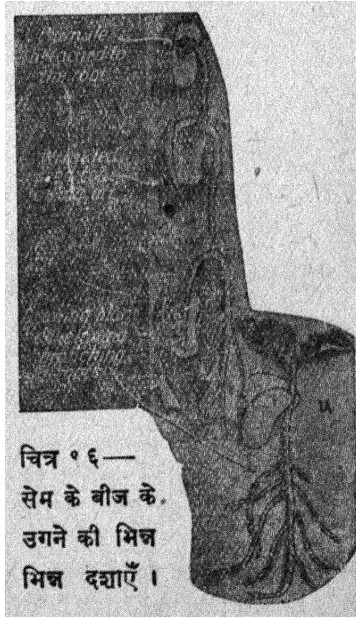
चित्र १६—सेम के बीज के उगने की भिन्न भिन्न दशाएँ।

कहते हैं। इसमें रैडिकिल और प्ल्युम्यूल के बीच के भाग को हाइपोकॉटिल

चित्र ९७—सरसो के बीज के उगने की भिन्न भिन्न दशाएँ।
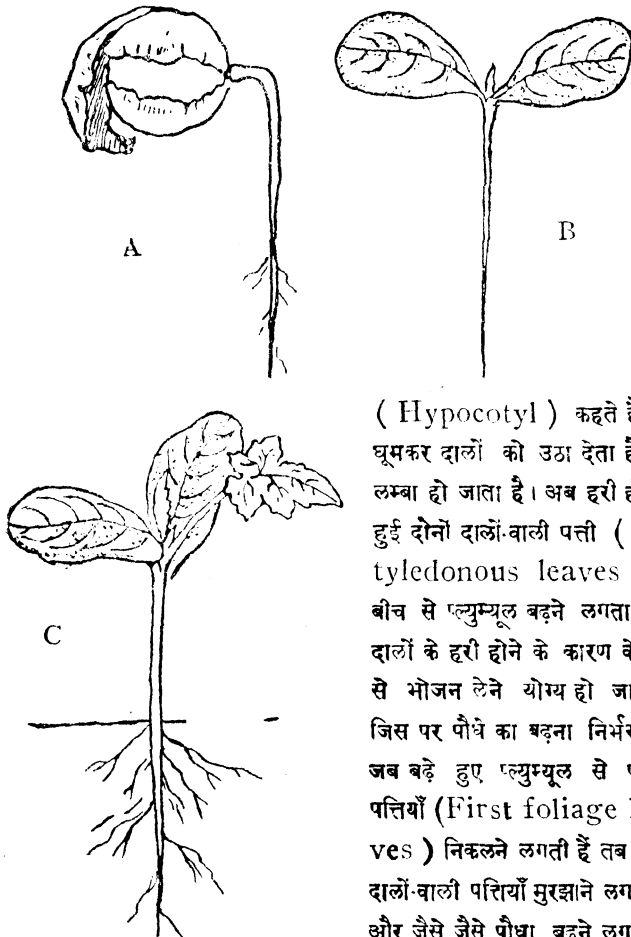
(Hypocotyl) कहते हैं जो घूमकर दालों को उठा देता है और लम्बा हो जाता है। अब हरी हो गई हुई दोनों दालों-वाली पत्ती (Cotyledonous leaves) के बीच से प्ल्युम्यूल बढ़ने लगता है। दालों के हरी होने के कारण वे वायु से भोजन लेने योग्य हो जाती हैं जिस पर पौधे का बढ़ना निर्भर है। जब बढ़े हुए प्ल्युम्यूल से पहली पत्तियाँ (First foliage leaves) निकलने लगती हैं तब दोनों दालों-वाली पत्तियाँ मुरझाने लगती हैं और जैसे जैसे पौधा बढ़ने लगता है और नयी पत्तियाँ निकलने लगती हैं, दालों वाली पत्तियाँ मुरझाती और छोटी होती जाती हैं और कुछ समय के पश्चात् गिर जाती हैं।

सरसो का बीज (Mustard seed)—इसके भी उगने और बढ़ने की रीति वैसी ही है जैसी की सेम की। इसकी दालें बाहर निकल आती हैं और हरी हो जाती हैं। इसी रीति से उगना सूर्यमुखी, और लौकी के बीजों में भी होता है। इन बीजों को तुम स्वयं उगा कर देखो और चित्र खींचो। लौकी के बीज के उगने में तुम जिन विशेष बातों को देखोगे, उन्हें लिखो (चित्र ९७)।

चने का बीज (Gram seed)—कुछ चने के बीज भिंगो दो। चौबीस घण्टे भिंगोये रहने के पश्चात् इनको नम बुरादे पर डाल दो अथवा गैस-जार के अन्दर रखे हुए नम सोख्ते के बीच रख दो। इन बीजों से अंकुर के निकलने को और उनके उगने को ध्यान से देखो। चने के बीज में सेम के बीज की भाँति लम्बा हाइलम नहीं होता। इसमें माइक्रोपाइल बीज के निकले हुए कोने पर होता है। रैडिकिल और प्ल्युम्यूल इसी में से निकलते हुए तुम्हें दिखलायी देंगे। चने के बीज की दोनों दालें बाहर नहीं निकलतीं और हाइपोकाटिल छोटा ही रह जाता है। इस प्रकार के बीज से अंकुर निकलने और उगने को हाइपोजियल रीति (Hypogeal type of germination) से उगना कहते हैं। रैडिकिल धीरे धीरे नीचे की ओर बढ़ता जाता है और जड़ का रूप धारण कर लेता है। प्ल्युम्यूल भी ऊपर की ओर बढ़कर डंठल और पत्तियों में बदल जाता है।

चित्र ९८—मटर के बीज के उगने की भिन्न भिन्न दशाएँ।

इसी भाँति अंकुर का निकलना और उगना मटर में भी पाया जाता है। इसके बीज को भी उगाकर देखो और चित्र खींचो। इसके अतिरिक्त रेंड़ी के बीज के उगने की भिन्न भिन्न दशाएँ देखो और चित्र खींचो (चित्र ९७)।

मक्का का बीज (Maize seed)—मक्का एक दाल वाले बीज का उदाहरण है। इसका उगना विचित्र प्रकार से होता है। इसलिए पहले इसके अन्दर का भाग देखना चाहिए। एक भींगे हुए बीज को छूरे

द्वारा बीच से काट लो। एक हैण्ड लेन्स (Hand lens) की सहायता से इसके भाग को ध्यान से देखो। इसमें दो भाग स्पष्ट रूप से दिखलायी देंगे। इसके बड़े चौड़े भाग में भोजन इकट्ठा रहता है जो बीज के उगने में काम आता है। इस भाग को एन्डोस्पर्म (Endosperm) कहते हैं। यह भोजन प्रत्येक बीज में कम अथवा अधिक मात्रा में रहता हैं परन्तु कुछ बीज में यह एक विशेष स्थान में इकट्ठा रहता है; जैसे रेंडी, गेहूँ और मक्का में। ऐसे बीजों को इन्डोस्पर्मिक बीज (Endospermic seeds) कहते हैं और इसके विपरीत वालों को नॉनएन्डोस्पर्मिक बीज (Non-endospermic seeds) कहते हैं जैसे सेम, मटर इत्यादि।

मक्का के बीज का दूसरा भाग छोटा और लम्बा होता है जैसा चित्र में दिखाया गया है। इस भाग को स्कूटेलम (Scutellum) कहते हैं (चित्र ९९)। इसी में एक प्रकार का एन्ज़ाइम पैदा होता है जो एन्डास्पर्म से भोजन को पिघला देता है, ताकि रैडिकल और प्ल्युम्यूल के बढ़ने के लिये सरलता के साथ भोजन मिल सके। इसी में ऊपर की ओर प्ल्युम्यूल और नीचे रैडिकल रहते हैं। ये दोनों एक परदे से ढँके रहते हैं।

चित्र ९९—कटा हुआ मक्का का बीज और उसके भीतरी भाग।

चित्र १००—मक्का के बीज के उगने की भिन्न भिन्न दशाएँ।

कुछ मक्का के बीजों को भिंगो दो। चौबीस घंटे भिंगोये रखने के पश्चात् उनको और बीजों की भाँति गैस-जार और नम सोख्ते के बीच में रख दो। इनसे

अंकुर के निकलने को और इनके उगने को ध्यान से देखते रहो। पहले रैडिकल निकलता है। मक्का का ऊपरी छिलका बहुत कड़ा होता है। इसको तोड़कर निकलने के लिए रैडिकल और प्ल्युम्यूल की झिल्लियों के सिरों से एक प्रकार का तेजाब निकलता है जिससे बीज का छिलका फट जाता है और रैडिकल और प्ल्युम्यूल सरलता के साथ बाहर निकल आते हैं। अब रैडिकल से बहुत सी छोटी छोटी झकड़ेदार जड़ें (Fibrous roots) निकलती हैं जो नम सोख्ते के चारों ओर फैलती हुई दिखलायी देंगी (चित्र १००)।

धीरे धीरे प्ल्युम्यूल भी अपने ऊपरी झिल्ली के सहारे निकल आता है और फिर उसी झिल्ली के भीतर से डण्ठल और पत्तियाँ भी निकलती हुई दिखलायी देंगी। प्रत्येक एक दालवाले बीज का उगना लगभग इसी प्रकार होता है ; जैसे—बाजरा, जौ, नारियल इत्यादि । इनमें से किसी एक को भिगोकर उससे अंकुर का निकलना और उसका उगना ध्यान से देखो और मक्का से उनकी तुलना करो।

अभ्यास

१. मटर अथवा मक्का के बीज की बनावट और उगने की दशाओं का उचित और सुन्दर चित्रों के द्वारा प्रदर्शन करो। [H. S. 1932]

२. सेम अथवा मक्का के बीज के भागों के नाम लिखो। उगने की अवस्था में जो परिवर्तन उसमें होते हैं उनका वर्णन करो और चित्रों को भी बनाओ। [H. S. 1937]

३. बीजों के उगने के लिए किन किन बातों का होना आवश्यक है ? अपने उत्तर की सत्यता सिद्ध करने के लिए तुम कौन कौन से प्रयोग करोगे ? [H. S. 1934]

४. निम्नलिखित पर नोट लिखो :—

दालें ; एण्डोस्पर्म ; स्कूटलम ; हाइपोकाटिल।

५. एपीजियल और हाइपोजियल रीतियों से उगने में क्या अन्तर है ? सुन्दर चित्रों के द्वारा प्रत्येक का एक एक उदाहरण दो।

६. 'उगना' से तुम क्या अर्थ समझते हो? चने के बीज का उदाहरण लेकर चित्रों के द्वारा वर्णन करो कि उसके उगने में किन किन बातों का होना आवश्यक है।

७. उगने पर निम्नलिखित का क्या प्रभाव पड़ता है :—

(१) आकर्षण शक्ति; (२) प्रकाश; (३) जल। प्रत्येक को सिद्ध करने के लिए प्रयोग लिखो :—

८. निम्नलिखित का उगने की दशा में क्या काम है :—

(क) दालें; (ख) एण्डोस्पर्म; (ग) स्कूटलम (घ) रैडिकल और (ङ) प्लुम्यूल।

अध्याय ३

जड़ (Root)

भिन्न भिन्न प्रकार की जड़ें (Kinds of roots)—पेड़ का वह भाग जो पृथ्वी में रहता है और जो पेड़ को दृढ़ता के साथ पृथ्वी के भीतर थामे रखता है, जड़ है। इसके अतिरिक्त जड़ पृथ्वी के बाहर भी किसी किसी पौधे में पायी जाती है; जैसे—बरगद, मक्का इत्यादि में। अथवा यह भी कहा जा सकता है कि पौधे का वह भाग जिसके अन्त में जड़ की टोपी (Root-cap) हो जड़ कहलाता है। बीज से सबसे पहले निकली हुई जड़ को पहली जड़ कहते हैं। फिर इससे निकली हुई बहुत सी और जड़ें होती हैं जिनको दूसरी जड़ कहते हैं। कभी कभी जड़ें अपने असली स्थान से न निकल कर पौधे के किसी और भाग; जैसे—
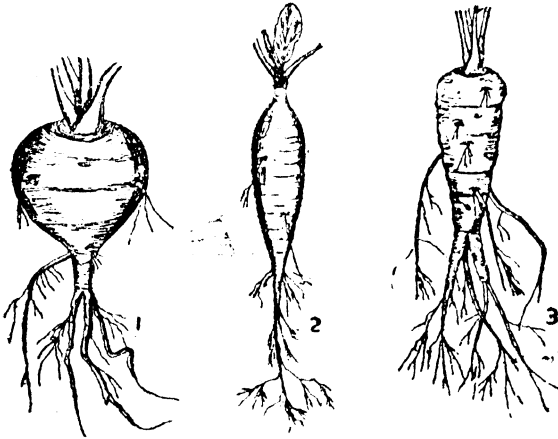
चित्र १०१—भिन्न भिन्न प्रकार की मूसला जड़ें—(१) नेपिफार्म; (२) फियूजीफार्म; (३) कोनिकल।

डण्ठल, पत्ती इत्यादि से निकल आती हैं। ऐसी जड़ों को ऍडवेंटिशस जड़ें (Adventitious roots) कहते हैं।

जब पहली जड़ बराबर बढ़ती जाती है तो उसे मूसला जड़ अथवा टैप रूट (Tap root) कहते हैं जैसा कि लगभग प्रत्येक दो दाल वाले पौधे में पाया जाता है। टैप रूट भी कई प्रकार की होती हैं। (१) वे टैप रूट जो मोटी हो जाती हैं परन्तु ऊपर की ओर कुछ पतली हो गई हों, फ़्यूजीफार्म जड़ (Fusiform root) कही जाती हैं, जैसे गाजर (२) वे टैप रूट जो कोनादार हो गई हो, जैसे मूली, कॉनिकल जड़ (Conical root) कहलाती हैं और (३) वह टैप रूट जो ऊपर की ओर बहुत मोटी हो गई हो, जैसे शलजम, उसे नेपीफार्म जड़ (Napiform root) कहते हैं (चित्र १०१-२, ३, १)।

दूसरी प्रकार की जड़ें वे हैं जिनमें पहली जड़ छोटी ही रह जाती है ; परन्तु पृथ्वी के कुछ ही अन्दर बहुत सी पतली पतली दूसरी जड़ें निकलकर सतह पर फैली रहती हैं। इन जड़ों को झकड़ा जड़ें (Fibrous root) कहते हैं। यह अधिकतर एक दाल वाले पौधे में पायी जाती हैं; जैसे घास ऐसपैरेगस (Asparagus), बाँस इत्यादि में।

इनके अतिरिक्त पेड़ के अन्य भागों से भी जड़ें निकलती हैं जिनको एडवेन्टिशस जड़ें कहते हैं। ये भी कई प्रकार की होती हैं; जैसे (१) बरगद के डंठल से निकली हुई हवा में लटकती हुई जड़ें, इनको ऐरियल जड़ें (Aerial root) कहते हैं। (२) ब्रायोफाइलम (Bryophyllum) की पत्ती के नोकों से निकली हुई जड़ें ; इन्हें पत्तीदार जड़ें (Leafy roots) कहते हैं। (३) पौधे के चढ़ने में मदद देनेवाली जड़ें जो लताओं में पायी जाती हैं ; इनको चढ़नेवाली जड़ें (Climbing roots) कहते हैं। (४) कुछ पौधों की जड़ें दूसरे पौधे के अन्दर प्रवेश कर उस पौधे का भोजन खींचती हैं; जैसे बंझा (Loranthus), आकाश बेलि (Cuscuta) इत्यादि में। इन जड़ों को पॅरासाइटिक जड़ें अथवा हास्टोरिया (Parasitic roots or Haustoria) कहते हैं ; (५) कुछ जड़ें अपने में खाद्य पदार्थ रखती हैं और मोटी हो जाती हैं; इन्हें ट्यूबरस जड़ें (Tuberous roots) कहते हैं जैसे कंद, सुथनी इत्यादि (चित्र १०२)। (६) कुछ पानी वाले पौधों में जड़ें पानी के अन्दर लटकी

रहती हैं; इन जड़ों को ऍक्वाटिक जड़ें (Aquatic roots) कहते हैं,
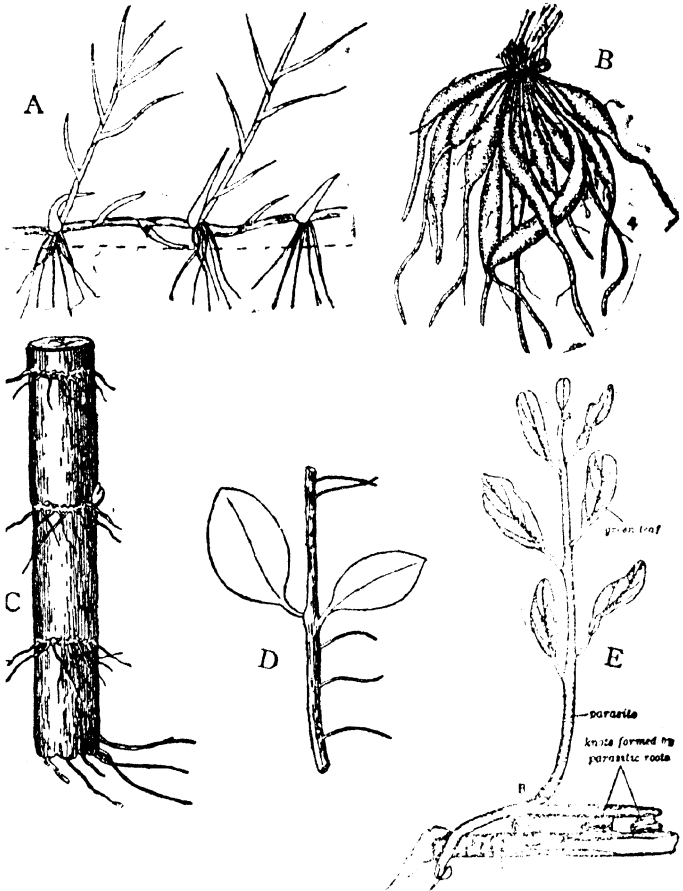
चित्र १०२—A घास की झकड़ी जड़ें; B एसपेरेगस की रूट ट्यूबर; C मक्का की एडवेन्टिसस जड़ें; D बरगद की लटकती हुई जड़ें; E बंझा की पेरासिटिक जड़ें ।

जैसे सिंघाड़े की जड़ें ।

जड़ों का कार्य (Functions of roots)—जड़ों के दो मुख्य काम हैं। (१) पेड़ को भूमि के अन्दर इतनी दृढ़ता के साथ बाँध रखना जिसमें हवा के झकोरों से पौधे को कोई हानि न पहुँच सके अर्थात् पौधा उखड़ न जाय और (२) जमीन से पौधे के लिए पानी और नाइट्रेट्स (Nitrates) के रूप में भोजन खींचना। किसी किसी पौधों की जड़ों में भोजन पदार्थ भी एकत्रित रहता है जैसे शकरकंद।

अब हम यह देखें कि जड़ों की ये दोनों क्रियाएँ किस प्रकार होती हैं।

पहला कार्य किस प्रकार होता है?—पहला काम करने के लिए जड़ें भूमि के अन्दर बहुत दूर तक चली जाती हैं। मार्ग में उन्हें बहुत सी रुकावटें मिलती हैं जिन्हें वे अपनी ऊपर लगी हुई रूट कैप के द्वारा हटाती या तोड़ती जाती हैं अथवा घूम जाती हैं। रूट कैप के सिरे से एक तेजाबी अंश निकलता है जो मार्ग की साधारण रुकावटों को कोमल कर देता है और जड़ के आगे बढ़ने के लिए रास्ता सरल कर देता है। इसके अतिरिक्त जड़ें भूमि के अन्दर घुसकर मिट्टी के कणों से बँध जाती हैं। पौधे जड़ों के कारण इतनी दृढ़ता के साथ बँधे रहते हैं कि बड़े बड़े पेड़ों की कटी हुई जड़ों को उखाड़ने के लिए बड़ी शक्ति की आवश्यकता होती है।
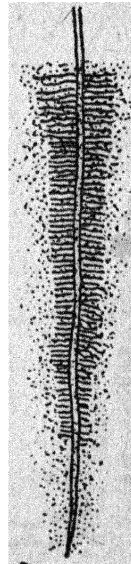
चित्र १०३—जड़-बालों के चारों ओर बालू के नम कण।

दूसरा कार्य किस प्रकार होता है?—जड़ें अपना दूसरा कार्य, अर्थात् पृथ्वी से पानी और भोजन सम्बन्धी वस्तुओं का खींचना, बहुत विचित्र प्रकार से करती हैं। जैसे जैसे नई नई जड़ें निकलती जाती हैं इनके सिरे पर जड़-टोपी के अतिरिक्त बहुत से सूक्ष्म जड़-बाल भी होते जाते हैं जो जड़-टोपी के पीछे होते हैं (चित्र १०३)। ये बाल बहुत ही मुलायम और प्रोटोप्लाज्म (Protoplasm) से भरे रहते हैं। इनके चारों ओर मिट्टी के छोटे छोटे नम कण लगे रहते हैं। इन्हीं

नम कणों से पानी जड़ के बालों में बराबर जाया करता है। पानी के साथ साथ कुछ नाइट्रेट्स और अन्य पदार्थ भी चले जाया करते हैं। अब यह जानना चाहिये कि यह कार्य किस प्रकार होता है।

आसमोसिस का सिद्धांत (Principle of Osmosis)—

सिद्धांत को दिखलाने के लिए एक साधारण प्रयोग।

प्रयोग नं० ७—मुर्गी का एक अण्डा लेकर उसके एक सिरे पर चार या पाँच इंच की एक शीशे की नली मोम से चिपका दो। दूसरे सिरे से थोड़ी ऊपर की कड़ी वस्तु हटा दो ताकि उसके नीचे की पतली झिल्ली टूटने न पावे। अब इसको किसी पानी से भरे हुए बीकर (Beaker) या बरतन में डाल दो। शीशे की नली के भीतर से एक सूई अथवा लम्बी आलपीन द्वारा अण्डे में एक पतला छिद्र कर दो। थोड़ी देर के बाद झिल्ली द्वारा बीकर का पानी धीरे धीरे अण्डे में प्रवेश करने लगेगा और अण्डे के भीतर दबाव पड़ने के कारण उसके ऊपर की आलपीन द्वारा बनाये हुए छिद्र से अण्डे का तरल पदार्थ शीशे की नली में चढ़ता हुआ दिखलायी देगा। इस तरह पानी अण्डे में पतले घोल (Weaker solution) से गाढ़े घोल (Stronger solution) में प्रवेश कर जाता है। किसी तरल पदार्थ के दूसरे तरल पदार्थ में चले जाने के इस नियम को ऑसमोसिस (Osmosis) कहते हैं। ऑसमोसिस दो भिन्न भिन्न चीनी या नमक के

घोल में विशेष रूप से मालूम किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त मुनक्के को पानी में डालने पर भी तुम ऑसमोसिस का अध्ययन कर सकते हो (चित्र १०४)।

ऑसमोसिस के द्वारा जो दबाव अण्डे में पड़ता है उसे ऑसमोटिक दबाव (Osmotic pressure) कहते हैं। ठीक इसी नियम के अनुसार मिट्टी के नम कणों से पानी का खींचना जड़ के बालों में होता रहता है (चित्र १०३)। जड़ के बालों के भीतर का घोल पत्तियों द्वारा पानी के उड़ जाने के कारण भूमि के कणों के चारों ओर के घोल से अधिक गाढ़ा हो जाता है। इसलिए इन कणों से पानी नाइट्रेट्स इत्यादि के साथ इन बालों में प्रवेश कर जाता है जिसके कारण पानी जड़ से तने के ऊपर चढ़ता रहता है। इस दबाव को जड़ का दबाव (Root pressure) कहते हैं। इसको देखने के लिए नीचे लिखे हुए प्रयोग को करो।

जड़ का दबाव (Root pressure)— प्रयोग नं० ८—किसी गमले में लगे हुए एक पौधे को निकाल लो और तुरन्त पानी से भरी हुई एक बाल्टी में डाल दो। पौधे को जड़ और डंठल के बीच पानी के अन्दर ही किसी तेज चाकू से काट दो। कटे हुए जड़ के भाग पर पानी के भीतर ही एक रबर की नली (Rubber tubing) लगा दो, ताकि यह उसमें अच्छी तरह बैठ जाय। रबर की नली के दूसरी ओर से एक घुमावदार शीशे का मैनोमीटर (Manometer) लगा दो जिसमें तेल अथवा पारा पड़ा हो। कुछ समय के पश्चात् तेल या पारा
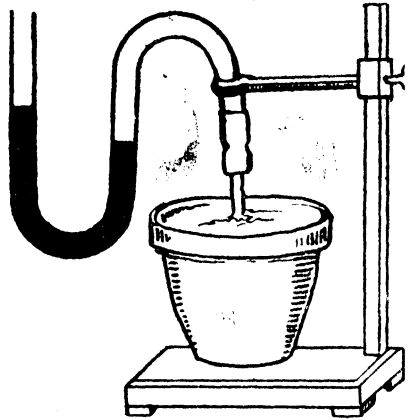
चित्र १०५—जड़ का दबाव दिखलाने का प्रयोग।

शीशे की नली में खुले हुए छिद्र की ओर कुछ उठा हुआ दिखलायी देगा, जैसा कि चित्र १०५ में दिखलाया गया है। तेल या पारा अन्दर से दबाव पड़ने के कारण दूसरी ओर चढ़ जाता है। यह दबाव जड़ के अन्दर पानी के चढ़ जाने के कारण होता है, जैसा कि तुमने प्रयोग ७ में देखा था। इस दबाव को जड़ का दबाव कहते हैं।

इन सारे मुख्य कामों के अतिरिक्त जड़ के कुछ और भी काम हैं जो मुख्य मुख्य पौधों में देखे जाते हैं। जैसे जड़ में भोजन सामग्री इकट्ठी होती रहती है जिसको मनुष्य अथवा अन्य जानवर खाते रहते हैं; जैसे गाजर, मूली, चुकन्दर, शकरकन्द और सुथनी इत्यादि। शकरकन्द और सुथनी को ट्यूबरस जड़ें (Tuberous roots) भी कहते हैं। इस प्रकार की जड़ें ऐस-परेगस और डेहलिया (Dahlia) में भी पायी जाती हैं। जड़ों का काम मिट्टी को भली भाँति बाँध कर रखना भी है, ताकि नदियों के किनारों की मिट्टी बाढ़ या धारा के कारण टूट कर बहने न पावे। यही कारण है कि नदियों के किनारे जंगल होने से बाढ़ का पानी जंगल के दूसरी ओर के गावों में प्रवेश नहीं करने पाता और न मिट्टी ही कटती है।

अभ्यास

१. ठीक ठीक बतलाओ कि पौधे भूमि से किस प्रकार भोजन पदार्थ प्राप्त करते हैं? बीज के अतिरिक्त पौधे के किन किन भागों में भोजन पदार्थ एकत्रित रहता है? [H. S. 1937]

२. 'जड़ का दबाव' क्या है? इसके उत्तर के हेतु एक प्रयोग का वर्णन करो। [H. S. 1939]

३. 'आसमोसिस' के कार्य को समझाओ। जड़-बाल किस प्रकार पौधे के लिए मिट्टी से भोजन पदार्थ खींचते हैं? [H. S. 1940]

४. निम्नलिखित पर नोट लिखो:—

जड़ के बाल, मूसला जड़; पैरोसीटिक जड़ें; आसमाटिक दबाव; जड़-टोपी। [H. S. 1933 and 38]

५. जड़ों के क्या कार्य हैं? प्रयोग द्वारा वर्णन करो कि ये कार्य किस प्रकार होते हैं?

६. जितने प्रकार की जड़ों को तुम जानते हो उनका नाम लिखो। चढ़ने वाली जड़ें, वायु में लटकने वाली और पैरोसीटिक जड़ों से किस प्रकार भिन्न हैं ?

७. एडवेन्टिशस जड़ों के बारे में तुम क्या जानते हो? ये जड़ें झकड़े और मूसला जड़ों से किस भाँति भिन्न हैं ?

८. जड़-गाँठ (Root-tubers) क्या है? इन के ६ ऐसे उदा-हरण दो जिन्हें तुमने स्वयं देखा हो। उनके मुख्य कार्य क्या हैं ?

अध्याय ४

तना (Stem)

जड़ और तने की भिन्नता (Difference between Root and Stem)—तना पौधे का वह भाग है जो जड़ और पत्तियों के बीच में रहता है। परन्तु इतना ही कह देना पर्याप्त नहीं है क्योंकि अनेक प्रकार के तने भूमि के नीचे भी पाये जाते हैं। इसलिए यह मालूम करना आवश्यक है कि जड़ और तने में कौन कौन सी भिन्नता है।

(१) जड़ के सिरों पर रूटकैप रहता है परन्तु तनों के सिरों पर फूल अथवा पत्ती की कलियाँ रहती हैं।

(२) तनों से जितने भाग निकलते है वे तनों से भिन्नता रखते हैं; जैसे पत्तियाँ, फूल इत्यादि। जड़ों से जितने भाग निकलते हैं वे जड़ के ही रूप होते हैं।

(३) जड़ों से जब दूसरी जड़ें निकलती हैं तो वे जड़ के भीतरी कोष्ठों (Deep-seated layers of cells) से निकलती हैं अर्थात् इनका निकलना भीतर से होता है। इस प्रकार के निकलने को एन्डोजेनस (Endogenous) कहते हैं। तनों से जितनी शाखाएँ अथवा भाग निकलते हैं वे तनों के ऊपरी कोष्ठों (Superficial layer of cells) से निकलते हैं। इस प्रकार के निकलने को एक्सोजेनस (Exogenous) कहते हैं।

(४) जड़ साधारणतया पीला और चिकना होता है परन्तु तने सर्वदा खुरखुरे अथवा बालदार और हरे अथवा भूरे होते हैं।

तनों का कार्य (Functions of Stems)—तना पौधे का एक मार्ग है जिसके द्वारा पानी और भोजन जड़ से पौधे के भिन्न भिन्न भागों में पहुँचा करता है। पत्तियों से भी तैयार किया हुआ भोजन तनों के द्वारा पौधे के भागों में जाया करता है। इसके अतिरिक्त तना पत्तियों को पर्याप्त

ऊँचाई पर उठाये रहता है जिससे पत्तियों को प्रकाश मिल सके और वे भोजन बनाने में सफलता प्राप्त कर सकें। तनों का काम भोजन को अपने में एकत्रित करना भी है जैसे ईख अथवा अन्य प्रकार के तने जो तरकारियों में पकते हैं और मिट्टी के नीचे पाये जाने वाले तने जैसे आलू, अरुई इत्यादि।

तने के भाग (Parts of Stem)—तनों के दो मुख्य भाग हैं। (१) वह भाग जिसको गाँठ (Node) कहते हैं (२) दो गाँठों के बीच के भाग को गाँठों के बीच का भाग अथवा इंटरनोड (Internode) कहते हैं। तनों से गाँठों पर ही पत्तियाँ, फूल, डालियाँ इत्यादि निकलती हैं। बहुत से तनों में गाँठें स्पष्ट नहीं रहतीं।

शाखाओं का निकलना (Branching)—तनों से शाखाएँ कई प्रकार से निकलती हैं। (१) प्रत्येक गाँठ पर चाहे बाईं अथवा दाईं ओर शाखाएँ निकलती हैं। इसको ऑल्टरनेट ब्रांचिंग (Alternate-branching) कहते हैं। (२) प्रत्येक गाँठ पर दोनों ओर शाखाएँ रहती हैं। इसको अपोजिट ब्रांचिंग (Opposite branching) कहते हैं जैसा कि चित्र १०६ में दिया हुआ है।
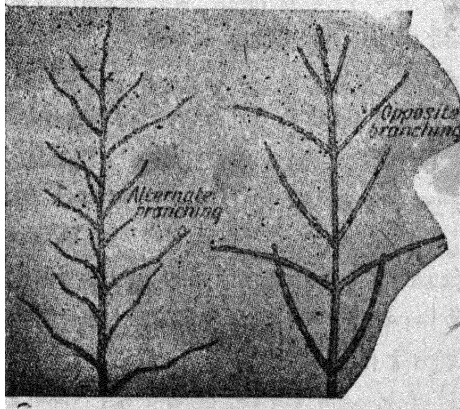
चित्र १०६—शाखाओं का भिन्न भिन्न प्रकार से निकलना

इनके अतिरिक्त और भी अन्य प्रकार से शाखाएँ निकला करती हैं।

तनों की किस्में (Kinds of Stems)—तने भी कई प्रकार

के होते हैं—(१) सीधे तने (Straight stems) जो अपने बल पर ही दृढ़ता के साथ खड़े रहते हैं; जैसे आम, पीपल इत्यादि के तने, (२) कमजोर तने (Weak stems) जो अपने किसी अंग के परिवर्तित हुए भाग के सहारे सँभले रहते हैं; जैसे सरसों, मेंहदी, मटर इत्यादि के तने। कमजोर तनों के भी कई भाग होते हैं (१) रेंगता हुआ तना (Creeping stem), (२) चढ़ता हुआ तना (Ascending stem) (३) दूसरे प्रकार का चढ़ता हुआ तना (Climbing stem) जो ट्रेंड्रिल्स (Tendrils) के सहारे चढ़ता है, (४) लपेटता हुआ तना

चित्र १०७—भिन्न भिन्न प्रकार के तने।

(Twining stem) जो किसी वस्तु के चारों ओर लिपट कर चढ़ते हैं (चित्र १०७)।

मिट्टी के नीचे पाये जानेवाले तने (Underground Stems)—तने भूमि के नीचे भी पाये जाते हैं। पर ये भी कई प्रकार के होते हैं—(१) रनर (Runner); जैसे घास, (२) राइज़ोम (Rhizome); जैसे बण्डा, अरुई, अदरख। नरम प्रकार के राइज़ोम को कॉर्म (Corm) कहते हैं; जैसे केला अथवा बैजयन्ती की पुत्तियाँ। (३) बल्ब (Bulb); जैसे प्याज, लहसुन, (४) स्टेम ट्यूबर (Stem-tuber); जैसे आलू। इसमें कुछ छोटे छोटे गड्ढे होते हैं जिनमें छोटी छोटी कलियाँ होती हैं जिनको आँखें (Eyes) कहते हैं (चित्र १०८)।

इनके नये पौधे बीज से नहीं उत्पन्न किये जाते बल्कि भिन्न भिन्न प्रकार से इन्हीं को काट कर अथवा कलम बाँधकर नये पौधे तैयार किये जाते हैं।
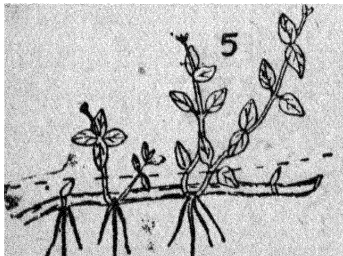
चित्र १०८—भिन्न भिन्न पकार के तने जो मिट्टी के नीचे पाये जाते हैं; जैसे आलू. अरुई. प्याज. लहसुन.

नये पौधों का उसी पौधे के अन्य भागों से उत्पन्न होना (Vegetative propagation)-बीज से नये पौधे न तैयार कर यदि

ये उत्पन्न किये जायँ तो इस रीति को वेजीटेटिव रिप्रोडक्शन अथवा वेजीटेटिव प्रोपेगेशन (Vegetative Reproduction or Vegetative Propagation) कहते हैं। यह क्रिया कई प्रकार से होती है। जैसे—

(१) भूमि के अन्दर पाये जानेवाले पौधों से; जैसे राइज़ोम (अरुई, सूरन, बण्डा इत्यादि) से। यदि इनके नोकदार उभड़नों को जो कलियों की भाँति प्रतीत होती हैं, तोड़ लिया जाय और बोने के समय उनको बो दिया जाय तो उनसे उसके नये पौधे निकल आवेंगे।

(२) इसी प्रकार केले या बैजयन्ती की पुत्तियाँ भी भूमि के नीचे पायी जाती हैं जिनको निकाल कर यदि दूसरी जगह लगाया जाय तो उनसे नये पौधे निकल आते हैं।

(३) प्याज़ और लहसुन भी इसी प्रकार अधिकतर उत्पन्न किये जाते हैं। जब प्याज़ बोने का समय आता है तो उसमें से कलियाँ निकलने
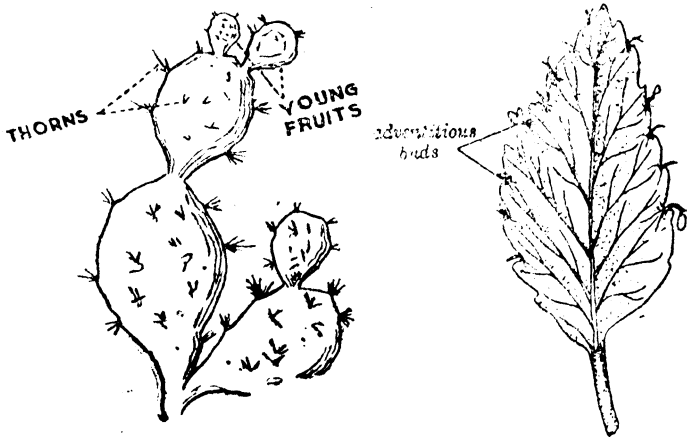
चित्र १०९—नागफनी और ब्रायफाइलम की पत्तियाँ जिसमें से कलियाँ निकलती हैं।

लगती हैं। जिनको नम ज़मीन में गाड़ देने से उस साल का भाग अथवा बल्ब नये साल के बल्ब के तैयार होने में काम आ जाता है।

ठीक इसी प्रकार लहसुन में भी उसके सारे छोटे छोटे टुकड़ों को लेकर समय पर बो देने से नये पौधे निकल आते हैं।

(४) यदि आलू को भी कई टुकड़ों में काटा जाय ताकि प्रत्येक टुकड़े में एक आँख (Eye) हो और यदि इन टुकड़ों को समय पर बो दिया जाय तो इनसे नये पौधे निकल आवेंगे। इन पौधों में बहुत से आलू के स्टेम ट्यूबर्स पाये जायँगे जो भूमि के नीचे गड़े रहते हैं (चित्र १०८)।

(५) कुछ पौधे की पत्तियाँ जैसे ब्रायोफाइलम (Bryophyllum) और नागफनी (Opuntia) (यह याद रखने योग्य है कि नागफनी की पत्ती तने का परिवर्तित रूप है जो हरा हो कर पत्तो का कार्य करने लगता है।), सेंहुण (Cactus) इत्यादि को यदि कई टुकड़ों में काट लिया जाय ताकि प्रत्येक टुकड़े में कली हो और यदि इनको नम स्थान में रख दिया जाय तो प्रत्येक टुकड़े से नये नये पौधे निकल आवेंगे।

(६) काट कर लगाना (Cutting)—(i) कुछ पौधों के तनों को यदि कई टुकड़ों में काट दिया जाय ताकि प्रत्येक टुकड़े में एक गाँठ हो और फिर इनको समय पर नम मिट्टी में रख दिया जाय तो गाँठों से कली निकल आती है और पूरा पौधा तैयार हो जाता है; जैसे ईख, बाँस इत्यादि।

(ii) कुछ पौधों के तनों को जिनमें गाँठ स्पष्ट नहीं रहती यदि काट कर नम स्थान में गाड़ दिया जाय तो इनसे कलियाँ निकल कर बहुत सी डालियों में परिवर्तित हो जाती हैं, और फिर पूरा पौधा तैयार हो जाता है।

इन रीतियों को कटिंग (Cutting) कहते हैं। बागों के बहुत से फल, पौधे और झाड़ियाँ जैसे गुलाब, सहजन, मेंहदी इत्यादि इसी प्रकार लगायी जाती हैं।

(७) कलियों का लगना (Budding)—(i) इस रीति में किसी पौधे से कली निकाल कर उसी वंश के दूसरे पौधे में लगा दी जाती है तो वह उसमें उगने लगता है। (ii) अच्छे पौधों से कली चारों ओर छिलके के साथ निकाल ली जाती है और उसी वंश के दूसरे पौधे में T जैसे चीर कर उसके छिलके के नीचे लगा दी जाती है। फिर वह भली भाँति बाँध दिया जाता है जिससे कली बढ़कर शाखा हो जाती है।

(८) कलम लगाना (Grafting)—इस रीति में अच्छे पौधे की शाखा को जिसमें बहुत सी कलियाँ होती हैं, काट लिया जाता है और किसी उसी वंश के साधारण पौधे में लगा दिया जाता है। फिर उसको भली प्रकार बाँध दिया जाता है। शाखा साधारण पौधे से अपना भोजन लेकर बढ़ने लगती है। इसी को हम लोग कलम करना कहते हैं जो भारतवर्ष में बहुत दिनों से प्रचलित है। इसी रीति से भिन्न भिन्न प्रकार के आम जैसे—लँगड़ा, सफेदा, सुकुल इत्यादि तैयार किये गये हैं।
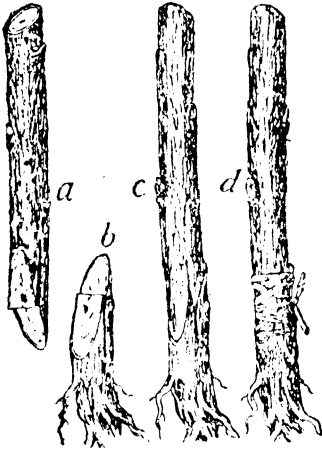
चित्र ११०—कलम लगाने की रीतियाँ।

मिट्टी में गाड़े गये डंठलों को लगाना (Layering)—इसमें किसी पौधे (जैसे नीबू, नारंगी इत्यादि) का तना नीचे झुका दिया जाता है और वह भूमि में अच्छी तरह गाड़ दिया जाता है। फिर मिट्टी से ढँक कर इसमें पानी दे दिया जाता है। कुछ समय के पश्चात् इसमें से ऍडवेन्टिशस जड़ें (Adventitious roots) निकल कर पृथ्वी के भीतर चली जाती हैं। अब यदि इस डंठल को काट कर पृथ्वी के नीचे से जड़ के साथ निकाल लिया जाय और किसी दूसरे नम स्थान में लगा दिया जाय तो यह पौधा पूरा बढ़ कर पेड़ हो जाता है। विशेष कर नीबू के नये पौधे इसी प्रकार तैयार किये जाते हैं।

नये पौधे को उत्पन्न करने की प्रथा भारतवर्ष में बहुत दिनों से प्रचलित है। इस प्रथा में उगते हुए पौधे नष्ट नहीं होते जितने बीजों से उगाये हुए पौधे की होते हैं। इसके अतिरिक्त इस रीति से मनुष्य नये नये पौधे अपनी इच्छा के अनुसार उत्पन्न कर सकता है। यहाँ

यह बतला देना बहुत ही आश्चर्यजनक होगा कि अमेरिका के एक चतुर माली ने जिसका नाम लूथर बरबैंक (Luther Burbank) था, आलू (Potato) के पौधे में टमाटर (Tomato) की कलम इस प्रकार लगा दी कि उस पेड़ के ऊपर की डालियों में टमाटर फल लगे और मिट्टी के नीचे के भाग में आलू।

प्रयोग नं० ९—यह सिद्ध करना कि तने से होकर ही जड़ से पानी ऊपर की ओर जाता है।

एक कोमल तना और पत्ती वाला पौधा प्राकृतिक निरीक्षण के बाग (Nature- study garden) से ले लो जिसमें फूल निकले हों और सफेद हों जैसे सफेद फूल वाली गुलमेंहदी। अब जड़ में लगी हुई मिट्टी को अच्छी तरह धोकर उसे पानी में रख दो। एक बीकर में पानी लो और उसमें थोड़ा ईयोसीन (Eosin) या लाल रोशनाई का टुकड़ा डाल दो ताकि वह उसमें घुल जाय। अब पौधे को इसमें रख दो ताकि पौधे की जड़ लाल पानी में रहे और आगे का शेष भाग ऊपर। इसे कुछ समय के लिए इसी प्रकार छोड़ दो। तत्पश्चात् पत्तियों की नसें कुछ कुछ लाल होती हुई दिखायी देंगी। यदि सफेद फूल लगे हों तो ये लाल होते हुए प्रतीत होंगे। यह लालिमा कहाँ से आई? जड़ों से लाल पानी तने के द्वारा चढ़कर पत्तियों और फूलों को लाल कर देता है। इससे तने का यह कार्य सिद्ध हो जाता है।

अब यदि इस तने का पतला क्षितिजखंड लिया जाय और उसे अनुवीक्षण यन्त्र के नीचे देखा जाय तो उसके मुख्य मुख्य गोलाई में लगे हुए भाग लाल रंग के प्रतीत होंगे। इस भाग को वॅस्कुलर बण्डल्स (Vascular bundles) कहते हैं। यदि ध्यान से देखा जाय तो इन गुच्छों के भीतरी भाग ही लाल होंगे। जिनको जाइलम (Xylem) कहते हैं। और बाहरी भाग को फ्लोएम (Phloem) कहते हैं (चित्र १११)। इन भागों के अतिरिक्त तने में जाइलम और फ्लोएम के बीच एक मुख्य भाग होता है जिसे कैम्बिम (Cambium) कहते हैं। यह एक दाल वाले पौधों की तनों में नहीं पाया जाता। यह भाग

शाखाओं के निकलने में सहायता देती है। इन भागों के बाहर कार्टेक्स (Cortex) और छिलका (Epidermis) होते हैं जो तनों के भीतरी भागों को सुरक्षित रखते हैं।
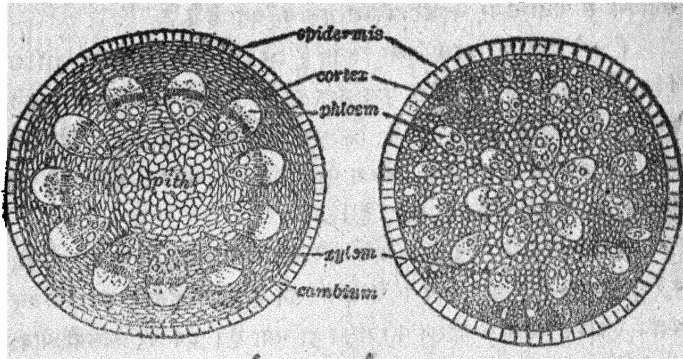
चित्र १११—दो दाल और एक दाल वाले पौधों के तने का क्षितिज खंड।

तनों का परिर्त्तित रूप (Modifications of Stem)—कुछ पौधों के किसी भाग में अथवा पूरे पौधे में तना अपने यथार्थ रूप में न रहकर आवश्यकता के अनुसार कई रूपों में बदल जाता है। इन रूपों को बदला हुआ तना (Modified stem) कहते हैं। यह देखने में तना मालूम नहीं पड़ता परन्तु सचमुच तना ही होता है। यह कई प्रकार का होता है; जैसे—

(१) पत्ती में बदला हुआ तना (Stem modified into leaf)—यह अधिकतर रेगिस्तान में पाये जाने वाले पौधों में पाया जाता है; जैसे नागफनी, सेहुंड इत्यादि। पानी को उड़ जाने से (Transpiration) कम करने के लिए और अधिक से अधिक पानी अपने में रखने के लिए तना पत्तियों में बदल जाता है।

(२) काँटे में बदला हुआ तना (Stem modified into spine)—अपने को शत्रुओं से बचाने के लिए कुछ पौधों के तने किसी किसी भाग पर काँटों के रूप में बदल जाते हैं, जैसे—बेल में। इस तरह हो जाने पर पानी का उड़ना भी कम हो जाता है।

(३) टेंड्रिल्स में बदला हुआ तना (Stem modified into tendrils)—यह कमजोर तने वाले पौधों में पाया जाता है; जैसे लौकी, कोंहड़ा, नेनुआँ इत्यादि में। तना टेंड्रिल्स में बदल जाता है जिसकी सहायता से पौधा ऊपर चढ़कर प्रकाश तक पहुँचता है।

(४) फूल में बदला हुआ तना (Stem modified into flowers)—पौधे में जितने फूल निकलते हैं वे सभी शाखाओं के बदले हुए रूप हैं। इसका कारण यह है कि फूल उन्हीं स्थानों से निकलते हैं जिन स्थानों से शाखायें निकलती हैं अथवा पूरा तना ही चोटी (apex) पर फूल के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

(५) मिट्टी के नीचे पाये जाने वाले तने जैसे आलू, अरुई, बन्डा; सूरन, हलदी, अदरख इत्यादि। ये सभी तने हैं यद्यपि इनका रूप भोजन पदार्थ एकत्रित करने के कारण परिवर्तित हो गया है। इन पर कलियाँ पायी जाती हैं और इनसे नये पौधे प्राप्त किये जा सकते हैं।

तनों से आर्थिक लाभ (Economic uses of Stem)—तना हम लोगों के लिए बड़े काम का है; जैसे—

(१) आग जलाने के लिये—भोजन अथवा अन्य वस्तुओं को पकाने या गरम करने या जलाने के लिये हम लोग तने को काम में लाते हैं।

(२) सामान बनाने के लिये (जैसे मेज, कुर्सी, चारपाई और अन्य लकड़ी की वस्तुएँ) तना प्रयोग में लाया जाता है।

(३) नाव, जहाज, इक्का, बैलगाड़ी इत्यादि बनाने के लिए और रेलवे के डिब्बों में भी तने के पटरे लगाये जाते हैं।

(४) रबर, सिन्कोना अथवा कुनीन, कत्था, ताड़ी और अन्य प्रकार की दवाइयाँ भिन्न भिन्न प्रकार के पौधों के तनों से निकाली जाती हैं।

(५) रेलवे लाइनों के नीचे रखने के लिए तने के स्लीपर्स काम आते हैं।

(६) दियासलाई तनों को काट कर बनायी जाती है।

(७) कागज भी तने का मलीदा (Pulp) बनाकर बनाते हैं।

अभ्यास

१. नये पौधे प्राप्त करने की जितनी विधि तुम जानते हो उनका

विस्तार पूर्वक वर्णन करो। उनमें से कौन सी विधि तुम्हारे विचार से सबसे उचित है और क्यों? [H. S 1935]

२. उन भिन्न भिन्न विधियों का वर्णन करो जिनकी सहायता से नये पौधे प्राप्त किए जाते हैं। प्रत्येक का उदाहरण दो। [H. S. 1938]

३. पौधों से नये पौधे के प्राप्त करने की विधि पर एक लेख लिखो। [H. S. 1940]

४. तने का क्या क्या कार्य है? उनको सिद्ध करने के लिए एक साधारण प्रयोग का वर्णन करो।

५. तनों के रूप का बदलना कुछ दशाओं में क्यों आवश्यक है? उदाहरण सहित तनों के भिन्न भिन्न भागों के बदलने का वर्णन करो।

६. जड़ और तने की तुलना करो। उनसे मनुष्य मात्र को क्या लाभ होता है? अलग अलग वर्णन करो।

७. नोट लिखो—लतासूत्र (Tendrils); भूमि के नीचे पाये जाने वाले तने; वैस्कुलर बन्डिल; कलम लगाना।

८. (क) तनों से शाखाएँ किस भाँति निकलती हैं?

(ख) 'कली' (Bud) क्या है? जितने प्रकार की कलियाँ तुम जानते हो उनका नाम लिखो।

(ग) तुम कितने प्रकार के तनों को जानते हो? उनका नाम लिखो। प्रत्येक का उदाहरण दो।

९. (क) तने से हम लोगों को क्या लाभ है?

(ख) उन तनों का नाम लिखो जिन्हें तुम (१) भाजी के (२) जानवरों के लिए भूसा के (३) व्यापार के हेतु रस निकालने के रूप में, काम में लाते हो।

१०. निम्नांकित के बारे में तुम जो कुछ जानते हो लिखोः—'कैम्बियम; तना गाँठ; जाइलम (Xylem); पथरचूट अथवा अजूबा; बल्ब (Bulb) और लिपट कर चढ़ने वाले पौधे।

११. निम्नलिखित में अन्तर बताओ—(१) जड़ और तने में (२) एक दाल और दो दाल वाले पौधे में।

अध्याय ५

पत्तियाँ (Leaves)

पत्तियों का आकार (Shapes of Leaves)—पत्तियाँ पेड़ के बड़े काम की होती हैं। इन्हीं पर पेड़ का जीवन निर्भर करता है। यह तो पहले ही बताया जा चुका है कि पत्तियों के तीन भाग होते हैं। नीचे के
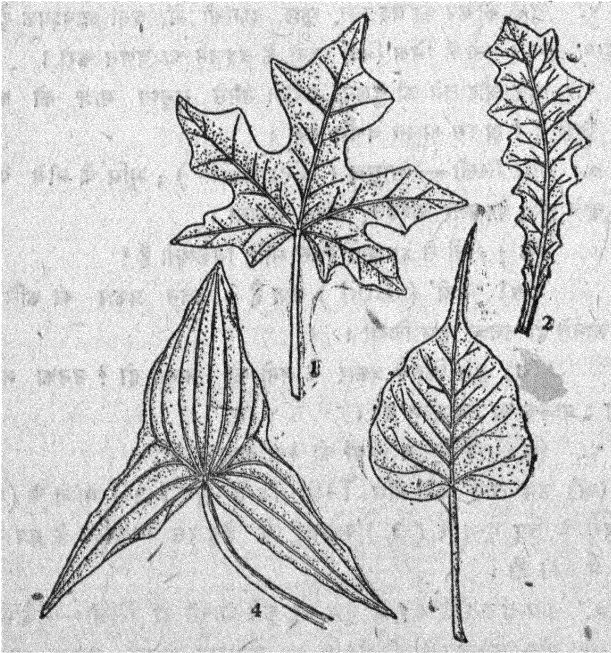
चित्र ११२—भिन्न भिन्न आकार वाली पत्तियाँ

भाग को जहाँ पत्ती तने से लगी रहती है लीफ-बेस (Leaf-base) कहते हैं। उसके ऊपर के भाग को पत्ती का डंठल (Leaf-stalk or

Petiole) और चौड़े भाग को लैमिना (Leaf-blade or Lamina) कहते हैं। सभी पेड़ों की पत्तियाँ एक प्रकार की नहीं होतीं। उनके डंठल और लैमिना में बहुत अन्तर रहता है। भिन्न भिन्न पत्तियों के रूप की भिन्नता का अनुमान तुम चित्र ११२ में दिये हुए कुछ पत्तियों के आकार की भिन्नता से कर सकते हो।

पत्तियों में नसों की रीति (Venation of Leaves)— ध्यान से देखने से पत्तियों में कुछ नसें (Veins) दिखलायी देंगी। इन नसों के लगने की रीति को वेनेशन (Venation) कहते हैं। प्रत्येक वर्ग के पौधे की पत्ती में ये नसें एक ही रीति से नहीं निकलतीं।

पत्तियों में नसों की दो मुख्य प्रकार की रीतियाँ देखी जा सकती हैं। (१) जिसमें एक बीच से नस (Midrib) निकलती हो अथवा एक ही स्थान से निकल कर अलग अलग जाती हुई कई नसें हों और उनमें से निकल कर जाल की भाँति फैली हों; इस प्रकार के वेनेशन को जालीदार रीति (Reticulate Venation) कहते हैं। इस प्रकार की नसें
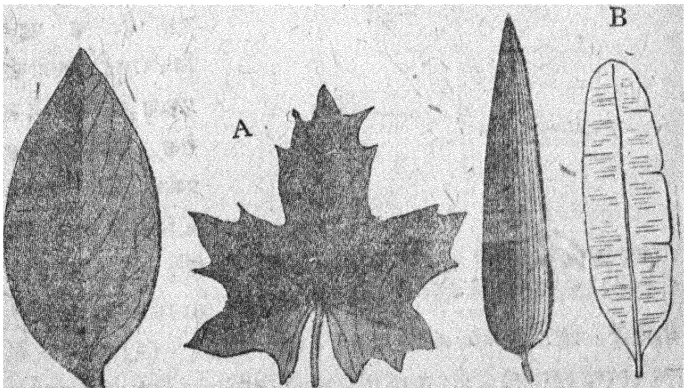
चित्र ११३—A जालीदार नसें B समानान्तर नसें

अधिकतर दो दाल वाले पौधों में पायी जाती हैं। (२) दूसरे प्रकार की पत्तियों में बीच से एक नस निकलती है और उसके दोनों ओर कई नसें समानान्तर निकलती हैं अथवा एक ही स्थान से कई नसें समानान्तर निक-

लती हैं ; इस तरह की नसों की बनावट को समानान्तर वेनेशन (Parallel Venation) कहते हैं । इस प्रकार की नसें अधिकतर एक दाल वाले पौधों में पायी जाती हैं (चित्र ११३) ।

पत्तियों की तनों से निकलने की रीतियाँ (Arrangement of leaves)—यदि तुम ध्यान से तने से पत्तियों के निकलने को देखो तो तुम इनके निकलने की तीन मुख्य प्रकार की रीतियाँ पाओगे । (१) कई पत्तियाँ एक ही स्थान से निकलती हैं और जब नई पत्तियाँ ऊपर की ओर निकलने लगती हैं तो वे इस प्रकार निकलती हैं कि पहले निकली हुई पत्तियों को प्रकाश मिलने से वे न रोक सकें । इस प्रकार की पत्तियों के निकलने को मोजेक रीति (Mosaic arrangement) कहते हैं । यह रीति आम की नई पत्तियों में देखो जाती है । (२) एक स्थान से एक ही पत्ती निकलती है और दूसरी पत्ती तने की दूसरी ओर निकलती है अर्थात् दूसरी पत्ती के निकलने से पहली पत्ती का मिलता हुआ प्रकाश नहीं रुकता । इसको घुमावदार रीति (Spiral or alternate arrangement) कहते हैं जैसे गेहूँ, जौ इत्यादि में । (३) प्रत्येक गाँठ पर दो पत्तियाँ दिखलायी देंगी; परन्तु ये पत्तियाँ इस प्रकार निकलती हैं कि एक दूसरे को मिलती
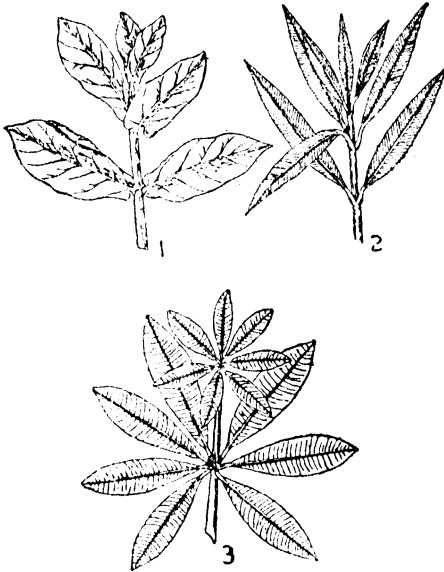
चित्र ११४—पत्तियों की तनों से निकलने की रीतियाँ । १, २–व्होर्ल रीति; ३–मोजेक रीति ।

हुई रोशनी को न रोक सकें। इसको व्हर्ल रीति (Whorl arrangement) कहते हैं (चित्र ११४) जैसे कनैल में।

स्टिप्यूल्स (Stipules)—पत्तियों के अतिरिक्त जहाँ से पत्तियाँ निकलती हैं वहीं पत्ती की ही भाँति एक अंग होता है जो कुछ पेड़ों में पाया जाता है। इनको स्टिप्यूल्स (Stipules) कहते हैं। ये गुलाब, अड़हुल और मटर के पौधों में बहुत स्पष्ट रहती हैं। पौधों में ये पत्तियों का ही काम करती हैं। बहुत से पेड़ों में ये बहुत छोटी होती हैं परन्तु मटर में बहुत बड़ी होती हैं और किसी किसी में तो अपने रूप को बदल कर काँटे अथवा टेंड्रिल्स इत्यादि के समान हो जाती हैं। कांटे के रूप में बदले हुए स्टिप्यूल्स बबूल (Acacia) में पाये जाते हैं और टेंड्रिल्स में बदले हुए स्टिप्यूल्स स्माइलैक्स (Smilax) में पाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त फूलों के नीचे भी बहुधा कुछ छोटी छोटी पत्तियाँ होती हैं जिनको ब्रैक्ट्स (Bracts) कहते हैं जैसे सूर्यमुखी के फूल के नीचे की हरी पंखड़ियाँ।
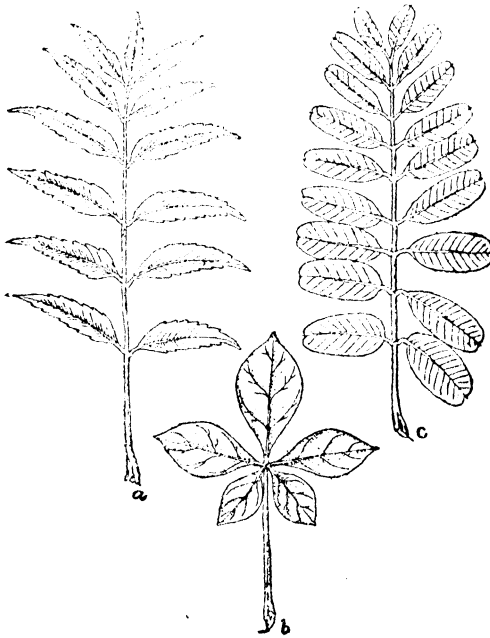
चित्र ११५—दोहरी पत्तियाँ।

साधारण और दोहरी पत्तियाँ (Simple and Compound

Leaves)—पत्तियों का निरीक्षण करने से तुम्हें दो प्रकार की पत्तियाँ दिखलायी देंगी (१) तने के भिन्न भिन्न स्थानों से एक ही पत्ती निकलती है और उसके भाग चाहे छोटे या बड़े हों परन्तु वे स्पष्ट रहते हैं। इन पत्तियों को साधारण पत्ती (Simple leaf) कहते हैं; जैसे पीपल, आम, पपीता, भिन्डी इत्यादि की पत्तियाँ। (२) तने से जब पीटियोल अथवा लीफ स्टाक निकलता है तो यह बढ़ कर दो अथवा कई भागों में बँट जाता है और प्रत्येक भाग पर एक एक पत्ती रहती है। इस प्रकार की पत्तियों को दोहरी पत्तियाँ (Compound leaves) कहते हैं; जैसे बेल, नीबू, शीशम, इत्यादि की पत्तियाँ (चित्र ११५)।

पत्तियों के रूप का बदलना (Modification of leaves)—जिस प्रकार किसी किसी पौधे में तना आवश्यकता के अनुसार अपने रूप को बदल देता है उसी प्रकार कुछ पौधे में पत्तियों का भी रूप बदल जाता है; जैसे
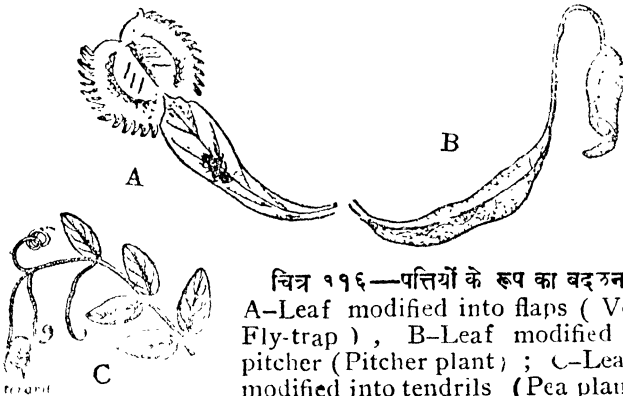
चित्र ११६—पत्तियों के रूप का बदलना।
A–Leaf modified into flaps (Venus Fly-trap), B–Leaf modified into pitcher (Pitcher plant) ; C–Leaflets modified into tendrils (Pea plant).

(१) मटर में कहीं कहीं दुहरी पत्ती की ऊपरी पत्ती नहीं रहती और उसके स्थान पर टेन्ड्रिल (Tendril) रहता है अर्थात् मटर के पौधे को रोशनी की खोज में ऊपर चढ़ने की आवश्यकता पड़ती है इसलिए यह पत्ती टेन्ड्रिल में बदल जाती है। (२) नागफनी में पत्ती के रूप में बदले हुए तने पर छोटे छोटे स्केल्स (Scales) अथवा काँटे रहते हैं जिसमें

यह पौधा रेगिस्तान के ऊँटों या अन्य जानवरों से बचा रहे और पानी भी अधिक मात्रा में न उड़ सके। यह पत्ती का बदला हुआ रूप है। (३) कीड़े-मकोड़े भक्षक पौधों (Insectivorous plants) में पत्तियाँ अपने रूप को तितलियाँ इत्यादि पकड़ने के लिए बदल देती हैं; जैसे वेनस फ्लाइ-ट्रैप पौधे (Venus fly-trap plant) में पत्तियाँ फ्लैप्स (Flaps) में और पिचर पौधे (Pitcher plant) में सुराही के रूप की भाँति बदल जाती हैं (चित्र ११६)।

हरी पत्तियों का काम (Function of green leaves)—पत्तियाँ कई रंग की होती हैं लेकिन यहाँ पत्तियों से हमारा अभिप्राय हरी पत्तियों से ही है इन पत्तियों के मुख्य काम तीन हैं।

(१) अपनी सतह से पानी को उड़ाते रहना जिसमें एक प्रकार का ऊपर का खिचाव बना रहे और जड़ से पानी के चढ़ने में सहायता मिले। इस कार्य को ट्रान्सपिरेशन (Transpiration) कहते हैं। (२) पत्तियाँ बराबर साँस लेती रहती हैं अर्थात् वायु से आक्सीजन लेती हैं और कार्बन डाइआक्साइड देती हैं। पत्तियों के इस कार्य को जो मेंढक और अन्य प्राणिमात्र की भाँति होता रहता है, रेसपिरेशन अथवा स्वाँस का लेना कहते हैं। (३) पत्तियाँ भोजन बनाती रहती हैं भोजन बनाने का कार्य केवल हरी पत्तियाँ ही कर सकती हैं। इसे ये सूर्य के प्रकाश की सहायता से वायु में मिले हुए कार्बन डाई-आक्साइड को दो भागों (आक्सीजन और कार्बन) में तोड़कर उसके कार्बन से बनाती हैं।

आक्सीजन निकल कर वायु में सम्मिलित हो जाता है और कार्बन पत्ती के पानी से मिलकर कारबोहाइड्रेट (Carbohydrate) में बदल जाता है जो अधिकतर स्टार्च (Starch) के रूप में रहता है। इस प्रकार हरी पत्ती का सूर्य की रोशनी के सामने कार्बन डाई आक्साइड को दो भागों में तोड़ने और कार्बन से भोजन बनाने को फोटोसिंथेसिस और कार्बन ऐसिमिलेशन (Photosynthesis and Carbon-assimilation) कहते हैं। इनके अतिरिक्त पत्तियाँ अपने में भोजन एकत्रित भी करती हैं जैसे साग और पातगोभी या करमकल्ला (Cabbage) में।

स्टोमा और उसकी बनावट (Stoma and its construction)—ये सारे कार्य पत्तियाँ अत्यधिक और विशिष्ट प्रकार के बने हुए छिद्रों द्वारा करती रहती हैं। जिन्हें स्टोमेटा (Stomata) कहते हैं। ये बड़े अद्भुत होते हैं। इनके बीच में एक छिद्र होता है और दोनों ओर एक एक कोष्ठ। जिनको गार्ड सेल्स (Guard-cells) कहते हैं।

प्रयोग नं० १०—यह ज्ञात करना कि पत्तियों से पानी उड़ता है।

पहला काम पानी का उड़ना (First function: Transpiration)—किसी एक छोटे पौधे को गमले के साथ ले लो। गमले के चारो ओर वेसलीन लगा दो जिसमें उसकी दीवालों से पानी न निकल सके। एक दफ्ती को इस प्रकार काटो कि गमले को ढँकने से पौधा उसके ऊपर निकला रहे। अब इस दफ्ती के चारों ओर और कटे हुए इन स्थानों पर भी वेसलीन लगा दो। पूरे गमले को किसी बड़े बेलजार (Bell-jar) से ढँक दो (चित्र ११७)। एक या दो दिन के पश्चात् बेलजार के भीतरी दीवारों को देखो। कुछ पानी की बूँदें दिखलायी देंगी। ये बूँदें कहाँ से आईं ? पत्तियों के उन्हीं नन्हे नन्हें छिद्रों से ही यह पानी निकला है। भिन्न भिन्न पौधों की पत्तियों से भिन्न भिन्न जलवायु के अनुसार कम अथवा अधिक पानी का उड़ना होता रहता है। किसी पौधे के प्रति घण्टे पानी के उड़ने को नापने के लिये एक यंत्र होता है जिसको पोटोमोटर (Potometer) कहते हैं। इस प्रकार के दो पोटोमीटर होते हैं जिनको गॅनोंगका या साधारण पोटोमीटर (Ganong's or Simple Potometer) कहते हैं। यह बोस के बबलर (Bose's Bubbler) से भी ज्ञात किया जा सकता है। इसे श्री जगदीशचन्द्र बोस ने बनाया था जो भारत के एक उच्चकोटि के विज्ञानी थे।

चित्र ११७—ट्रांसपिरेशन दिखलानेवाला प्रयोग।

प्रयोग नं० ११—यह ज्ञात करना कि पत्तियों के निचले भाग से

पानी अधिक उड़ता है अर्थात् निचले भाग में स्टोमेटा अधिक पाये जाते हैं।

पीपल अथवा बरगद की चार पत्तियाँ लो। एक की ऊपरी सतह पर वेसलीन लगा दो। दूसरी की निचली सतह पर और तीसरी के दोनों ओर वेसलीन लगा दो। चौथी पत्ती को वैसे ही रहने दो। चारों पत्तियों को कुछ दिनों के लिए एक स्थान पर छोड़ दो। ५ अथवा ६ दिनों के पश्चात् इन पत्तियों को देखो। सबसे पहले चौथी और पहली पत्ती सूख जायगी। दूसरी और तीसरी पत्ती नरम और हरी ही रहेगी। इससे यह मालूम होता है कि पत्तियों के निचली सतह पर ही स्टोमेटा होते हैं। यद्यपि कुछ साये में रहनेवाले पौधों में स्टोमेटा दोनों ओर भी पाये जाते हैं। पानी में रहनेवाले पौधे जैसे कमल (Lotus) में ऊपरी सतह पर ही स्टोमेटा रहते हैं।

स्टोमेटा का काम (Working of stomata)—यदि इस प्रकार पानी का उड़ना बराबर होता रहे तो यह सम्भव है कि गर्मी के दिनों में सारे पौधे सूख जायँ, परन्तु ऐसा नहीं होता। इसका कारण यह है कि
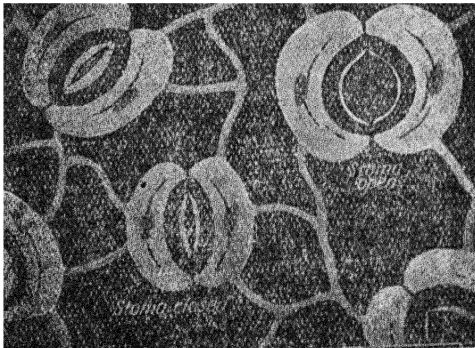
चित्र ११८—स्टोमेटाका का कार्य।

सूखे दिनों (Dry weather) मे गार्ड सेल्स (Guard cells) सिकुड़ जाते हैं और एक दूसरे के समीप आ जाते हैं जिससे बीच के छिद्र को वे बहुत छोटा कर देते हैं (चित्र ११८; Stoma closed)।

इससे पानी का उड़ना बहुत कम हो जाता है। वर्षा ऋतु में अथवा पानी की अधिकता होने पर गार्ड सेल्स पानी से फूल (Turgid) जाते हैं जिससे छिद्र बड़ा हो जाता है और पानी अधिकता से निकलने लगता है (चित्र ११८; Stoma open)। यदि गार्ड सेल्स ऐसा काम न करते तो पानी न मिलने पर सारे पौधे सूखकर मर जाते। कुछ पौधों में पत्तियाँ गर्मी के दिनों में गिर जाती हैं जिससे पानी का उड़ना कुछ समय के लिए बहुत ही कम हो जाता है और पौधों का जीवन बच जाता है।

दूसरा काम साँस लेना (Second function : Respiration)— पत्तियाँ हमलोगों की भाँति सर्वदा साँस लेती रहती हैं, परन्तु यह कार्य दिन में पत्ती के तीसरे कार्य के कारण प्रतीत नहीं होता।

प्रयाग नं० १२—यह ज्ञात करना कि पत्तियाँ साँस लेती रहती हैं।

एक U-ट्यूब में थोड़ा कास्टिक पोटाश (Caustic potash) डाल दो। उसमें दोनों ओर कार्क लगा दो जिसमें एक शीशे का ट्यूब हो जैसा चित्र ११९ में दिखलाया गया है। एक बोतल में थोड़ा बरैटा वाटर (Baryta water) अथवा चूने का पानी डाल दो और इसे U-ट्यूब से
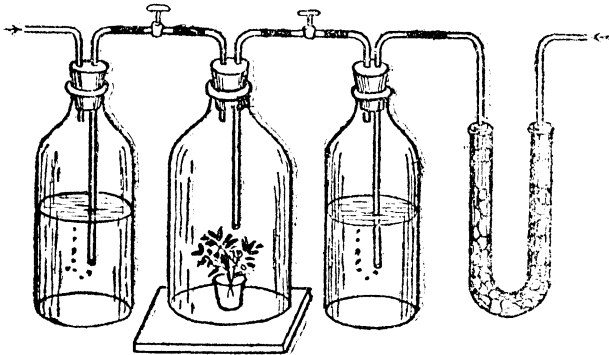
चित्र ११९—पौधों के सांस लेने का प्रयोग।

मिला दो। इस बोतल को दूसरे ट्यूब द्वारा एक बेलजार से मिला दो जिसके नीचे एक पौधा रखा हो। बेलजार को फिर दूसरी बोतल से मिला दो जिसमें

तौला हुआ बरेटा वाटर अथवा चूने का पानी रखा हो। अब इस बोतल को ऍसपीरेटर (Aspirator) द्वारा जोड़ दो। यदि तुम इस प्रयोग को दिन में करते हो तो पूरे ऍपरेटस (Apparatus) को किसी काले कपड़े से ढँक दो। एसपीरेटर की टोंटी को खोल दो। इसके कारण हवा U-ट्यूब के द्वारा पहली बोतल, फिर बेलजार और दूसरी बोतल से होकर जायगी। हवा के अन्दर जो कुछ पानी और कार्बन डाइ-ऑक्साइड का अंश होगा वह U—ट्यूब के कॉस्टिक पोटाश और पहली बोतल का बरैटा वाटर खींच लेगा। इसलिये वायु में मिली हुई इन वस्तुओं का प्रभाव दूसरी बोतल के बरैटा वाटर की तौल और रंग पर नहीं पड़ेगा (चित्र ११८)।

तीन चार दिन इस प्रकार वायु को धीरे धीरे प्रवेश करने दो। उसके पश्चात् दूसरी बोतल के बरैटा वाटर के नीचे कुछ सफेद वस्तु बैठती हुई दिखायी देगी जो बरैटा वाटर में कार्बन डाइ-ऑक्साइड के मिलने से ही बनती है। इससे यह सिद्ध होता है कि आई हुई हवा से पौधे ने ऑक्सीजन ले लिया है और कार्बन डाई-ऑक्साइड दे दिया है जो दूसरी बोतल में चला जाता है। यदि अब इस तौले हुए बरैटा वाटर को फिर से तौला जाय तो वह भार में अधिक मालूम होगा। इस प्रकार हम निकले हुए कार्बन डाई-ऑक्साइड का तौल भी ज्ञात कर सकते हैं।

हरी पत्ती का तीसरा कार्य—भोजन-पदार्थ बनाना (Third function:—Photosynthesis and Cardon assimilation:)-हरी पत्ती का तीसरा कार्य उसके हरियाली (Chlorophyll) के द्वारा सूर्य के प्रकाश के सामने वायु के कार्बन डाई-ऑक्साइड को दो भागों (ऑक्सीजन और कार्बन) में तोड़ना है। आक्सीजन वायु में छूट जाता है और कार्बन को पत्ती अपने में भोजन बनाने के लिये रख लेती है। इस कार्य में तीन वस्तुओं की आवश्यकता होती है। (१) हरियाली, (२) सूर्य का प्रकाश (Sun-light), (३) कार्बन-डाई-ऑक्साइड। इनमें से किसी एक के न होने से यह कार्य नहीं हो सकता।

प्रयोग नं० १३—यह देखना कि सूर्य के प्रकाश की सहायता से हरे पौधे ऑक्सीजन छोड़ते हैं।

पानी से भरो और उसे कुप्पी की टोटी पर इस प्रकार रख दो जिसमें टेस्टट्यूब से पानी न गिरने पावे (चित्र १२०)।

अब ऍपरेटस को धूप में रख दो और ध्यान से देखते रहो। बहुत छोटे छोटे बुलबुले ऊपर उठते हुए दिखलायी देंगे जो टेस्टट्यूब में भरते चले जाते हैं। कुछ घंटों के पश्चात् टेस्टट्यूब बिलकुल इस गैस से भर जायगी। अब टेस्टट्यूब को निकालकर सावधानी से उलट दो और जरा सी जलती हुई एक दियासलाई डालो। वह तुरत जोरों से जलने लगेगी। इससे यह ज्ञात होता है कि टेस्टट्यूब में आयी हुई गैस आक्सीजन ही है।

चित्र १२१—पौधों की पानी में घुली कार्बन डाइआक्साइड पर क्रिया।
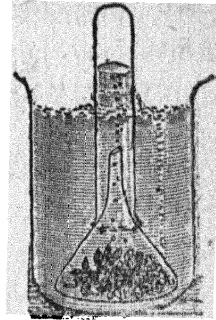
यदि इस प्रयोग को अँधेरे में किया जाय तो टेस्टट्यूब में आक्सीजन के स्थान पर कार्बन डाई-आक्साइड पैदा होने लगेगा जो पानी में घुलनशील होने के कारण टेस्टट्यूब में नहीं आयेगा। अर्थात् फोटोसिन्थेसिस (Photosynthesis) के स्थान पर रेस्पिरेशन (Respiration) होने लगेगा और यदि खौला हुआ पानी बीकर (Beaker) में रखा जाय अथवा पत्ती को स्पिरिट (Spirit) में उबाल कर उसकी हरियाली हटाकर रक्खा जाय तो कुछ न होगा।

इससे यह ज्ञात होता है कि फोटोसिन्थेसिस अथवा कार्बन एसीमिलेशन के लिए हरियाली, सूर्य का प्रकाश, और कार्बन डाई-ऑक्साइड की आवश्यकता है।

प्रयोग नं० १४—यह ज्ञात करना कि सूर्य के प्रकाश के सामने हरी पत्ती भोजन अर्थात् स्टार्च बनाती हैं।

किसी गमले में लगे हुए पौधे की एक पत्ती पर प्रकाश होने के पहले वेसलीन इस तरह लगा दो जिसमें केवल बीच में + आकार चिन्ह रह जाय (चित्र १२२)। उस पौधे को सूर्य के प्रकाश में दिन भर के लिए रख दो। सन्ध्या समय वेसलीन हटा दो और पत्ती तोड़ कर स्पिरिट में खौलाकर और पानी

से धोकर उस पर आयोडीन का घोल (Iodine solution) डालो। केवल + स्थान नीला पड़ जायगा। इससे यह ज्ञात होता है कि केवल + स्थान पर ही स्टार्च बना है क्योंकि यही स्थान सूर्य के प्रकाश से सम्बन्ध रखता था (चित्र १२२)। ऐसा अनुमान है कि हरी पत्ती में इस प्रकार भोजन का बनना निम्नांकित रसायनिक परिवर्तन द्वारा ही होता होगा।

(i) $CO_2 = C + O_2$ (वायु में चला जाता है)।

(ii) $C + H_2O = CH_2O$ (अनुमानित वस्तु)

(iii) $6CH_2O = C_6H_{12}O_6$ (अंगूर की चीनी)

(IV) $2C_6H_{12}O_6 = C_{12}H_{22}O_{11} + H_2O$(ईख की चीनी)

अथवा

(V) $C_6H_{12}O_6 = C_6H_{10}O_5$ (स्टार्च)
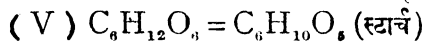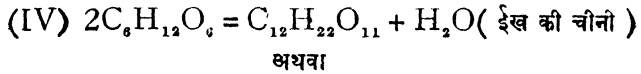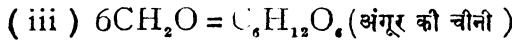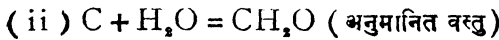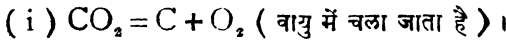
फोटोसिन्थेसिस और रेस्पिरेशन में निम्नांकित अंतर है।

(१) फोटोसिन्थेसिस केवल प्रकाश में और केवल हरी पत्तियों में ही होता है परन्तु रेस्पिरेशन सर्वदा और सब प्रकार के पौधों में होता है।

(२) फोटोसिन्थेसिस से पौधे भार में बढ़ते हैं परन्तु रेस्पिरेशन से पौधे भार में घटते हैं।
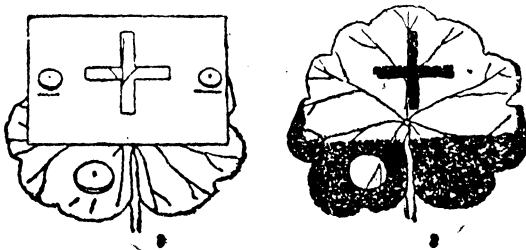
चित्र १२२—हरी पत्ती में भोजन पदार्थ बनने का प्रयोग

(३) फोटोसिन्थेसिस भोजन पदा के बनने का कार्य है परन्तु रेस्पिरेशन इसके टूटने का कार्य है।

पत्तियों से लाभ (Economic uses of leaves)—पत्तियाँ भी मनुष्य के बड़े काम की हैं। बहुत सी पत्तियों में भोजन एकत्रित रहता है और उसे मनुष्य भोजन के रूप में काम में लाता है; जैसे साग पातगोभी इत्यादि। कुछ पत्तियाँ दवा में भी काम आती हैं। बड़ी बड़ी पत्तियाँ जैसे ताड़ इत्यादि कच्चे मकानों के छत और पंखे बनाये जाते हैं। पत्तियों से पत्तल भी बनाये जाते हैं जिन पर बारातों में बहुधा लोग भोजन भी करते हैं, तम्बाकू की पत्ती से तम्बाकू बनाया जाता है और पुदीना और धनिया की पत्ती की चटनी बनाई जाती है।

अभ्यास

१. हरे पौधे के भोजन के बारे में तुम क्या जानते हो? पौधे के भोजन में जो पदार्थ पाये जाते हैं कहाँ से प्राप्त होते हैं?

[H. S. 1932]

२. पौधे भोजन पदार्थ क्यों एकत्रित करते हैं? पौधे के किन किन भागों में भोजन इकट्ठा किया जा सकता है? अपने उत्तर को उन शाक-पात के उदाहरण से सुशोभित करो जिन्हें तुम भोजन के रूप में खाते हो।

[H. S. 1933]

३. तुम फोटोसिन्थेसिस अथवा कार्बन-असिमिलेशन से क्या समझते हो? यह क्रिया प्रकृति में क्यों अत्यन्त आवश्यक है? हरे पौधों में फोटो-सिन्थेसिस के द्वारा बने हुए पदार्थों की जाँच तुम कैसे करोगे?

[H. S. 1933]

४. हरे पौधे किस प्रकार अपना भोजन बनाते हैं? पत्तियों में स्टार्च के बनने पर एक प्रयोग का वर्णन करो।

[H. S. 1935]

५. पौधों में 'कार्बन एसिमिलेशन' के होने के लिए किन किन बातों का होना आवश्यक है? अपने उत्तर की सत्यता सिद्ध करने के लिए एक साधारण प्रयोग का वर्णन करो।

[H. S. 1936]

६. (क) अंधेरे में उगता हुआ पौधा असाधारण रूप से लम्बा हो जाता है और पीला पड़ जाता है, क्यों ?

(ख) खिड़की के समीप रखा हुआ पौधा कमरे के विपरीत बढ़ने लगता है, क्यों ?

(ग) पौधे में लगी हुई पत्ती के निचले भाग पर यदि वेसलिन लगा दी जाय तो कुछ दिनों में पीली पड़ जाती है, क्यों ?

७. यदि तुम्हारे सामने कोई गमला रख दिया जाय जिसमें एक पौधा उगा हुआ हो तो तुम कैसे सिद्ध करोगे कि वह पौधा नमी मिट्टी से ले रहा है न कि वायु से । [H. S. 1938]

८. पत्ती का क्या काम है ? एक प्रयोग का वर्णन करो जिसकी सहायता से यह सिद्ध हो कि कार्बन-एसिमिलेशन में आक्सीजन निकलता है । [H. S. 1939]

९. पौधों में 'ट्रांस्पिरेशन' से तुम क्या समझते हो ? इस क्रिया को सिद्ध करने के लिए एक प्रयोग का वर्णन करो । [H. S. 1940]

१०. नोट लिखोः—स्टोमेटा; कीड़े मकोड़े भक्षक पौधे (Insectivorous plants) ; स्टिप्यूलस; पत्तियों की नसें; पत्तियों का परिवर्तित रूप । [H. S. 1933, 1938, 1940];

११. पत्तियों में कौन कौन भाग होते हैं ? पत्तियों से मनुष्य मात्र को क्या लाभ है ? साधारण पत्ती और कम्पाउण्ड पत्ती की तुलना करो ।

१२. पौधों में साँस लेने की क्रिया किस प्रकार होती है ? इसे समझाने के हेतु एक प्रयोग का वर्णन करो । साँस का लेना फोटोसिन्थेसिस से किस प्रकार भिन्न है ।

१३. निम्नांकित को सिद्ध करने के लिए प्रयोग का वर्णन करोः—

(१) उगने की अवस्था में बीज साँस लेते हैं ।

(२) भूमि पर पाये जाने वाले पौधों के पत्तियों के निचली सतह पर ही स्टोमेटा पाये जाते हैं ।

(३) साँस लेना पौधों के लिए क्षति कारक क्रिया है ।

(४) कार्बन एसिमिलेशन के लिए हरियाली का होना आवश्यक है ।

अध्याय ६

फूल (Flowers)

यद्यपि पौधे का प्रत्येक अंग उसके लिए आवश्यक है तथापि यह कहना अनुचित न होगा कि फूल पौधे का सबसे आवश्यक अंग है। इसी पर पौधे की उत्पत्ति निर्भर है क्योंकि यह फल और बीज को उत्पन्न करता है जो फिर उस पौधे के रूप में परिणत हो जाता है। बिना फूल के बीज नहीं और बिना बीज अधिकतर पौधा नहीं।
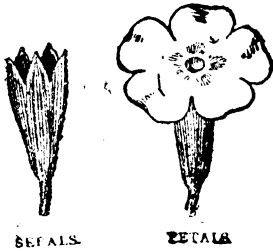
हरी पंखड़ियाँ लाल पंखड़ियाँ
चित्र १२३ फूल का अनावश्यक भाग

फूल के भाग (Parts of a flower)—फूल के चार मुख्य भाग होते हैं जो पुस्तक के इस भाग के आरम्भ में ही बतलाये जा चुके हैं। (१) हरी पंखड़ियाँ (Sepals) जो
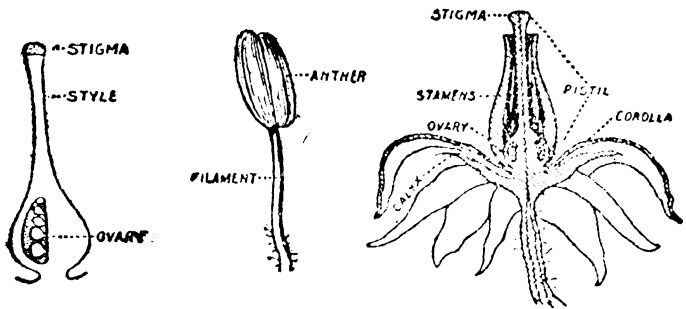
चित्र १२४ फूल के भिन्न भिन्न भाग

सबसे बाहर पायी जाती हैं। इनके संगठित रूप को कैलिक्स कहते हैं।

(२) इनसे भीतर की ओर कुछ रंगीन पंखड़ियाँ होती हैं जिनको लाल पंखड़ियाँ (Petals) कहते हैं। इनके संगठित रूप को कोरोला (Corolla) कहते हैं (चित्र १२३) ये दोनों फूल के अनावश्यक (Non essential) भाग हैं। (३) इनसे भीतर की ओर कुछ लम्बे अंग होते हैं जिनको स्टेमन्स (Stamens) कहते हैं। इनके संगठित रूप को एन्ड्रोएशियम (Androecium) कहते हैं। यह फूल का नर भाग है। इसके दो भाग होते हैं। (i) डंठल (Filament) जिसपर (ii) ऐन्थर्स (Anthers) लगे रहते हैं। ऐन्थर्स में चार कोठरियाँ होती हैं जिनमें पराग केसर (Pollen grains) पकते हैं (चित्र १२४)। इनके पकने पर ये कोठरियाँ फट जाती हैं और पराग केसर बाहर निकलने के योग्य हो जाते हैं। (४) सब के मध्य में मादा अंग होता है जिसको गर्भकेसर (Carpel) कहते हैं। इनके समूह को गाईनेशियम (Gynæcium) कहते हैं। गर्भ केसर के तीन भाग होते हैं। (i) सब से ऊपर का लसदार
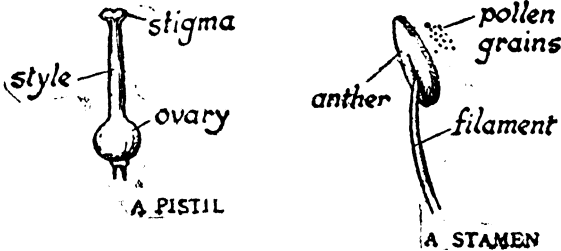
चित्र १२५—फूल के आवश्यक अंग।

अथवा गद्देदार (Sticky or velvety) अंग जिसको स्टिग्मा (Stigma) कहते हैं। (ii) उसके नीचे एक लम्बा खोखला अंग होता है जिसको स्टाइल (Style) कहते हैं। (iii) तीसरा भाग नीचे की ओर मोटा रहता है और गर्भाशय (Ovary) बनाता है। गर्भाशय में बहुत से ओव्यूल्स (Ovules) होते हैं जिनसे बीज उत्पन्न होते हैं (चित्र १२५)।

फूल के अंगों का कार्य—सेपल्स और पेटल्स फूल के आवश्यक

अंग नहीं है। सेपल्स कली के रूप में फूल की रक्षा करती हैं। क्योंकि यह हरी होती हैं अतः यह भोजन बनाती है जिससे फूल की वृद्धि होती है। पेटल्स भी फूल के आवश्यक अंगों की रक्षा करते हैं और फूल के खिल जाने पर अपनी सुन्दर चमक और रंगों से तितलियाँ और मधुमक्खियों को आकर्षित करते हैं। अतः इन्हीं के कारण पॉलिनेशन (Pollination) हो जाने पर पौधे की जीवनी की प्रथम सीढ़ी आरम्भ हो जाती है।

स्टेमन्स और कारपेल्स फूल के आवश्यक (Essential) अंग हैं। स्टेमन का डंठल ऍन्थर को ऊपर उठाये रहता है। ऍन्थर में परागकेसर बनता और पकता है। भिन्न भिन्न फूल के स्टेमन्स और परागकेसर भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं। परागकेसर का कार्य फूलों में वही है जो मेंढ़क में स्पर्म्स (Sperms) का है। कारपेल का सबसे ऊपरी अंग स्टिग्मा का कार्य परागकेसर को अपने पर चिपका लेना है। लेकिन अपने ही वर्ग वाले
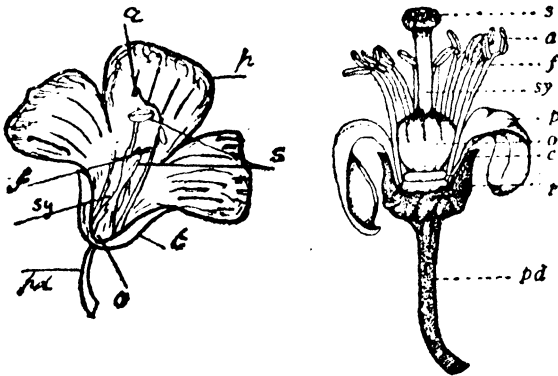
चित्र १२६—दो अन्य फूल और उनके भाग

s–stigma a–anther; f–filament; sy–style
p–petal; o–ovary; c–sepal; t–thallamus;
pd–flower stalk or pendunle.

फूल का परागकेसर उस पर सफलता पूर्वक चिपक सकता है। स्टाइल एक रास्ते का कार्य करता है जिसके द्वारा परागकेसर भली भाँति गर्भाशय में

रहने वाले ओव्यूल से मिल जाता है (चित्र १३०)। गर्भाशय का कार्य फूलों में वही है जो मेंढक में ओवरी का है और ओव्यूल्स का वही जो ओवा (Ova) का।

इसके अतिरिक्त गर्भाशय फल बनने में पूरा भाग लेता है और ओव्यूल्स बीज में परिणत हो जाता है। कुछ पौधों में फल बनने में फूल का शेष अंग भी मिल जाते हैं। इन अंगों के अतिरिक्त कुछ फूलों में ब्रेक्ट्स (Bracts) भी होते हैं जैसे सूर्यमुखी के फूल में। फूलों में नेक्टार (Nectar) रखने के भी अंग होते हैं जिनकी खोज में तितलियाँ और मधुमक्खियाँ फूलों पर आती हैं। इन अंगों को नेक्टरी (Nectary) कहते हैं। यह सरसों के फूल में बहुत स्पष्ट होते हैं। इनकी छोटी थैलियाँ लाल पंखडियों के बीच के आधार पर होती हैं।

अब तुम सरसों और मटर अथवा सेम और अड़हुल (Shoe flower) के फूलों के अंगों को ध्यान से देखो। उनका चित्र बनाओ और लिखो कि
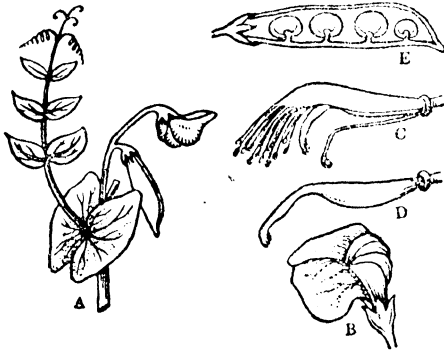
चित्र १२७—A–मटर की पत्ती, फूल और फल, B–मटर के फूल का अनावश्यक अंग, C–९ मिले और एक अलग स्टैमन्स, D–मटर के फल का खंड।

प्रत्येक अंग कितने कितने कहाँ कहाँ पाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ फूलों को ध्यानपूर्वक देखो और प्रत्येक में भिन्नता मालूम करो

कई प्रकार के फूल और फूलों का समूह (Kinds of flowers: Inflorescence)—सब फूल एक प्रकार के नहीं होते। उनके रंग रूप में भिन्नता होने के अतिरिक्त तीन प्रकार के फूल देखे जाते हैं। (१) पुलिङ्ग (Male) जिसका चिन्ह ♂ है और (२) स्त्रीलिङ्ग (Female) जिसका चिन्ह ♀ है। इनको एसेक्सुअल फूल (Asexual flowers) कहते हैं। ये बहुधा एकही पेड़ में अलग अलग खिलते हैं, जैसे लौकी, कुम्हड़ा, नेनुआ इत्यादि में या इनके पेड़ ही अलग अलग होते हैं जैसे पपीता इत्यादि में। (३) जिसमें फूल के दोनों आवश्यक भाग पाये जाते हों। इनको बाइसेक्सुअल अथवा हरमाफ्रोडाइट (Bisexual or Hermaphrodite flowers) कहते हैं जिसका ☿ चिन्ह है, जैसे सरसों, मटर, चना, सेम इत्यादि में। इसी प्रकार हरी पंखड़ियों का चिन्ह (K) है और लाल पंखड़ियों का (C) है यदि फूल सुडौल है तो उसका चिन्ह ⊕ है जैसे सरसों अथवा अड़हुल का फूला और यदि बेडौल है तो उसका चिन्ह † है। इस प्रकार पूरे मटर के फूल का रूपांकित निम्नलिखित है जिसमें कोष्ठों का अर्थ उन भागों का मिला होना होता है।

$$\dagger \; ☿ \; K_{(5)} \, C_{(2)+2+1} \, A_{(9)+1} \, G_1$$

फूलों के निकलने के ढंग और उनके समूह को इन्फ्लोरेसेन्स (Inflorescence) कहते हैं। ये कई प्रकार के होते हैं। अपने अध्यापक की सहायता से प्रत्येक प्रकार के फूलों के समूह को देखो और उनका चित्र बनाओ। साधारणतया फूलों के निम्नांकित समूह देखे जाते हैं। रेसिमोस (Racemose) जिस समूह में फूल भिन्न भिन्न आधारों से निकलते हैं पर लगभग एक की सतह पर उनकी चोटी आने का प्रयत्न करती हैं जैसे सरसों, आम इत्यादि के फूलों का समूह। यदि फूलों की चोटियाँ एक ही सतह पर आ जायँ तो उनको करियम्ब (Corymb) कहते हैं जैसे गाजर का फूल (३) यदि सब फूल एक ही स्थान से निकलें तो उनको अम्बेल (Umbel) कहते हैं जैसे जीरा, सौंफ इत्यादि के फूलों का समूह। इनके अतिरिक्त गेहूँ, जोन्हरी इत्यादि के फूलों के समूह को स्पाइक (Spike) कहते हैं।

अभ्यास

१. फूल का क्या काम है ? उस फूल का एक चित्र खींचो जिसको तुमने पढ़ा हो और उसके सभी भागों का नामकरण दो। [H. S. 1938]

२. उस फूल का वर्णन करो जिसे तुमने पढ़ा हो और उसके प्रत्येक भाग के कार्य के विषय में लिखो। [H. S. 1940]

३. नोट लिखो—हरमाफ्रोडाइट फूल; फूलों का समूह; नेक्टारी (Nectary); गाइनीशियम; स्टैमन्स । [H. S. 1933]

४. सेम के फूल का एक सुन्दर चित्र बनाओ। उसके सभी भागों को दर्शाओ। सरसों के फूल से सेम के फूल की क्या भिन्नता है ?

५. फूलों के समूह से तुम क्या समझते हो ? प्रत्येक के कुछ उदाहरण दो।

६. उन भिन्न भिन्न फूलों का नाम लिखो जिन्हें तुमने देखा हो। उनमें से किसी एक का वर्णन करो।

अध्याय ७

सेंचन और आधान-क्रियाएँ

(Pollination and Fertilization)

फल और बीज के होने के लिये परागकेसर का स्टिग्मा तक जाना और अन्दर घुस कर ओव्यूल्स से मिलना अति आवश्यक है । किसी फूल के परागकेसर का चलकर उसी फूल के स्टिग्मा या उसी पेड़ के दूसरे फूल के स्टिग्मा या उसी प्रकार के दूसरे पेड़ के फूल के स्टिग्मा से चिपक जाने को सेंचन या पॉलिनेशन (Pollination) कहते हैं। जब परागकेसर उसी फूल के स्टिग्मा पर चिपकता है तब उसको सेल्फ-पॉलिनेशन (Self-pollination) कहते हैं और जब उसी प्रकार के पेड़ के दूसरे फूल पर चिपकता है तो उसे क्रॉस-पॉलिनेशन (Cross-pollination) कहते हैं। पॉलिनेशन के पश्चात् परागकेसर का स्टाइल के भीतर जाकर ओव्यूल्स से मिलने को आधान-क्रिया या फर्टिलाइजेशन (Fertilization) कहते हैं।

क्रास पालिनेशन की भिन्न भिन्न रीतियाँ (Various means of cross-pollination)—सेल्फ-पॉलिनेशन वायु द्वारा फूल के थोड़ा हिलने से ही हो सकता है परन्तु क्रॉस-पॉलिनेशन स्वयं नहीं हो सकता। इसलिए प्रकृति ने परागकेसर को स्टिग्मा तक पहुँचाने के लिए भिन्न भिन्न रीतियाँ रक्खी हैं।

(१) वायु के द्वारा (Wind-pollination) :—यह उन फूलों में होता है जो सुंदरता और सुगंध से वंचित रहते हैं। इसलिए इन फूलों का परागकेसर भी बहुत हलका होता है और अत्यधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं, जैसे घास, गेहूँ, मक्का इत्यादि के फूलों में। वायु के द्वारा पोलिनेशन होने में परागकेसर बहुत नष्ट हो जाते हैं। यही कारण है कि इन फूलों में परागकेसर बहुत अधिक उत्पन्न होते हैं ऐसे फूलों को एनिमाफिलस फूल (Anemophillous Flowers) कहते हैं। इनके स्टिग्मा गुच्छेदार (Brushy) होते हैं।

(२) मधुमक्खियों और तितलियों द्वारा (Insect-pollination) :—ये फूल बहुत ही सुंदर और सुगन्धित होते हैं। इनके पेटल्स की सुंदरता के कारण तितलियाँ और मधुमक्खियाँ आकर्षित होती हैं।

जब वे फूलों पर बैठती हैं तो उनकी पीठ अथवा पैरों से ऐंन्थर्स लग जाते हैं जिससे परागकेसर उनसे चिपक जाते हैं (चित्र १२८)। अब यदि ये तितलियाँ उसी प्रकारके दूसरे फूल पर जाती हैं तो इसके शरीर से लगे हुए परागकेसर उस फूल के स्टिग्मा से चिपक जायगा। इस प्रकार फूलों में पॉलिनेशन हो जाता है।
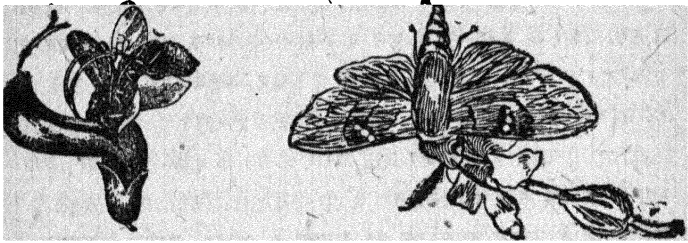
चित्र १२८— परागकेसर मधुमक्खियों के शरीर पर सेंचन क्रिया के हेतु लग रहे हैं।

चित्र १२८—ऐसे फूलों को एन्टमा-फिल्लस फूल (Entomophillous flowers) कहते हैं।

(३) पानी के द्वारा (Water-pollination):—यह उन्हीं पौधों के फूलों में होता है जो पानी में ही उगते हैं, जैसे सिंघाड़ा, कमल इत्यादि। परागकेसर हलका होने के कारण पानी पर आ जाता है और तैरते तैरते उसी प्रकार के दूसरे फूल के स्टिग्मा से चिपक जाता है। ऐसे फूलों को हाइड्रोफिल्लस फूल (Hydrophillous flowers) कहते हैं। (चित्र १२९)।
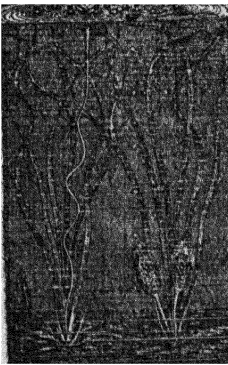
चित्र १२९—पानी के पौधों में सेंचन की रीति।

(४) मनुष्य के द्वारा (Pollination by Man) :—अपनी आवश्यकता और इच्छा के अनुसार नये नये पौधे प्राप्त करने के लिए मनुष्य कुछ चुने हुए फूलों में कॉस-पॉलिनेशन

करता रहता है और अपनी इच्छा के अनुसार पौधा प्राप्त कर लेता है। जैसे स्वीट-पी (Sweet-pea) के दो पौधे जिनके फूलों के पेटल्स सफेद और लाल होते हों उनमें क्रॉस-पॉलिनेशन कराकर मनुष्य गुलाबी रंग के पेटल्स फूल में रखने वाले पौधे प्राप्त कर सकता है इत्यादि। इसी प्रकार मनुष्य ने आवश्यकता अनुसार गेहूँ के ऐसे पौधों को प्राप्त किया है जिनमें उन बीमारियों का प्रभाव नहीं पड़ता जो पहले पड़ता था। ऐसे बीज पूसा नं० ४ और १२ इत्यादि हैं।

यह अनुभव किया गया है कि क्रॉस-पॉलिनेशन से उत्पन्न किये हुए बीजों में सेल्फ पॉलिनेशन से उत्पन्न किये हुए बीजों से विशेष शक्ति होती है और उनमें बाहरी परिवर्तन को भी सहन करने की शक्ति विशेष रूप से पायी जाती है। इसके अतिरिक्त क्रॉसपालिनेशन से प्राप्त बीजों पर भिन्न भिन्न पौधों की बीमारियों का प्रभाव कम पड़ता है। इन लाभों के विपरीत क्रॉसपालिनेशन से यह हानि है कि फूलों के पराग अधिक मात्रा में नष्ट होते हैं और बहुधा कुछ ओव्यूलस बिना सेंचन प्राप्त किये ही रह जाते हैं और बीज उत्पन्न नहीं कर पाते।

चित्र १३०—फर्टिलाइजेशन की रीति।

आधान क्रिया (Fertilization)—परागकेसर के स्टिग्मा तक पहुँच जाने के पश्चात् फर्टिलाइजेशन का कार्य आरम्भ हो जाता है। परागकेसर के स्टिग्मा लगने के पश्चात् उसमें से एक नली स्टाइल के भीतर बढ़ती
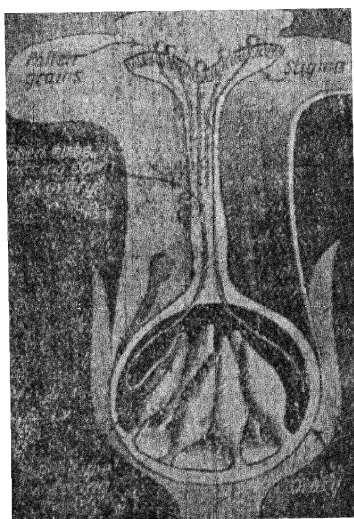
जाती है जिसके अन्त में परागकेसर का न्यूक्लियस रहता है। यह नली और आगे बढ़ती जाती है जब तक यह ओव्यूल्स के समीप न पहुँच जाय; तत्पश्चात् घूम कर यह ओव्यूलस के भीतर घुस जाती है। अब इसके भीतर का न्यूक्लियस ओव्यूल के न्यूक्लियस से मिल जाता है। मिलते ही फर्टिलाइजेशन समाप्त हो जाता है। एक ओव्यूल के लिए एक ही परागकेसर की आवश्यकता होती है। फर्टिलाइजेशन के पश्चात् ओव्यूल से बीज और ओवरी अथवा किसी किसी में पूरे फल से फल का बनना आरम्भ हो जाता है (चित्र १३०)।

अभ्यास

१. सेंचन क्रिया क्या है? उन भिन्न भिन्न रीतियों का वर्णन करो जिनसे यह क्रिया होती हो। प्रत्येक का उदाहरण दो।

२. नोट लिखो :—क्रास-पालिनेशन [H. S. 1838]; इन्सेक्ट-पालिनेशन [H. S. 1939]; पालन-ट्यूब।

३. गर्भाधान से (Fertilization) तुम क्या समझते हो? यह फूलों में किस प्रकार होता है?

४. क्रास पालिनेशन के होने की भिन्न भिन्न रीतियों का वर्णन करो। यह सेल्फ-पालिनेशन से किस भाँति उच्च है?

५. प्रत्येक का उदाहरण दो:

(क) एनिमाफिल्लस फूलें।

(ख) एन्टमाफिल्लस फूलें।

सुन्दर चित्र भी बनाओ।

अध्याय ८

फल और बीज तथा उनका बिखरना

Fruits and Seeds; and Their Dispersal

फर्टिलाइजेशन के पश्चात् फल का बनना आरम्भ हो जाता है। पके गाइनीशियम (Gynaeceum) को फल कहते हैं। फल सचमुच फूल के कार्य का अन्तिम परिणाम है। फल के ऊपर के भाग को जो ओवरी के बाहरी भाग से बनता है, पेरीकार्प (Pericarp) कहलाता है। बहुत से फलों में तीन भाग पाये जाते हैं जो पकने पर स्पष्ट दिखाई देने लगते हैं। बाहरी भाग को एपीकार्प (Epicarp) कहते हैं, जैसे आम का ऊपरी छिलका; मध्य भाग को मीजोकार्प (Mesocarp) कहते हैं, जैसे बीच का गूदा; अन्दर के बीज के भाग को एण्डोकार्प (Endocarp) कहते हैं (चित्र १३२)।

चित्र १३१--भडभाड और सरसों के सूखे फूटने वाले फल

फल तीन प्रकार के होते हैं—(१) साधारण (Simple), (२) ऐग्रीगेट (Aggregate) और (३) कम्पोजिट (Composite)। साधारण फल (Simple) दो प्रकार के होते हैं—(क) सूखे (Dry) (ख) गुदेदार (Succulent)। [H. S. 1934]

सूखे फल भी दो प्रकार के होते हैं—(१) पकने पर फूट कर बिखरने वाले जैसे मटर, सरसो, धतूरा इत्यादि । इनको फूटने वाले (Dehiscent) फल कहते हैं (चित्र १३१) । (२) पकने पर न फूटने वाले फल जैसे गेहुँ, जौ, मक्का इत्यादि । इनको न फूटने वाले (Indehiscent) फल कहते हैं । इस प्रकार फलवर्ग के विभाजन के अतिरिक्त, फलों को तीन विशेष भागों में बाँटा जा सकता है जैसे (१) एक ही बीज वाले फल जैसे गेहूँ, जौ, सूर्यमुखी, चिलबिल इत्यादि । इन फलों को एकीनियल (Achemial) फल कहते हैं । दूसरे प्रकार के फल ऐसे होते हैं जिनमें बहुत से बीज होते हैं और वे फूट कर बिखरते हैं जैसे मटर, भिन्डी, भडभाड, मदार इत्यादि । इन फलों को कैप्सुलर (Capsular) फल कहते हैं । मटर और भिन्डी के फलों में भिन्नता होने के कारण, मटर की छीमी (Legume) कहते हैं और भिन्डी को कैप्स्यल (Capsule) कहते हैं । (३) तीसरे प्रकार की वे फलें हैं जिनमें बहुत से बीज अवश्य होते हैं पर वे फूट कर नहीं बिखरते । इनको सीजोकारापीक (Schizocarpic) फल कहते हैं । जैसे बबूल और रेंडी के फल ।
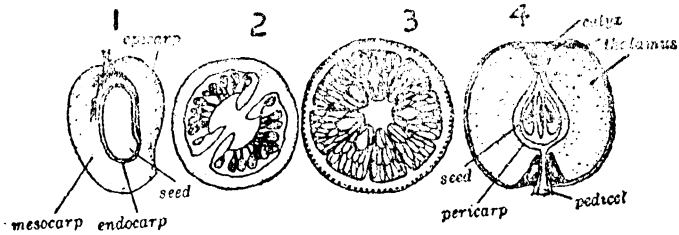
चित्र १३२—गुद्देदार फल

1—Drupe (Mango longitudinally cut to show various layers); 2 & 3 –Berries of Tomato and orange; 4—Pome (Apple)—Longitudinally cut showing layers and seeds-

गुद्देदार (Succulent) फल भी तीन प्रकार के होते हैं । (१) बेरी (Berry) —इसमें एपीकार्प बहुत पतला छिलका होता है और मीज़ोकार्प और एण्डोकार्प गुद्देदार होता है । बीज जो कड़ा होता है गुद्दे में

चारों ओर रहता है; जैसे टमाटर और भंटा सच्चे बेरी (Berry) हैं संतरा, और नीबू इत्यादि भी बेरी हैं (चित्र १३३—२ और ३)।

(2) ड्रूप (Drupe)—इस फल के तीनों भाग स्पष्ट दिखलायी देते हैं। एपीकार्प बाहरी छिलका होता है। मीज़ोकार्प बीच का गुद्दा होता है और एण्डोकार्प अन्दर का कड़ा बीज होता है; जैसे आम, बेर, नारियल, अखरोट इत्यादि (चित्र १३२—१) ।
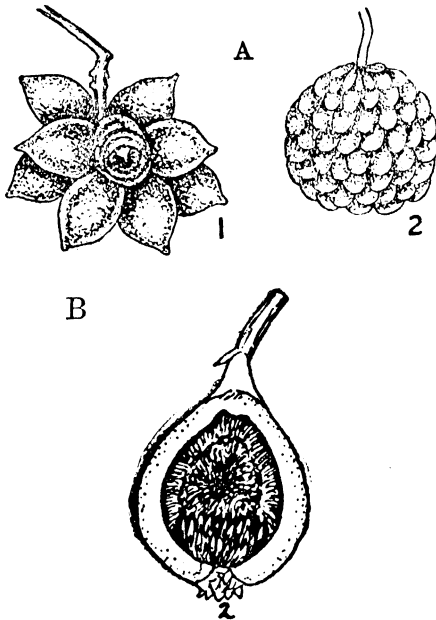
चित्र १३३—(A) Aggregate fruits; (B) Composite fruits.

(3) कुछ फल ऐसे होते हैं जिनमें बीज के ऊपर कड़ी झिल्ली रहती है। बीज के चारों ओर गुद्देदार भाग रहता है जो हम लोग खाते हैं। इन

फलों को पोम (Pome) कहते हैं; जैसे सेब, नासपाती इत्यादि (चित्र १३२ —4)।

कुछ फल ऐसे होते हैं जो छोटे छोटे फलों से मिलकर बनाते हैं। इन फलों को ऐग्रीगेट (Aggregate) फल कहते हैं; जैसे शहतूत, शरीफा इत्यादि (चित्र १३४ A)। वह फल जो पूरे इन्फलोरेसेंस (Inflorescence) से बना हो उसे कम्पोजिट (Composite) फल कहते हैं; जैसे कटहर, गूलर इत्यादि (चित्र. १३४ B)।

बीज और फलों के बिखरने की आवश्यकता (Need for dispersal) इन फलों के अन्दर बीज रहता है जो हवा, नमी और ठीक

Classification of Fruits.
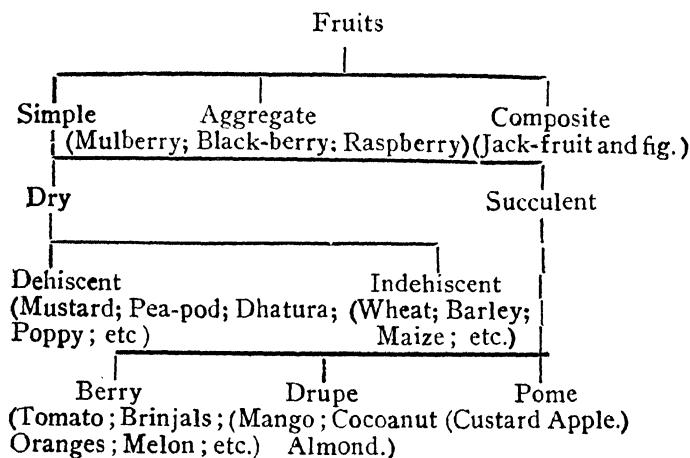
गर्मी पाने पर फिर पौधे के रूप में बदल जाता है। अर्थात् बीज छोटे रूप में एक पौधा है। इन बीजों का ठीक प्रकार की मिट्टी पर पड़ना भी आवश्यक है जिसमें यह भली-भांति पौधे में बदल कर बड़ा पौधा हो जाय। ऐसा होने के लिये इन बीजों का बिखर कर अच्छी मिट्टी पर पहुँचना आव-

श्यक है जिसकी कई रीतियाँ हैं। यदि ये रीतियाँ न होतीं तो बीज उसी पौधे के नीचे गिर जाता जिससे वह उत्पन्न हुआ है। यह उगने का प्रयत्न करेगा तथा भोजन और पानी उस मिट्टी से लेगा जिससे उसको जन्म देने वाला पौधा लेता है। परिणाम यह होगा कि माँ और बच्चे में ही भोजन-पानी इत्यादि के लिए लड़ाई होने लगेगी। दोनों में अपने को इस पृथ्वी पर जीवित रखने के लिए संघर्ष होने लगेगा। इस लड़ाई को 'जीवित रखने के लिए लड़ना' (Struggle for existence) कहते हैं। जो जीवित रहने के योग्य है वही जीवित रह सकता है। इसको 'सब से योग्य का जीवित रहना' (Survival of the fittest) कहते हैं।

इस संघर्ष में मुख्य पौधा ही अधिक शक्तिशाली सिद्ध होता है इसलिए उसी के उत्पन्न किये हुए बीजों के पौधे जो अपनी माँ के समान अधिक भोजन, पानी और प्रकाश नहीं पा सकते (क्योंकि उसी पौधे के ही साये में उग रहे हैं), मर जायँगे। यदि नये पौधों की ऐसी क्षति होती रहे तो कोई पौधा और इसी भाँति जानवर भी जीवित नहीं रह सकते। इसी को बचाने के लिए प्रकृति ने बीजों के बिखरने के लिए कई रीतियाँ दी हैं जिसमें लगभग प्रत्येक बीज को अपनी आवश्यकता के अनुसार भोजन और पानी मिल सके और अपने ही भाई-बन्धुओं और माँ से जीवित रहने के लिये संघर्ष न करना पड़े। तुमने शायद नीम, शीशम, या जामुन इत्यादि के पेड़ों के नीचे बरसात में बहुत से उन्हीं के बीजों से उत्पन्न हुए पौधों को देखा होगा, परन्तु क्या तुमने इस बात पर भी ध्यान दिया है कि उनमें से कितने पौधे बड़े हो जाते हैं। शायद एक भी नहीं।

बिखरने की भिन्न भिन्न रीतियाँ (Various means of dispersal)—बीजों और फलों का बिखरना कई प्रकार से होता है।

(१) **हवा के द्वारा** (By means of wind):—इसके द्वारा भी कई प्रकार से बीज का बिखरना होता है; जैसे—

(क) कुछ पौधों के बीज इतने हल्के होते हैं कि फल से निकलते ही

हवा उनको उड़ा ले जाती है और किसी दूसरी जगह छोड़ देती है; जैसे दूब और घासों के बीज।

(ख) कुछ पौधों के बीज चिपटे होते हैं अथवा कुछ में झिल्लीदार पंखे लगे रहते हैं जिससे हवा उनको कुछ दूर उड़ा ले जाती है; जैसे शीशम, सहजन, चिलबिल इत्यादि के बीज।

(ग) कुछ पौधों के बीजों में बहुत से बाल होते हैं जिससे हवा उनको बराबर उड़ाती रहती है। अकस्मात् यदि अच्छी मिट्टी में वह बीज रुक जाता है तो उनके उगने के लिए साधन मिलते ही उनसे नये पौधे तैयार हो जाते हैं; जैसे मदार, आक, सरकंडा इत्यादि के बीज। शायद तुमने भी इन बीजों को कभी न कभी अपने कमरों में उड़ते देखा ही होगा (चित्र १३४)। बीजों के इस रीति से बिखरने को **पैराशूट मेकॅनिज्म** (Parachute mechanism) कहते हैं।
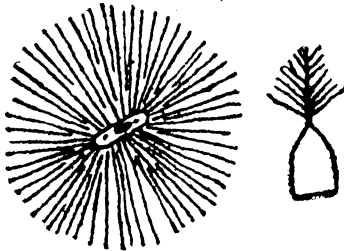
चित्र १३४—बीज जो वायु के द्वारा बिखरते हैं।

(घ) **सेन्सर मेकनिज्म** (Censor mechanism)—कुछ फल ऐसे होते हैं जिनमें बीज बहुत अधिक होते हैं। फल के पक जाने पर हवा के झकोरों से झुक झुक कर थोड़ी थोड़ी दूर पर कुछ कुछ बीज गिर आया करते हैं। सारे बीज एक ही साथ नहीं गिरते; जैसे पोस्ता, तिल, भड़भाँड़ इत्यादि।

(२) **पानी के द्वारा** (By means of water):—पानी के द्वारा बीज के बिखरने का सब से अच्छा उदाहरण नारियल है। समुद्र के किनारे उगे हुए नारियल के पेड़ों से नारियल समुद्र में गिर गिर कर विषुवत् रेखा के समीप के सारे स्थानों में फैल गये हैं। यह पेड़ ऐसी ऐसी जगहों पर पाया गया है जहाँ पहले मनुष्य कभी गया ही नहीं था। इसलिये इसका चारों ओर बिखरना पानी ही के द्वारा हुआ है। इसके अतिरिक्त पानी में

उगने वाले पौधों में पानी के द्वारा ही बीजों का बिखरना होता है जैसे सिंघाड़ा, कवलगट्टा की फलें।

(२) जानवरों के द्वारा (By means of animals)—

(क) चिड़ियाँ फल बहुत खाती हैं। परन्तु कुछ पेड़ों के फलों के बीज जैसे पीपल, बरगद, अमरूद इत्यादि के बहुत कड़े होते हैं इसलिये चिड़ियों के पेट से वे वैसे ही मल के साथ निकल जाते हैं। चिड़ियाँ इन फलों को खाकर किसी जगह अथवा आम, नीम इत्यादि के पेड़ों पर मल त्याग कर देती हैं। मिट्टी में अथवा पेड़ों के छाल पर नमी पाकर मल के अन्दर पड़े हुए बीज उग जाते हैं और पेड़ हो जाते हैं। इसका आश्चर्यजनक उदाहरण नीम या जामुन इत्यादि पर उगा हुआ पीपल अथवा बरगद का पेड़ है जो तुमने अवश्य कहीं न कहीं देखा होगा।
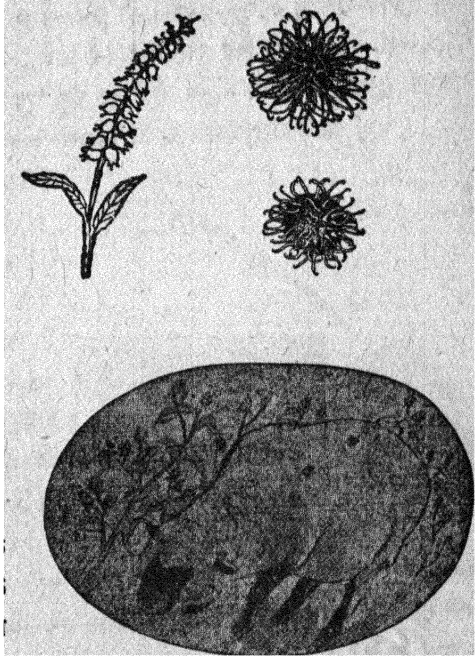
चित्र १३५—बीज जो जानवरों के द्वारा बिखरते हैं।

(ख) कुछ पौधों के बीज नोकदार होते हैं अथवा उनमें छोटे छोटे काँटे होते हैं। यदि कोई जानवर जैसे भेड़, बकरी इत्यादि उधर से जाते हैं तो वे उनके बालों में फँस जाते हैं और किसी खेत में उन जानवरों के मालिक

उनके बालों को साफ करके उन बीजों को गिरा देते हैं। तुमने स्वयं अपने धोतियों या कपड़ों में इन बीजों को फँसा हुआ देखा होगा; जैसे चिचिड़ा, बिछुआ, इत्यादि की फलें (चित्र १३५)।

(ग) कुछ फल बड़े मीठे और गुच्छेदार होते हैं। उनको मनुष्य या अन्य जीव खाते हैं और कड़े बीजों को इधर उधर फेंक देते हैं। इस प्रकार बीज चारों ओर बिखेर दिये जाते हैं। जैसे आम, जामुन इत्यादि की फलें जिनके गुच्छों को खाकर मनुष्य बीजों को फेंक देता है।

(४) झटके से अथवा फूट कर बिखरने वाले बीज जिनको **एक्सप्लोज़िव मेकॅनिज़्म** (Explosive mechanism) भी कहते हैं। कुछ पौधों के फल सूख जाने पर फट जाते हैं जिससे बीज कुछ दूर पर जाकर गिरते हैं अथवा कुछ पौधों के फल ऐंठ कर फटते हैं; जैसे मूँग, गुलमेंहदी इत्यादि, की फलें (चित्र १३६)।
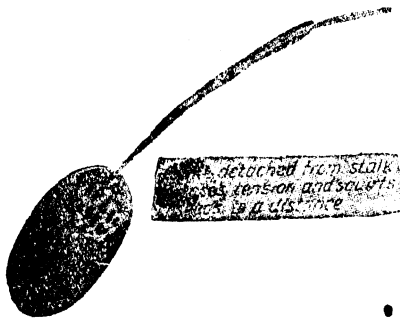
चित्र १३६—झटके से बिखरने वाले फल।

(५) कभी कभी इन चारों रीतियों से बिखरने के अतिरिक्त बीज मनुष्य या अन्य जीवों के द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाये जाते हैं।

अभ्यास

१. किन मुख्य मुख्य रीतियों के द्वारा पौधे बीजों को बिखेरते हैं? बीजों के बिखेरने से पौधों का क्या लाभ है? [H. S. 1936]

२. बीजों के बिखेरने की भिन्न भिन्न कौन रीतियाँ हैं? प्रत्येक का उदाहरण देते हुए प्रत्येक का वर्णन करो। [H. S. 1939]

३. निम्नांकित पर नोट लिखो—पैराशूट मेकेनिज़्म; जीवित रहने का संघर्ष (Struggle for existence); फूट कर बिखरने वाले फल।

४. फल क्या है ? कारण सहित निम्नलिखित फलों का वर्गीकरण करो:—सूर्यमुखी; आम; नासपाती; अंगूर; शहतूत; गेहूँ, गूलर; लौकी; भिन्डी; कोहड़ा; नीबू; अनार ।

५. बीजों के बिखरने की आवश्यकता क्या है ? वायु से सेन्सर (censor) द्वारा और पटाखे की भाँति फूटकर बिखरने वाले बीजों का उचित उदाहरण दो ।

६. तुम किस भाँति 'बेरी' और 'ड्रूप' में अन्तर मालूम करोगे ? किसी एक का चित्र खींचो और सभी भागों को दिखलाओ ।

अध्याय ९

पौधों में इन्द्रिय-विशिष्टता इत्यादि

(Sensitiveness in Plants, etc.)

जिस प्रकार प्राणिमात्र जैसे मेंढक, मनुष्य इत्यादि प्रोत्साहन से इन्द्रिय-विशिष्ट होते हैं वैसे ही यह गुण पौधों में भी पाया जाता है। पर पौधों में यह इतना स्पष्ट नहीं होता। स्वर्गीव सर जगदीश चन्द्र बोस ने इस ओर बहुत से प्रयोग किये हैं और बहुत सी आश्चर्यजनक बातों को स्थापित किया है जिनको देखकर बहुत से वैज्ञानिक चकित हो जाते हैं।

उदाहरण के रूप में तुमने छुईमुई (Mimosa) का पौधा तो अवश्य देखा ही होगा। इस पौधे को छूते ही उसकी पत्तियाँ आपस में सट जाती हैं
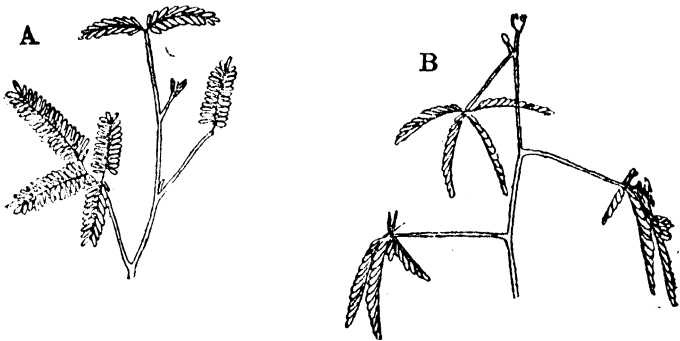
चित्र १३७—छुईमुई का पौधा : A—छूने के पहले की दशा
B—छूने के बाद की दशा

(चित्र १३७) कुछ देर के पश्चात् ये पत्तियाँ फिर धीरे धीरे खुल जाती हैं। तुमने जाड़े के दिनों में मटर के पौधे की पत्तियों को, पर विशेषकर उसके स्टिप्यूल को आपस में सटी हुई देखा होगा। जाड़े और पाले से बचने के लिए ये

पत्तिआँ आपस में सट जाती हैं और धूप होते होते फिर खुल जाती हैं (चित्र १३८)। इसके अतिरिक्त टेंड्रिल्स भी विशेष रूप से इन्द्रिय विशिष्ट होती हैं। किसी डंठल से लगते ही ये उसके चारों ओर धीरे धीरे लिपट जाती हैं। बीजों का उगना भी इनके इन्द्रिय विशिष्ट होने का एक सुन्दर उदाहरण है।
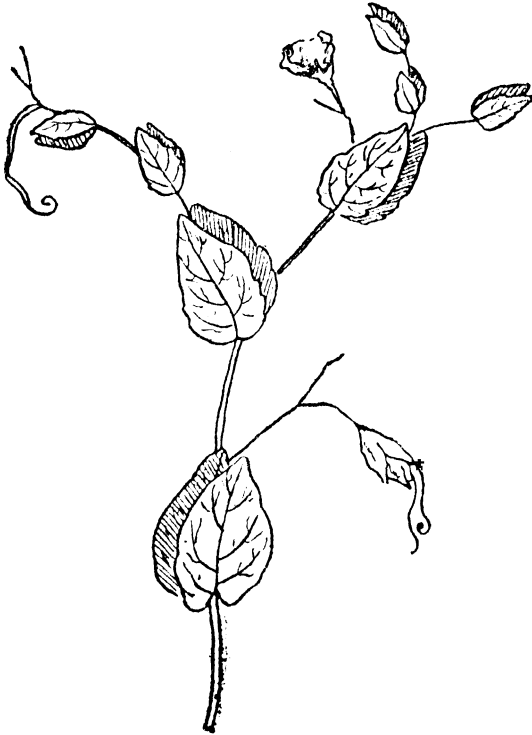
चित्र १३८—मटर के पौधे की पत्तियाँ जो पाले के कारण आपस में सटी हुई हैं।

कुछ कीड़े-मकोड़े को खाने वाले पौधों (Insectivorous plants) के मुख्य मुख्य भाग तनिक छू जाने पर इन्द्रिय-विशिष्ट हो जाते हैं; जैसे वीनस फ़्लाइ-ट्रैप (Venus Fly-trap) पौधे के फ्लैप्स (Flaps)

में निकले हुए बाल छू जाते ही फ्लॅप्स (Flaps) बन्द हो जाते हैं। पिचर पौधे (Pitcher plants) के सुराही के आकार के अंग में जैसे ही फतीङ्गे पहुँचते हैं वैसे ही एक प्रकार का पदार्थ अन्दर से निकल पड़ता है (चित्र १३९)।

इसके अतिरिक्त पौधों पर प्रकाश, आकर्षण-शक्ति और पानी इत्यादि का भी प्रभाव पड़ता है।

पौधों के उगने पर प्रकाश का प्रभाव (Heliotropism)–पौधे के उगने पर प्रकाश का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। इस प्रभाव को हीलियोट्रॉपिज्म (Heliotropism) कहते हैं। यदि एक उगते हुए पौधे को एक अँधेरे कमरे में रख दिया जाय जिसमें केवल एक ओर से थोड़ा सा प्रकाश आता हो तो पौधा उस ओर धीरे धीरे मुड़ जायगा अर्थात् तना प्रकाश की ओर घूम जाता है (चित्र १४०)। इसके विपरीत जड़ प्रकाश से दूर हटती है। इसलिये तने को पॉज़िटिव हीलियोट्रॉपिक
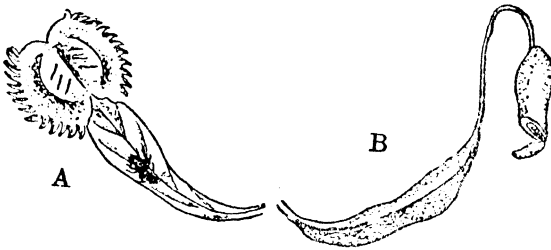
चित्र १३९—कीड़ों को खाने वाले पौधे A बीनस फ्लाईट्रेप; B पीचर पौधा।

(Positive Heliotropic) और जड़ को नेगेटिव हीलियोट्रॉपिक (Negative Heliotropic) कहते हैं।

यदि अँधेरा कमरा किसी ओर से भी खुला न रहे तो पौधा प्रकाश की खोज में लम्बा होता जाता है और पत्तियाँ छोटी और पीली पड़ जाती हैं।

पौधों के उगने पर आकर्षण शक्ति का प्रभाव (Geotro-

pism)—इस को आकर्षण शक्ति का प्रभाव कहते हैं। यदि अंकुर निकलते
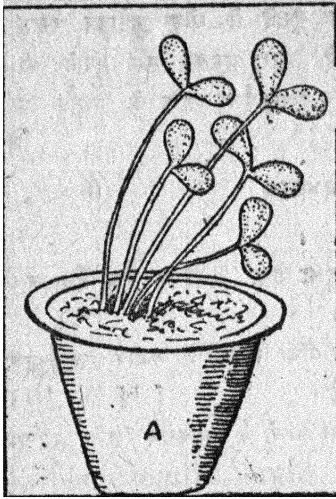
चित्र १४०—पौधों के उगने पर रोशनी का प्रभाव।

चित्र १४१—पौधे के उगने पर पृथ्वी के आकर्षण शक्ति का प्रभाव।

हुए पौधे को उलट दिया जाय जिसमें रेडिकल ऊपर हो जाय और प्ल्युमूल नीचे (चित्र १४१ B) तो कुछ समय के पश्चात् धीरे धीरे रेडिकल घूमकर नीचे और प्ल्युम्यूल ऊपर चले जायँगे। अर्थात् जड़ को पृथ्वी की आकर्षण शक्ति अपनी ओर घुमा लेती है और तने को अपने विपरीत। आकर्षण शक्ति के प्रभाव से जड़ के पृथ्वी की ओर घूम जाने को पॉजिटिव जिआट्रॉपिज्म (Positive Geotropism) और तने के विपरीत जाने को नेगेटिव जिआट्रॉपिज्म (Negative Geotropism) कहते हैं (चित्र १४१)।

यदि अंकुर निकलते हुए कुछ बीजों को एक गोलाकार डिस्क के किनारे पर लगा दिया जाय और यदि उस डिस्क को बराबर घुमाया जाय तो रेडिकल और प्ल्युम्यूल पृथ्वी की सतह के समानान्तर उगते चले जायँगे।

पौधों के उगने पर पानी का प्रभाव (Hydrotropism)— पौधों के उगने पर पानी के प्रभाव को हाइड्रोट्रापिज्म कहते हैं। यदि अंकुर निकलते हुए बीज को नम बुरादे से थोड़ा हटाकर रखा जाय तो रेडिकल पानी की खोज में ऊपर घूमकर नम बुरादे की ओर चला आवेगा। पानी का प्रभाव आकर्षण शक्ति के प्रभाव से भी तीव्र होता है।

अभ्यास

१. कारण बताओ :—

(क) यदि कोई उगता हुआ पौधा अंधेरे में रख दिया जाय तो वह लम्बा और पीला हो जाता है।

(ख) यदि कोई उगता हुआ पौधा खिड़की के समीप रखा जाय तो वह कमरे के विपरीत बढ़ने लगता है। [H. S. 1937]

२. नोट लिखो :—उगने पर पृथ्वी के आकर्षण शक्ति का प्रभाव; कीड़े-मकोड़ों को खाने वाले पौधे; छुईमुई (Mimosa pudica); उगने पर पानी का प्रभाव। [H. S. 1939]

३. 'ट्रापिज़्म' से तुम क्या समझते हो ? प्रकाश का पौधों के उगने पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

४. उगते हुए बीजों पर पृथ्वी के आकर्षण शक्ति का क्या प्रभाव पड़ता है ? क्या होगा यदि किसी गोलाकार पहिये पर कुछ उगते हुए बीज लगा दिए जायँ और उसको घुमाया जाय ?

५. स्पर्श और जल-वायु के कारण पौधों पर प्रभाव पड़ने के कुछ उदाहरण दो। इनसे पौधों का क्या लाभ है ?

Classification of Plants.
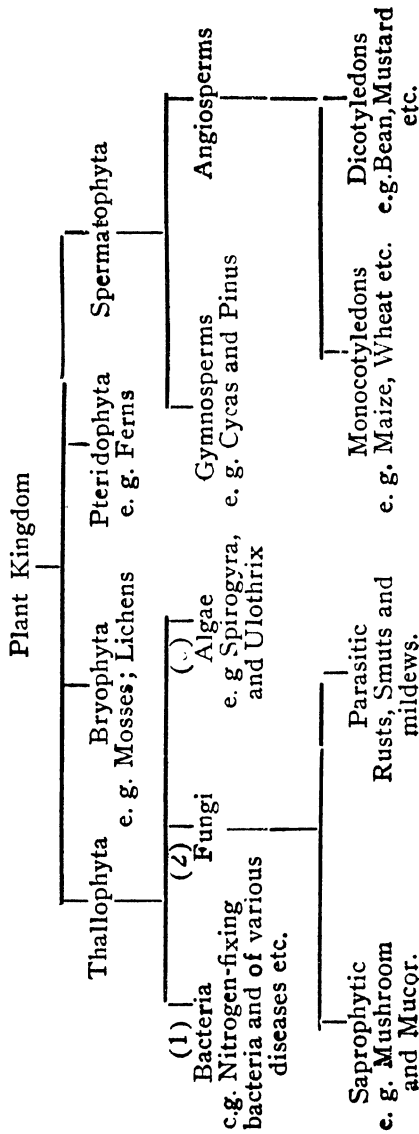
अध्याय १०

पौधों का वर्गीकरण

(Classification of Plants)

प्राणिमात्र के निरीक्षण की भाँति पौधों का भी निरीक्षण करना आवश्यक है। सारे वनस्पति मात्र चार मुख्य भागों में बाँटे जा सकते हैं :—(१) थैलोफाइटा (Thallophyta), (२) ब्रायोफाइटा (Bryophyta), (३) टेरिडोफाइटा (Pteridophyta) और (४) स्पर्माफाइटा (Spermaphyta)।

थैलोफाइटा (Thallophyta)—इस वर्ग के अधिकतर पौधों की उत्पत्ति में एक मुख्य अंग होता है जिसको थैलस (Thallus) कहते हैं। पौधे के भिन्न भिन्न अंग नहीं पाये जाते। इस भाग में वे सारे पौधे सम्मिलित हैं जो बहुत छोटे छोटे अर्थात् एक सेलवाले और पतले रेशेदार होते हैं। बैक्टीरिया (Bacteria) और फंजाई (Fungi) भी इनके भाग हैं जो हरे नहीं होते और अपना जीवन सड़े, गले अथवा हरे पौधे अथवा जीवधारियों के बनाये हुए भोजन पर बिताते हैं। पहली दशा में इनको सेप्रोफिटिक (Saprophytic) और दूसरी दशा में पेरेसिटिक (Parasitic) फंगस कहते हैं। थैलोफाइटा तीन मुख्य भागों में बाँटा जा सकता है ; (१) बैक्टीरिया (२) फंजाई और (३) एलगी (Algæ)।

बैक्टीरिया (Bacteria)—इनका शरीर एक सेल का ही होता है। हरा रंग इनमें नहीं होता इसलिए बहुत से बैक्टीरिया अपना निर्वाह दूसरों के बनाये हुए भोजन पर करते हैं अथवा सड़ी-गली वस्तुओं पर। किसी किसी के शरीर पर चलने-फिरने के लिए कुछ छोटे छोटे बाल अर्थात् सीलिया (Cilia) होते हैं। यह एक से दो, दो से चार, चार से आठ इस प्रकार भागों में उपयुक्त वातावरण पाने पर बँटकर बढ़ते हैं। ये मनुष्य सम्बन्धित बहुत से लाभ और हानि के कारण होते हैं। इसलिए वैज्ञानिकों का ध्यान इस ओर बहुत झुका है और इसके विषय में ज्ञान की वृद्धि बहुत हुई है। छोटे से छोटे बैक्टीरियम (Bacterium) की लम्बाई ·0005 mm. तक मालूम की गई है।

इस वर्ग के तीन भाग होते हैं जो इनके रूप के अनुसार रखे गये हैं।

(१) कॉकस आकार वाले (Coccus forms) जिनके आकार गोलाकार होते हैं जैसे मवाद (Pus) में पाये जानेवाले, इस वर्ग के दूसरे प्रकार का बैक्टीरिया न्युमोनिया की बीमारी फैलती है। (२) बेसिलस आकार वाले (Bacillus forms) जिनके आकार लम्बोदराकार होते हैं, जैसे घासों पर रहनेवाले बेसिलस (Hay bacillus) और टाइफोइड (Typhoid) का बेसिलस। (३) स्पिरिलम आकार के (Spirillum forms) जिनके सेल्स मुड़े हुए रहते हैं; जैसे हैजा (Cholera) के बैक्टीरिया इत्यादि (चित्र १४२)।

बैक्टीरिया संसार में प्रत्येक स्थान में पाये जाते हैं। इनका रूप, उत्पन्न होने की रीति, इनमें से कुछ का बिना आक्सीजन के या विशेष ठंडक या गर्मी में जीवित रह जाना, बिना हरियाली की सहायता भोजन प्राप्त करना, वायु से नाइट्रोजन को खींचना, अन्य बीमारियों को उत्पन्न करना इत्यादि—ये सब इतने आश्चर्यजनक हैं कि यदि इनके विषय में लिखा जाय तो एक पूरी पुस्तक तैयार हो जायगी।

चित्र १४२—भिन्न-भिन्न प्रकार के बैक्टीरिया—A B C काकस बैक्टीरिया; D E F बैसलिस बैक्टीरिया; G H I स्पिरिलम बैक्टीरिया।

विपरीत परिस्थिति में पड़ जाने पर इनका प्रोटाप्लाज्म सिकुड़ कर छोटा हो जाता है और उसके ऊपर सहन करनेवाली झिल्ली लग जाती है जिससे बैक्टीरिया उस समय तक शान्तिपूर्वक जीवित पड़ा रहता है जब तक अच्छी परिस्थिति न आ जाय। ऐसा होने पर २४ घण्टे के अन्दर एक से लाखों बैक्टीरिया उत्पन्न हो सकते हैं।

फंजाई (Fungi)—इन पौधों में हरियाली नहीं होती इसलिए
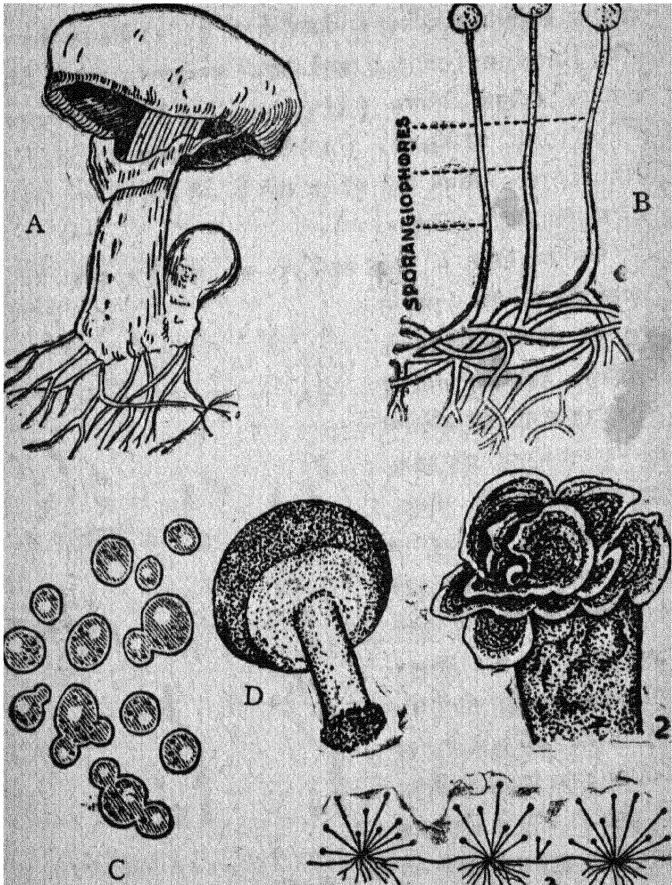
चित्र १४३—भिन्न भिन्न प्रकार के फंजाई A–कुकुरमुत्ता अथवा छत्ता (Mushroom); B–भुकडी अथवा फफूंदी (Mucor); C–ईस्ट(Yeast जो दही में पाये जाते हैं); D–टोडस्टूल इत्यादि ।

अपना भोजन ये स्वयं नहीं बना सकते । इसलि ए ये परासाइट

(Parasite) की भाँति रहते हैं अर्थात् जीवित वस्तुओं के बनाये हुए भोजन पर निर्वाह करते हैं अथवा सैप्रोफाइट (Saprophyte) होते हैं अर्थात् कूड़े-करकट अथवा पेड़ की छालों पर अपना निर्वाह करते हैं, परन्तु कुछ पैरासाइट सैप्रोसाइट की भाँति अपना जीवन निर्वाह कर सकते हैं। फंजाई का शरीर छोटे छोटे सफेद रेशों से भरा रहता है जिसको माइसेलियम (Mycelium) कहते हैं। यह बहुत नरम होता है। किसी किसी में इससे चूसने वाला अंग भी निकलता है जिसको हॉस्टोरिया (Haustoria) कहते हैं। माइसीलियम से लम्बे लम्बे अंग भी निकलते हैं जिनसे जीवन आरम्भ करने वाले बहुत से स्पोर्स (Spores) निकलते हैं जिनका बिखरना वायु द्वारा होता है।

किसी किसी फंजाई में नर और मादा अंग भी होते हैं। फंजाई को तीन भाग में बाँटा जा सकता है; जैसे—

(१) मुकर (Mucor) जिसमें रेशेदार अंग होते हैं (चित्र १४३ B) जो भिगोकर रखे गये रोटी अथवा बिस्कुट के टुकड़े पर ५ अथवा ६ दिनों के पश्चात् पाया जा सकता है।

(२) यीस्ट (Yeast) जो गोली गोली होती हैं। ये दह में अत्यधिक मात्रा में पायी जाती हैं (चित्र १४३ C); मिल्ड्यूज (Mildews) भी इसी भाग में हैं।

(३) कुकुरमुत्ता (Agaricus or mushroom) और गेहूं इत्यादि पर होने वाली बीमारियों के फंगस जैसे गेहूँ का रस्ट इत्यादि (Wheat rust etc) इस विभाग में हैं (चित्र १४४ A. D) इसका ऊपरी भाग प्याला के आकार का होता है।

ऐलगी (Algae)—यह एक सेलवाले और बड़े रेशेदार पौधे होते हैं जो रंगीन अवश्य होते हैं। इसलिए ये अपना भोजन स्वयं बना सकते हैं इसके भी तीन भाग अपने रंग के अनुसार होते हैं।

(१) **हरी एलगी** (Green algae)—यह एक सेल का होता है

या पतले हरे डोरे की भाँति होता है जिसमें बहुत से सेल्स एक कतार में रहते हैं। गोलाकार रूप में भी कई सेल्स का यह हो सकता है। इसका उदाहरण वालवाक्स (Volvox) और लेदार (Spirogyra and Ulothrix) हैं (चित्र १४४ B)।

(२) भुरा एलगी (Brown algæ)—अपने रंग के अनुसार इसका नाम पड़ा है यह पत्ती नुमा भी होता है। इसका उदाहरण सारगैसम (Sargassum) पौधा है जो उत्तरी अटलांटिक महासागर में बहुत पाया जाता हैं। इसी के कारण उस समुद्र का नाम सारगैसो समुद्र (Sargasso sea) पड़ा है।
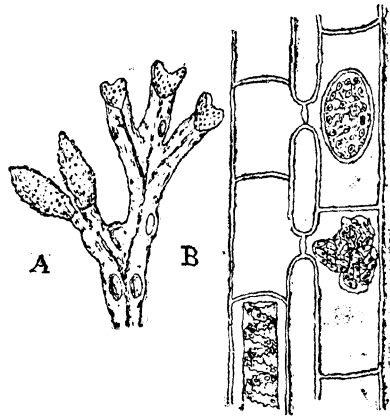
चित्र १४४—भिन्न भिन्न प्रकार के ऐलगी A—लाल ऐलगी B—हरी ऐलगी (स्पाइरोगाइरा आपस में जोड़ खा रहे हैं)।

(३) लाल एलगी (Red algae)—इसका रंग लाल होता है। इसके सेल्स में सीलिया नहीं होते। यह बहुत कम पाया जाता है परन्तु जहाँ कहीं भी यह पाया जाता है वहाँ यह लगभग १०० फीट लम्बा होता है और समुद्र की तह से चिपका रहता है (चित्र १४४ A)।

ब्रायोफाइटा (Bryophyta)—इस वर्ग में काई के पौधे हैं। पौधा हरा छोटा पेड़ के आकार का होता है। फिर भी यह पौधे का केवल नकली रूप है। पेड़ के अंगों की भाँति इसके अंग नहीं होते। नर और मादा पौधे पृथक पृथक होते हैं। इसका मुख्य उदाहरण काई (Moss) इत्यादि

हैं। काई का पौधा सर्वदा नम स्थानों पर उगता है। इसमें छोटी छोटी पत्ती, बहुत पतला छोटा तना और नरम जड़ें होती हैं जिनको राइज़ाइड्स (Rhizoids) कहते हैं। सबके ऊपर नर अथवा ऐंथरीडिया (Antheridia), या मादा अथवा आर्कीगोनिया (Archegonia) अंग होते हैं अथवा स्पोरोगोनियम (Sporogonium) होता है। यह पौधा एक सेन्टमीटर से अधिक बड़ा नहीं होता।

टेरिडोफाइटा (Pteridophyta)-- इसी भाग के पौधे में सबसे पहले सच्चे तने, पत्ती और जड़ का होना आरम्भ होता है। तब भी ये बहुत ही प्रारम्भिक अवस्था में होते हैं। इसका मुख्य उदाहरण फर्न पौधा (Fern plant) है जो बागों के सायादार घरों (Green house) में रक्खे जाते हैं। यह विशेषकर विषवत् रेखा के समीप के जंगलों में पाया जाता है। इसकी पत्तियों के नीचे दोनों ओर भूरे अथवा काले धब्बे होते हैं जिनसे स्पोर्स (Spores) निकलकर प्रोथैलस (Prothallus) में बदल जाते हैं। उसी पर नर और मादा अंग उत्पन्न होते हैं जिनके सम्पर्क से फर्न पौधा उत्पन्न हो जाता है। फर्न कई प्रकार के होते हैं (चित्र १४५)।

स्पर्मेटोफाइटा (Spermatophyta)—स्पर्मेटोफाइटा शब्द का अर्थ बीजदार पौधा(Seed plant) है अर्थात् इस विभाग के पौधों में बीज होता है जो और विभागों में नहीं पाया जाता। इस वर्ग के पौधों के सारे अंगों की वृद्धि विशेष रूप से होतीं है अर्थात् पत्तियाँ, तना और जड़ें सच्चे और दृढ़ होते हैं। पौधे छोटे, बड़े और कई प्रकार के होते हैं। उदाहरणतः चीड़, मोरपंखी, गेहूँ, ताड़, आम, जामुन, लौकी, भिन्डी, घास इत्यादि हैं। इन सारे पौधों में फूल होते हैं। परन्तु कुछ पौधों के फूल नंगे होते हैं। उनमें हरी और लाल पंखड़ियाँ नहीं होतीं इसलिए इस वर्ग के दो भाग हैं। (१) जिम्नोस्पर्म्स (Gymnosperms) जिसका अर्थ नंगे फूल और बीज वाले

(Naked seeds) पौधे हैं और (२) एन्जियोस्पर्म्स (Angio-sperms) जिनमें सच्चे फूल होते हैं।

चित्र १४५—फर्न का एक पौधा ।
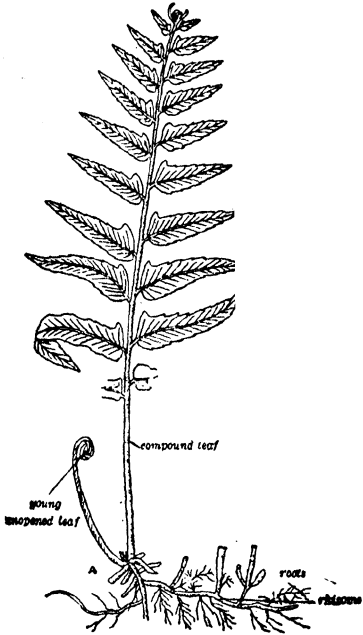
जिम्नोस्पर्म्स (Gymnosperms)—इसके नाम से ही विदित होता है कि इसके बीज नंगे (Gymno--naked; Sperms--seeds) होते हैं। इसके फूल भी नंगे होते हैं। नर और मादा पौधे अलग अलग होते हैं। इसके डंठल, पत्ती, जड़ इत्यादि दृढ़ और उच्च रूप से बने रहते हैं। इनके भीतरी भाग पृथक पृथक रहते हैं जो एन्जियोस्पर्म में भली भाँति बन जाते हैं। इस वर्ग के पौधे विशेषकर पहाड़ों पर ही पाये जाते हैं; जैसे चीड़ (Pine), देवदार (Deoder), मोर-पंखी (Cypress) इत्यादि। इस वर्ग के पौधे हम लोगों के बड़े काम के होते हैं। इनसे लकड़ी मिलती है जिससे अच्छी अच्छी कुर्सियाँ और दूसरे सामान बनाये जाते हैं।

ऐन्जियोस्पर्म्स (Angiosperms)--यह वह भाग है जिससे हम लोगों का बहुत सम्बन्ध रहता है। इसके फूल में सब भाग होते हैं और बीज फल के अन्दर रहता है। इस भाग के पौधों के डंठल, पत्तियाँ और जड़ें उत्पत्ति की दृष्टि से बहुत बढ़ी चढ़ी होती हैं। इसके दो भाग होते हैं। (१) एक दाल वाले पौधे (Monocotyledonous plants) अर्थात् वे पौधे जिनके बीज में एक ही दाल हो; जैसे गेहूँ, धान, मक्का,

चित्र १४६——जिम्नोस्पर्म्स—नुकीली पत्ती रखने वाले पौधे और उनका बीज (कोन)।
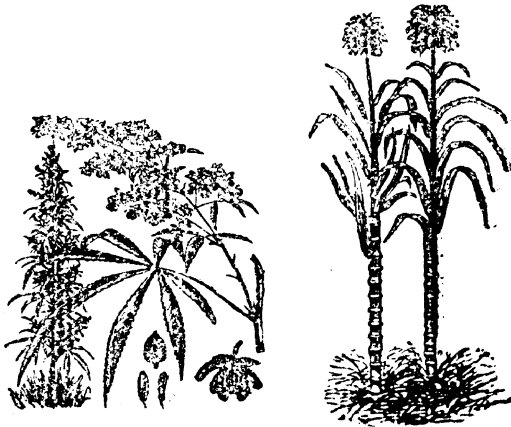
चित्र १४७——ऐन्जियोस्पर्म्स—जूट और ईख के पौधे।

ताड़, मकई, बाँस, घास, ईख इत्यादि। (२) दो दाल वाले पौधे (Dicotyledonous plants) अर्थात् वे पौधे जिनके बीज में दो दालें हो;
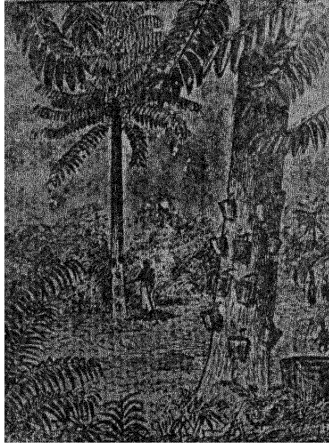
चित्र १४८—रबर के पौधे।

जैसे मटर, चना, सरसों, उर्द, अरहर, सूर्यमुखी, रेंडी इत्यादि।

अभ्यास

१. 'वर्गीकरण' से तुम क्या समझते हो? किस प्रकार तुम सिद्ध करोगे कि 'एन्जियोस्पर्म्स' 'जिम्नोस्पर्म्स' से अधिक उच्च श्रेणी के हैं?

२. कीटाणुओं के बारे में तुम जो कुछ जानते हो लिखो।

३. तुम कितने प्रकार की भुकड़ियों (Fungi) को जानते हो? प्रत्येक पर कुछ टिप्पणी दो।

४. 'जिम्नोस्पर्म' से तुम क्या समझते हो? यह टेरिडोफाइटा से किस प्रकार भिन्न है?

५. निम्नलिखित पर नोट लिखो:—

लेदार (Spirogyra) ; काई (Moss) ; फफूँदी (Mucor) और हास्टोरियो ।

६. 'ऐलगी' और 'भुकडी' क्यों एक ही वर्ग में रखे गये हैं ? क्या कारण है कि एलगी अपना भोजन स्वयं बना सकते हैं परन्तु भुकडी ऐसा नहीं कर सकतीं ।

७. निम्नांकित का मुख्य गुण बताओ :—

काई का पौधा ; कुकुरमुत्ता और अमर बेल (Cuscuta) ।

८. निम्नलिखित का वर्गीकरण करो :—

आरोबैंकी ; ईस्ट, लेदार ; बंझा (Loranthus) ; साइकस ; ताड़ का पेड़ ; बाँस और नीबू का पेड़ ।

PLANTS IN RELATION TO MAN

अध्याय ११

मनुष्य को लाभ पहुँचाने वाले पौधे

(Plants that are useful to Man)

बैक्टीरिया (Bacteria)—लाभदायक पौधों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए सबसे पहले छोटे पौधे से आरम्भ करना चाहिये। इसलिए बैक्टीरिया को सर्व प्रथम ध्यान में लाना आवश्यक है। सभी बैक्टीरिया को अपना शत्रु न समझना चाहिये। बहुत से बैक्टीरिया ऐसे भी हैं जिनसे मनुष्य का परम उपकार होता है और यदि न रहें तो मनुष्य का जीवित रहना ही असम्भव हो जाय। हानिकारक बैक्टीरिया के विषय में अगले अध्याय में बतलाया जायगा। बैक्टीरिया इतने छोटे होते हैं कि इनका रूप इत्यादि १००० गुने शक्तिवाले अणुवीक्षण यन्त्र से ही देखा जा सकता है।

बैक्टीरिया ही इधर-उधर पड़ी वस्तुओं के सड़ने का मुख्य कारण है। यदि ऐसा न होता तो थोड़ी ही समय में संसार व्यर्थ और मरी हुई वस्तुओं (Waste and dead matters) से भर जाता। बैक्टीरिया इन वस्तुओं को रासायनिक रीति से तोड़कर वायु और मिट्टी में उन पदार्थों को छोड़ देता है जिनपर जीवन निर्भर है जैसे कार्बन डाईऑक्साइड, एमोनिया (Ammonia) और नाइट्रेट्स (Nitrates) इत्यादि। दही, मक्खन, पनीर इत्यादि की सुगन्ध और स्वाद एक प्रकार के बैक्टीरिया या फंगस के कारण ही होता है जिसको यीस्ट (Yeast) कहते हैं। लेकिन यदि दही इत्यादि अधिक समय के लिए छोड़ दिये जायँ तो उन पर दूसरे प्रकार के बैक्टीरिया का प्रभाव पड़ जाने के कारण वे नष्ट हो जाते हैं। दही खट्टी और खराब हो जाती है। इसको खाने पर भिन्न भिन्न प्रकार की बीमारियाँ तक हो सकतीं हैं।

एक दूसरे प्रकार के बैक्टीरिया के ही कारण ईख, महुआ या और किसी फल का रस कुछ समय तक रख देने पर शराब और फिर सिरका (Vinegar) या तेजाब में बदल जाता है। इस बदल जाने की दशा को फर्मेंटेशन (Fermentation) कहते हैं। लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया (Lactic acid bacteria) के प्रभाव से दूध, मक्खन और नीर में बदल जाता है।

तीसरे प्रकार का बैक्टीरिया जिसको नाइट्रोजन फिक्सिंग बैक्टीरिया (Nitrogen fixing bacteria) कहते हैं हवा से नाइट्रोजन खींच कर मिट्टी में नाइट्रेट्स बनाते हैं। इस प्रकार मिट्टी उपजाऊ हो जाती है और खेती अच्छी होती है। लेकिन ये बैक्टीरिया केवल मटर, चना और भिन्न २ प्रकार की दालों वाले पौधों की जड़ों में पाये जाते हैं। इन जड़ों में कुछ उभड़ने (Nodules) रहती हैं जिनमें ये रहते हैं (चित्र १४९)। इनके अतिरिक्त कुछ बैक्टीरिया के ही कारण आमाशय में गॅस्ट्रिक रस भोजन के प्रोटीन वाले भाग को पेप्टोन में बदल सकता है।
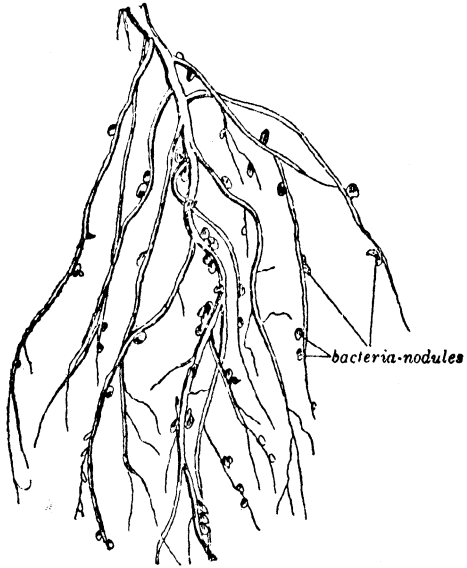
चित्र १४९—मटर की जड़ों पर लगी हुई छोटी छोटी थैलियाँ जिनमें नाइट्रोजन को खींचनेवाले बैक्टीरिया उपस्थित रहते हैं।

इन बैक्टीरिया के अतिरिक्त कई प्रकार के बैक्टीरिया मिट्टी में पाये जाते हैं जो गंधक और अन्य रसायनिक वस्तुओं को बदलते रहते हैं।

फंजाई (Fungi)—सड़ी गली वस्तुओं पर अपने जीवन को व्यतीत करनेवाले फंजाई (Saprophytic fungi) उन वस्तुओं को नष्ट करने में सहायता पहुँचाते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ भुकड़ियाँ भी इन पर लग कर इनको साफ कर देती हैं। कुछ मशरूम्स (Mushrooms) भोजन के रूप में भी व्यवहार में लाये जाते हैं।

एलगी (Algae)—एक विशेष प्रकार के एलगी में जिनको डायटम्स (Diatoms) कहते हैं शीशे (Silica) का भाग विशेष प्रकार से रहता है जो समुद्र के नीचे बहुत ढेर में जमा हो जाता है यह बड़े बड़े विस्फोटक (Explosives) बनाने में और अन्य कामों में काम आता है। दूसरे प्रकार के भूरे एलगी से आयोडीन (Iodine) निकाला जाता है। एक प्रकार के लाल एलगी से जिलेटीन (Gelatine) इत्यादि भी बनाया जाता है। यह एक प्रकार का गोंद है।

ब्रायोफाइटा (Bryophyta)—काई के पौधों से मनुष्य को कोई विशेष लाभ नहीं है। केवल इतना ही लाभ है कि भूमि पर फैल जाने पर पानी की धारा से मिट्टी को कट जाने से ये बचाते हैं। पीट मॉस (Peat moss) में इतना पानी रहता है कि पेड़ों की कलम इत्यादि को दूर के स्थानों पर भेजने के लिये उसे उसके चारो ओर लपेट देते हैं जिसमें कुछ दिनों तक उस कलम को नमी मिलती रहे। काई के पौधे अन्य हरे पौधों की भाँति वायु के कारबन डाइ-आक्साइड को तोड़ कर विशेष रूप में आक्सीजन को छोड़ते हैं। आयरलैंड (Ireland) और स्काटलैंड (Scotland) इत्यादि देशों में काई को सुखाकर वहाँ के निवासी जलाने के काम में भी लाते हैं।

टेरिडोफाइटा (Pteridophyta)—बाग के सजाने और बँगलों की सुन्दरता बढ़ाने के लिये फर्न्स को लोग रखते हैं। एक खास प्रकार का फर्न दवा के भी काम आता है।

जिम्नोस्पर्म (Gymnosperms) इस वर्ग के बहुत से पौधों की लकड़ियाँ बड़े काम की होती हैं; जैसे, देवदार इत्यादि। चीड़ की लकड़ी (Pine) दियासलाई बनाने के काम आती हैं। कानिफर्स (Conifers) के पेड़ों से

रेज़ीन (Resin) और तारपीन (Turpentine) भी निकाला जाता है। चीड़ के पौधों से भी ये निकाले जाते हैं। इसके डंठल को थोड़ा चीर दिया जाता है जिससे एक गाढ़ा द्रव निकल आता है। इसको भाप में खौला-कर तारपीन का तेल और शेष रेज़िन निकाल लेते हैं।

ऐंजियास्पर्म (Angiosperms)—इस वंश के लगभग सारे पौधे मनुष्य के किसी न किसी काम के होते हैं। इसलिए इसके दो विभागों को पृथक् पृथक् बतलाना अधिक उचित है।

१. एक दालवाले पौधे

Monocotyledonous Plants.

(क) **भोजनः—** इस विभाग के बहुत से पौधे हम लोगों के भोजन के काम आते हैं; जैसे गेहूँ, चावल, जौ, मक्का, ईख इत्यादि इनके अन्दर के भोज्य पदार्थ मनुष्य के शरीर के भिन्न भिन्न अंगों के बनाने के काम आते हैं। ताड़ से भी ताड़ी निकाल कर उसको लोग पीते हैं या ताड़मिश्री बनाते हैं। नारियल के फल को भोजन के रूप में अथवा तेल निकालने के लिये काम में लाते हैं। उसके ऊपरी रेशों से रस्सियाँ भी बनायी जाती हैं।

(ख) **ईंधन और शक्ति इत्यादिः**—बाँस की लकड़ी या घास फूस को लोग जलाने के काम में लाते हैं। बाँस बहुत काम का होता है। इससे चारपाई, बक्स, कागज़, मकान की छत, नाव और सामान ढोने के लिए बहँगी बनायी जाती है। ताड़ की पत्ती से पंखा, मकान की छत इत्यादि बनते हैं। सरपत और नरकुल से मामूली कलम और चटाइयाँ भी बनती हैं। बेंत से कुर्सियाँ और चारपाइयाँ बीनी जाती हैं। इसके कुछ पौधे दवा के काम भी आते हैं।

(ग) **भूसा इत्यादिः**—मनुष्य के बहुत से पालतू जानवर जैसे गाय, भैंस, घोड़ा इत्यादि को घास, ईख अथवा बाँस की हरी पत्तियों तथा धान, गेहूँ और जौ की भूसियों (Fodder) की आवश्यकताएँ इसी वर्ग से पूरी होती हैं।

२. दो दाल वाले पौधे
२—Dicotyledonous Plants.

(क) भोजनः—अरहर, मटर, चना, उर्द इत्यादि की दालें बनती हैं जिनमें मनुष्य की मांसपेशियों के बनाने वाले भोज्य पदार्थ रहते हैं। ये हम लोगों के आवश्यक अंग हैं। इस विभाग में बहुत सी तरकारियाँ हैं; जैसे आलू, गोभी, पातगोभी, गाजर, साग इत्यादि। बहुत से फल भी खाने के काम आते हैं; जैसे आम, अमरूद, अँगूर इत्यादि।

(ख) ईंधन इत्यादिः—बहुत से पेड़ों की लकड़ियाँ जलाने के काम में आती हैं या शक्ति (Energy) पैदा करने के काम में आती हैं। कुछ मोटी और मजबूत लकड़ियाँ मकान में भी लगायी जाती हैं; जैसे शीशम, आम, नीम इत्यादि। नीम के पतले तनों से दाँत भी साफ किये जाते हैं। इसका तीतापन दाँतों के अन्दर की गन्दगी और कीटाणुओं को मार देता है। बहुत सी लकड़ियों से टेबुल, कुर्सियाँ, चारपाइयाँ भी बनायी जाती हैं; जैसे शीशम, आम, जामुन इत्यादि, अर्थात् ये मकानों के सुसज्जित करने के काम आती हैं। बहुत सी लकड़ियों से काग़ज़ भी बनाया जाता है।

(ग) वस्त्र इत्यादिः—रूई के पेड़ के फूल से निकले हुए रेशे से जिसको रूई कहते हैं कपड़े बनाये जाते हैं। सन और पटुआ के तनों से निकाले हुए रेशों से भी कपड़े, बोरे (Gunny bags), दरियाँ, कालीन इत्यादि बनाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त सेमर की रूई से जो फल के भीतर रहती है, तकिये अथवा गद्दे तैयार किये जाते हैं।

(घ) औषधियाँ इत्यादिः—बहुत से पौधे दवा के काम आते हैं, जैसे गुल बनपशा इत्यादि। बहुतों से तेल निकाला जाता है; जैसे सरसों, तीसी, तिल्ली, बेला, चमेली इत्यादि। बहुतों से इत्र भी बनाया जाता है; जैसे गुलाब का इत्र। बहुत सी दवाइयाँ जैसे क्विनाइन, मॉरफीन इत्यादि, पौधे से ही निकाले जाते हैं। रेज़ीन, गोंद भी बबूल से ही निकाला जाता है। अफीम पोस्ता के कच्चे फल से निकाले हुए रस से बनायी जाती है।

इन सब बातों के अतिरिक्त यह जान लेना आवश्यक है कि सारे दो दाल वाले पौधों की जड़ें मिट्टी में नाइट्रेट्स बनाने के बड़े काम आती हैं और इसी

कारण खेतों में हर साल भिन्न-भिन्न फसल का बोना (Rotation of crops) बड़ा लाभदायक सिद्ध होता है। इस अवसर पर तुलसी के पौधे के महत्व को भी बतला देना आवश्यक है। इस पौधे में वायु को शुद्ध करने की शक्ति अन्य पौधों से बहुत अधिक है। यह दवा के काम भी आती है और इसके आसपास मक्खियाँ और मच्छड़ नहीं रहते। यह सुगन्धित भी होती है। चित्त को साफ रखती है। चाय की पत्तियों के स्थान पर इसी पौधे की पत्तियों का सेवन करना अनुचित न होगा।

अभ्यास

१. दो पौधों का नाम लिखो जो मनुष्य को लाभप्रद हैं ? प्रत्येक का संक्षिप्त विवरण दो और बताओ वे किस प्रकार लाभप्रद हैं ?[H.S.1938]

२. दो ऐसे पौधों का नाम लिखो जिन्हें तुमने अपने स्कूल-संग्रहालय (Museum) के लिए एकत्रित किया हो। तुमने उनको कहाँ से और कैसे एकत्रित किया ? प्रत्येक में तुमने कौन से मुख्य गुणों का अध्ययन किया ? [H. S. 1940]

३. निम्नलिखित पर नोट लिखो :—

ईस्ट [H.S 1939]; डायटम; जिम्नोस्पर्म; छीमीदार पौधे (Leguminous plants); पीट काई।

४. कीटाणुओं के लाभप्रद होने पर लेख लिखो।

५. मनुष्य को लाभ पहुँचाने वाले कुछ एञ्जियास्पर्म्स और भुकड़ियों का नाम लिखो। वे किस प्रकार मनुष्य को लाभ पहुँचाते हैं ? कहाँ और कब वे पाये जाते हैं ?

६. छः ऐसे पौधों का नाम लिखो जिन्हें मनुष्य निम्नलिखित कार्य के लिए प्रयोग में लाता है :—

(१) तरकारी, (२) आराम के लिए, (३) दवाइयों के रूप में। इनमें किन्हीं दो पर टिप्पणी लिखो।

७. 'कीटाणु मित्र के रूप में' पर एक लेख लिखो।

८. निम्नलिखित से तुम क्या समझते हो :—

फसल का हेरफेर (Rotation of Crops); सेप्रोफिटिक भुकड़ी। प्रत्येक का कुछ उदाहरण दो।

अध्याय १२

मनुष्य को हानि पहुँचानेवाले पौधे इत्यादि

(Plants that are harmful to Man.)

बैक्टीरिया—इस संसार में बहुत से पौधे ऐसे भी हैं जो मनुष्य को बहुत हानि पहुँचाते हैं। कुछ तो उनके जान के घातक भी होते हैं। इस अध्याय में भी हम पिछले अध्याय की भाँति सब से छोटे पौधों से आरम्भ करेंगे। बहुत से बैक्टीरिया अपना भोजन स्वयं पैदा न करने के कारण जीवित वस्तुओं के उत्पन्न किये हुए भोजन पर निर्वाह करते हैं। ऐसा होने से उस वस्तु की हानि होती है या वह नष्ट ही हो जाती है। ऐसी दशा को पैरासिटिज़्म (Parisitism) कहते हैं। दूसरे शब्दों में पैरासिटिज्म को जीवन के जाल (Web of life) की एकतरफा हालत (One-sided activity) को कहते हैं।

बैक्टीरिया इतने छोटे होते हैं कि एक बिन्दु में कई लाख रखे जा सकते हैं। यह तो पहले ही बतलाया जा चुका है कि बैक्टीरिया तीन प्रकार के होते हैं। ये बड़े तेजी के साथ बढ़ते हैं अर्थात् १ से १६७००००० तक २४ घण्टे के भीतर हो सकते हैं। इन्हीं के कारण भिन्न भिन्न प्रकार की छूतवाली और वायु द्वारा एक दूसरे को हो जानेवाली भयानक बीमारियाँ (Contagious and infectious diseases) उत्पन्न होती हैं; जैसे हैजा (Cholera), टाइफॉयड (Typhoid fever), तपेदिक (Tuberculosis), प्लेग (Plague), कोढ़ (Leprosy), इनफ्लुएन्जा (Influenza), निमोनिया (Pneumonia) इत्यादि। ऐसी दशा में बैक्टीरिया को माइक्रोब्स अथवा जर्म्स (Microbes or germs) कहते हैं। जब दूसरे प्रकार के बैक्टीरिया अथवा कीड़े पौधों में बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं तो उनको पौधों का पेस्ट (Plant pest) कहते हैं।

इन सारी बीमारियों के बारे में अलग अलग बतलाना आवश्यक है।

ये सारी बीमारियाँ इन कीटाणुओं के मनुष्य के शरीर के भिन्न भिन्न भागों में प्रवेश करने से होती हैं। वहाँ पहुँच कर वे गिनती में बहुत बढ़ जाते हैं और एक प्रकार का विषैला पदार्थ टॉक्सिन (Toxin) उत्पन्न करते हैं जिससे शरीर को बड़ी हानि होती है। बहुधा शरीर में उस तरह के विष को मिटाने के लिये उसका उल्टा पदार्थ ऍन्टी-टॉक्सीन (Anti-toxin) उत्पन्न हो जाता है जिससे बीमारी दब जा सकती है। भाग्यवश बहुत-सी बीमारियाँ ऐसी हैं कि यदि कोई मनुष्य उससे बीमार पड़ कर अच्छा हो जाय तो फिर उसको वह बीमारी कई वर्षों के लिये नहीं होगी। मनुष्य में इस गुण को प्राप्त कर लेने को इम्युनिटी (Immunity) कहते हैं।

क्षय (Tuberculosis)—यह बीमारी ट्युबरकिल बॅसिलस (Tubercle bacillus) के कारण होती है। इससे आजकल बहुत मनुष्य मरते हैं। प्रत्येक मनुष्य इस बॅसिलस को वायु के द्वारा फेफड़े में लेता रहता है परन्तु स्वस्थ मनुष्य पर जो सूर्य का प्रकाश, ताजी हवा और स्वस्थ भोजन करता है, यह अपना प्रभाव नहीं डाल सकता। अन्यथा मनुष्य के फेफड़े में पहुँच कर धीरे धीरे अपना सिक्का जमाता है। शरीर सुस्त पड़ जाता है और मन्द मन्द ज्वर आने लगता है। बहुधा खाँसी आने से फेफड़े से रक्त भी निकलने लगता है। शरीर धीरे धीरे क्षीण होने लगता है और फिर मृत्यु हो जाती है। इसको फुस्फुस का क्षय (Pulmonary tuberculosis) कहते हैं।
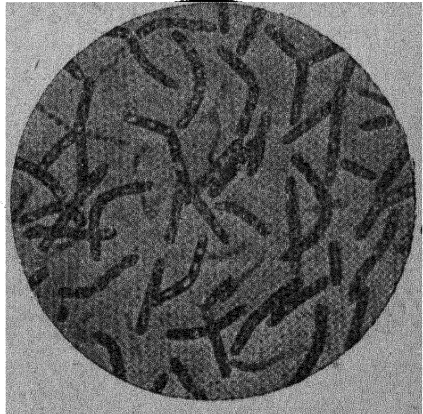
चित्र १५०—क्षय रोग के कीटाणु

इस बीमारी का सिक्का जम जाने पर अच्छा होना कठिन है परन्तु

इससे यदि बचाव के उपाय किये जायँ तो किसी को भी यह रोग न पकड़े। जैसे मकान को साफ-सुथरा और हवादार रखो, ताकि सूर्य की रोशनी खूब आवे, स्वस्थ भोजन करो, शुद्ध वायु का सेवन करो, शक्ति की क्षीणता न होने पावे, गहरी साँस लेने का व्यायाम करो, बाल-विवाह से बचो, अधिक बच्चे न पैदा करो नशीली वस्तुओं से दूर रहो इत्यादि। यह बात याद रखने योग्य है कि ये कीटाणु सूर्य के प्रकाश में उपस्थित अल्ट्रावायलेट किरण (ultra-violet rays) के कारण मर जाते हैं।

इन कीटाणुओं के अतिरिक्त दूसरे प्रकार के कीटाणु अँतड़ियों का क्षय (Intestinal tuberculosis) और जोड़ का क्षय इत्यादि भी फैलाते हैं।

हैज़ा (Cholera)—इसके फैलाने वाले कीटाणुओं को कामा बॅसिलस (Comma bacillus) कहते हैं। यह रोग बहुधा गर्मी और बरसात के आरम्भ में बहुत फैलता है। यह पानी या भोजन द्वारा शरीर में पहुँच जाता है और खूब बढ़ता है। इस रोग की पहली पहचान कै और दस्त का होना है और मुख्य पहचान पेशाब का बन्द हो जाना है। शरीर के मांस पेशिओं में ऐंठन आने लगती है। प्यास बहुत लगता है और २४ घंटे अथवा २ दिन में ही रोगी की मृत्यु हो जाती है। इस रोग को मक्खियाँ फैलाती हैं इसलिये घर को खूब साफ रखना चाहिये। रोगी को अर्क कपूर, या सॅलाइन इंजेक्शन (Saline injection) से बहुधा आराम हो जाता है। इससे मृत्यु बहुत होती है।
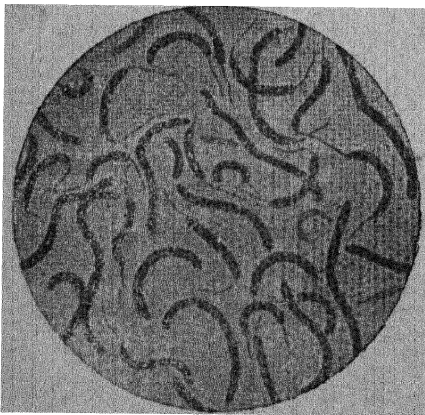
चित्र १५१—हैज़ा के कीटाणु

इस रोग से बचने के लिये सड़ी गली चीजों को न खाना चाहिये; टीका लगवा लेना चाहिये; ज़ल्द न पचने वाली वस्तुओं का सेवन न करना चाहिये; हो सके तो अपने पास एसेंशियल तेल (Essential oil); अमृतधारा अथवा कपूर का अर्क रखना चाहिये।

प्लेग (Plague)—यह कीटाणु एक खाश प्रकार के पिस्सुओं में पाया जाता है जो चूहों के शरीर पर उनके रक्त से अपना निर्वाह करते हैं। इस कीटाणु का नाम बैसिल्स पेस्टिस (Bacillus pestis) है यह आवश्यक नही है कि सारे पिस्सुओं में ये कीटाणु हों। यदि किसी पिस्सू में ये होते हैं तो रक्त में इससे उत्पन्न किये हुए विष के कारण चूहे की मृत्यु हो जाती है। अब कीटाणुओं से भरा हुआ पिस्सू उस चूहे को छोड़ देता है और दूसरे चूहे की खोज में इधर उधर फुदकता है। इस तरह बहुत से चूहों की मृत्यु हो जाती है। चूहे न मिलने पर या अकस्मात् जब यह पिस्सू मनुष्य पर आक्रमण करता है तब वह हम लोगों के रक्त में उस कीटाणु को छोड़ देता है।

यह पिस्सू एक फुट से अधिक ऊपर तक नहीं फुदक सकता इसलिये यदि इस बीमारी के फैलते ही मौजा पहने रहा जाय अथवा किसी भाँति पैर ढँक कर रखा जाय तो इस रोग के होने की कम सम्भावना होती है। कीटाणु के पहुँचने पर तेज़ ज्वर आता है, आँखें लाल हो जाती हैं और बगल, पाटे अथवा गर्दन पर गिल्टियाँ निकल आती हैं। इस प्रकार के प्लेग को ब्यूबॉनिक प्लेग (Bubonic Plague) कहते हैं। इससे हिन्दुस्तान में बहुत मृत्यु होती है।

इससे बचने के लिये टीका (Inoculation) ले लेना चाहिये जिसकी मीयाद ६ महीने तक रहती है। चूहों को मूसदानी में फँसाकर घर से निकाल देना चाहिये अथवा धुआँ देकर आ आँटे की तूतिया पड़ी हुई गोलियों का प्रयोग करा कर इन्हें मार डालना चाहिये। घर के कोनों को खूब स्वच्छ रखना चाहिए जिसमें पिस्सुओं के रहने के लिये स्थान न मिल सके। पैर में मोजा पैण्ट अथवा पाजामा पहने रहना चाहिये। यदि किसी को यह रोग हो जाय तो उसे रेड क्रास (Red Cross) की लारियों से छूत के अस्पताल

(Infections diseases hospital) भेज देना चाहिये।

मीयादी ज्वर (Typhoid)—इसको मीयादी ज्वर (Remittant fever) भी कहते हैं। यह टाइफो-बेसिलस (Typho-bacillus or Bacillus Coli) के द्वारा होता है। इसमें ज्वर बहुत तेज़ आता है और जल्द नहीं उतरता। १४, २८ अथवा ५६ दिनों में यह ज्वर उतरता है। तेज़ ज्वर के कारण बहुधा रोगी बक-झक (Delirius) भी करने लगता है और तत्पश्चात् उसकी मृत्यु हो जाती है। ज्वर लग-भग 102° F से 105° F तक बना रहता है। इस रोग को मोती झाला भी कहते हैं क्योंकि शरीर पर बहुत से छोटे छोटे दाने भी पड़ जाते हैं।
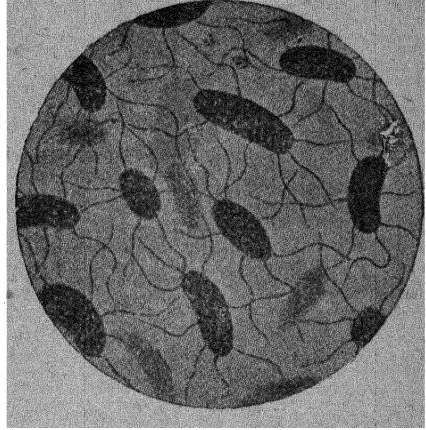
चित्र १५३—मीयादी रोग के कीटाणु।

इस रोग में रोगी को बहुत अधिक आराम और सेवा की आवश्यकता होती है। रोगी के विस्तरे और बर्तन अलग रहना चाहिये। उसका कमरा और कपड़े साफ सुथरे रहना चाहिये। यह बीमारी पानी और मक्खियों के द्वारा फैलती है।

हाइड्रोफोबिया अथवा रेबीज़ (Hydrophobia or Rabies) यह बीमारी पागल जानवर जैसे कुत्ता या गीदड़ के काटने से हो जाती है। ये कीटाणु इनके लार में रहते हैं। इनके काटने से मनुष्य भी पागल हो जाता है और पानी से डरने लगता है। इससे भी बहुत अधिक मृत्यु हो जाया करती थी। सूई (Anti-rabies injection) लेने से बहुधा रोगी अच्छा हो जाता है। इस रोग के कारण का अविष्कार और उसकी दवा सब से पहले लुईपास्तूर (Louis Pasteur) ने लगाया था।

चेचक अथवा माता (Small-pox)—इसको माता या चेचक कहते हैं। यह बीमारी छः प्रकार की होती है; जैसे छोटी माता, गलसुआ माता, मझली माता, बड़ी माता, इत्यादि। यह बीमारी मक्खियों से ही फैलती है। इसमें विशेष रूप से सफाई की आवश्यकता होती है। इससे बचने के लिये टीका (Vaccination) छः महीने की अवस्था में और फिर हर पाँच वर्षों पर लेना चाहिये। इस बीमारी के कीटाणु अत्यधिक नन्हें (Ultra-microscopic) होते हैं। इस रोग पर डाः जेनर (Dr. Jenner) ने विशेष काम किया है।

फंजाई पौधों पर आक्रमण करने वाले फन्जाई या प्लान्ट पेस्ट (Plant peste)

हरदा (Rusts)—ये कई प्रकार के बॅक्टीरिया वाले कीटाणु होते हैं जो गेहूँ और बारबेरी (Barberry) के पौधों पर ही अपना जीवन निर्वाह करते हैं। इनसे पृथक हो कर ये जीवित नहीं रह सकते। गेहूँ के पौधे पर ये तीन प्रकार के देखे गये हैं। (Yellow rusts) जो जनवरी के महीने में गेहूँ की पत्तियों पर आक्रमण करते हैं। ये हिमालय पहाड़ की तराई पर उगने वाले बारबेरी पौधे से आते हैं और अप्रैल में गेहूँ कटने के समय फिर बारबेरी पौधे पर वापस चले जाते हैं। इनका आना-जाना वायु द्वारा होता रहता है। (२) भूरा या काला रस्ट्स (Brown or black rusts) जो गेहूँ की पत्तियों और डंठल पर फरवरी के महीने में आक्रमण करते हैं। (३) नीला रस्ट्स (Pink rusts) जो केवल पत्तियों पर ही आक्रमण करते हैं। ये दोनों भी बारबेरी पौधे से आते हैं। इनके कारण गेहूँ के पौधे की मृत्यु तो नहीं होती परन्तु पौधा फल लगने के योग्य नहीं रह जाता। इन रोगों के फंगस को पकसीनिया ग्रेमिनिस (Puccinia graminis) कहते हैं (चित्र १५३)।

इस रोग से फल को बचाने के लिए बीज को सावधानी के साथ चुन लेना चाहिये परन्तु गेहूँ के ऐसे बीजों के उत्पन्न करने के प्रयोग क्रासपालिनेशन द्वारा बहुत से हुए हैं जिनमें इस रोग को रोकने अथवा सहन करने की शक्ति हो। इनकी बीमारी सहन करनेवाला बीज (Disease

resisting variety) कहते हैं ; जैसे पूसा नं० IV और पूसा नं० XII । गेहूँ के इस रोग के विषय में आगरा के डा० के. सी. मेहता (Dr. K-C. Mehta) ने विशेष कार्य किया है ।

चित्र १५४—गेहूँ के पत्ते पर हरदा रोग का प्रकोप।

स्मट्स (Smuts)—यह लगभग हर घासवाल पौधे में होता है ; जैसे—जौ, जई और गेहूँ । यह रोग बीज से ही उत्पन्न होता है । पौधे के उगने पर फल या दाने के स्थान पर काले काले दाने दिखलायी देते हैं । इनके पक जाने पर इसमें से बहुत सी भुरभुरी काले स्पोर्स निकलते हैं जो वायु के द्वारा इधर-उधर उड़ जाते हैं और कुछ मिट्टी में भी पड़े रहते हैं । इस रोग से फसल को बचाने के लिए बीज को 108°F तक पानी में गर्म कर लेना चाहिये, फिर बोरे पर सुखाकर बोना चाहिये या बहुत कमजोर फॉरमेलिन के घोल (Dilute formalin) से धोकर और फिर सुखा कर बोना चाहिये ।

मिल्डियूज (Mildews)—यह भी गेहूँ की बीमारी है । लेकिन जौ इत्यादि में भी होना सम्भव है ; इस रोग के होने से पत्तियों में सफेद सफेद धब्बे हो जाते हैं । पत्तियों की नसों में माइसीलियम घुस जाता है जिससे पत्तियों की हरियाली नष्ट हो जाती है । यह रोग गर्मियों में अधिक होता है और जाड़ों में कम ।

इन सारे रोगों के अतिरिक्त आलू के पौधे का फंगस, एरगाट फंगस इत्यादि हैं । आयरलैण्ड में एक समय सारी आलू की फसल इस रोग के कारण नष्ट हो गई थी । इन सारी बीमारियों से फ़सल को बचाने के लिए बीजों को गुनगुने पानी से या गर्म हवा से गरम करना चाहिये या रासायनिक रीति से फंजाई को नष्ट करना चाहिये, जैसे तूतिया (Copper Sulphate)

और चूने के घोल से बीजों को धो डालना चाहिये। गन्धक भी प्रयोग में लाया जा सकता है। कभी कभी फॉरमेलिन भी काम में लाया जाता है।

इनके अतिरिक्त कुछ प्रकार के कुकुरमुत्ता फंगस (Mushrooms) पेड़ों के छालों पर होते हैं और प्रायः छालों में घुसकर उनको हानि पहुँचाते हैं। कई प्रकार की भुकड़ियाँ भोजन, दही इत्यादि पर लग जाती हैं जिससे ये नष्ट हो जाते हैं। पानी में भी कई तरह के मोल्डस् (Moulds) होते हैं जो सुनहली मछलियों (Gold fish) पर आक्रमण करके उनको नष्ट कर देते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ फंगस रोग जानवरों तथा कीड़े-मकोड़ों को भी होते हैं। कुछ कुकुरमुत्ते भी ऐसे ही होते हैं जिनके खाने से आदमी की मृत्यु हो जाया करती है। पहचान के लिए उनमें नीचे की ओर प्यालानुमा अंग होता है जिसे मृत्यु का प्याला (Death cup) कहते हैं।

एल्जी, ब्रायोफाइटा और टेरिडोफाइटा के पौधों में से कोई ऐसा नहीं है जो मनुष्य को विशेष रूप से हानि पहुँचाते हों। केवल काई के पौधे के दीवार या फर्श पर लग जाने से पानी अन्दर पहुँच जाता है और दीवार या फर्श को हानि पहुँचती है। कभी कभी इस पर लोग फिसल भी जाते हैं। जंगली हालत में उगने से बगीचों को फर्न्स और अन्य पौधे हानि पहुँचाते हैं। बहुत से जिम्नोस्पर्म्स के पौधे भी जंगली दशा में हानि-कारक होते हैं।

इनके अतिरिक्त कुछ बीजवाले पौधे भी पूरे तौर से अथवा अधूरे पैरेसाइट्स (Total or partial parasites) होते हैं, जैसे आकाश बँवर या कस्कुटा आरोबैंक और बंझा इत्यादि।

अकाश बँवर या अमरबेलि (Cuscuta)—इसको अमरबेलि भी कहते हैं। इसका तना पीला होता है और किसी दूसरे पौधे, जैसे—नीबू, अंगूर इत्यादि के चारों ओर लिपटा रहता है। लिपटकर इन पौधों के भीतर यह बहुत से हॉस्टोरिया (Haustoria) भेजता है। हॉस्टोरिया एक प्रकार की पैरासाइटिक जड़ें हैं जो उस पौधे से उसको बनाये हुए भोजन को खींचकर अमरबेलि के तने में भेजती रहती हैं। अमरबेलि पीली होने के कारण अपना भोजन स्वयं नहीं बना सकती। इसमें

फल भी पैदा होते हैं और बीज भी पैदा होते हैं । ये भूमि पर गिर कर उग जाते हैं और किसी पौधे के चारों ओर लिपट जाने का प्रयत्न करने लगते हैं । लिपट जाने पर ज़मीन से लगी इनकी जड़ें अपना कार्य करना बन्द कर देती हैं, और हॉस्टोरिया काम करता रहता है । इसमें स्केली पत्तियाँ (Scaly leaves) भी होती हैं । बिना बीज के भी (Vegetatively) यह पौधा उगाया जा सकता है ।

चित्र १५५—अमरबेलि एक तने के चारों ओर लिपट रहा है ।

आरोबैंक (Orbanche)— ये जड़ पर आक्रमण करने वाले पॅरेसाइटस हैं । फूलगोभी, भंटा, पातगोभी के खेतों में ये बहुधा देखे जाते हैं । इनकी जड़ों में ये हॉस्टोरिया भेजते हैं जो कस्कुटा के हॉस्टोरिया से तीव्र होते हैं । इनके उगने
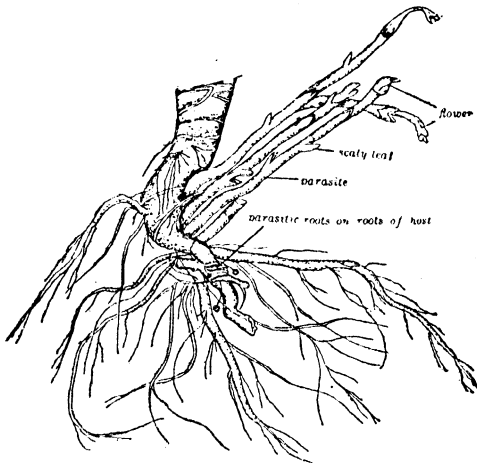
चित्र १५६—आरोबैंक गोभी के जड़ से निकल रहा है ।

के लिये उन पौधों का लगाव होना आवश्यक है जिनसे यह भोजन खींचता है। इसमें नीले फूल होते हैं जिनसे बीज निकलते हैं। जिस पौधे की जड़ पर यह आक्रमण करता है वह स्वस्थ फल देने के योग्य नहीं रह जाता और पौधा नष्ट भी हो जाता है।

बंझा (Loranthus)—इसको बंडा अथवा बंझा कहते हैं। ये आम, जामुन शीशम इत्यादि पेड़ों के तनो पर उगते हुए देखे गये हैं। इनके उगने की जगह पर गाठें बन जाती हैं। इनसे जड़ें निकल कर उन पौधों के तनों में घुस जाती हैं और भोजन खींचने लगती हैं। इस परसाइट में पत्तियाँ भी होती हैं जो हरी होती हैं इसलिये यह पौधा अपना भोजन भी बना सकता है। इसलिये इसको अधूरा परेसाइट (Partial parasite) कहते हैं। इससे पौधे को बचाने के लिये पौधे के उन सारे तनों को काट डालना चाहिये जिन पर ये उगते हुए दिखलायी दें। इस परेसाइट में भी फूल और बीज होते हैं जो लसदार होते हैं और आसानी के साथ दूसरे पौधे के तनों पर चिपक जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त और भी बहुत हैं इस तरह के परेसाइट्स होते हैं।
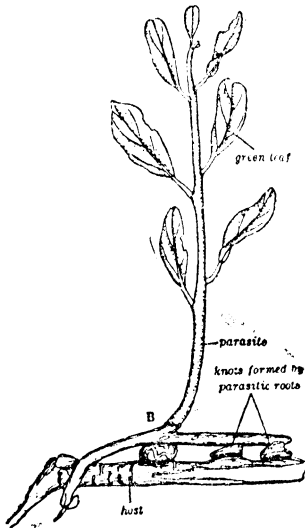
चित्र १५७—बंझा जो दूसरे पौधे के तने पर उग रहा है।

अभ्यास

१, पारजीवक भुकडियाँ (Parasitie fungi) क्या हैं ? इनके अधिक से अधिक उदाहरण तुम दो। उसमें से किन्हीं दो को चुन लो और बृहद् रूप में उनका वर्णन करो कि वे किस प्रकार हानिकारक हैं ?

[H. S. 1934]

२. पौधों पर जीवन-निर्वाह करनेवाले किन्ही दो जीवाणु (Pests) की जीवनी का वर्णन करो और बतलाओ तुम उन्हें किन किन उपायों से नष्ट करोगे ? [H. S. 1935]

३. 'पारजीवक क्या है ? किन्हीं दो पौधों के पारजीवकों का नाम लिखो। बतलाओ वे किस प्रकार की हानि पहुँचाते हैं और उस हानि को रोकने के हेतु तुम किन उपायों को प्रयोग में लाओगे ? [H. S. 1936]

४. निम्नलिखित बीमारियों को फैलने से रोकने के लिए तुम कौन से साधारण उपाय करोगे :

अँतरिया, क्षई, प्लेग और हैजा। [H. S. 1939]

५. निम्मांकित पर नोट लिखो :—

जीवाणु [H. S. 1938]; बंझा; रैबीज (Rabies); हास्टोरिया; रोग-रक्षक बीज (Disease resisting variety)।

६. दो किन्हीं बीज प्राप्त करने वाले पारजीवक का नाम लिखो। उनका वर्णन करो और बतलाओ कि वे किस प्रकार हानिकारक हैं ?

७. वर्णन करो कि चेचक और प्लेग किस प्रकार संक्रामक रूप धारण कर लेते हैं ? उनसे बचने के तुम कौन कौन से उपाय करोगे और उन बीमारियों को फैलने से तुम किस प्रकार रोकोगे ?

८. 'पौधों में पारजीवक' पर एक लेख लिखो।

९. वर्णन करो कि कीटाणु किस प्रकार मनुष्य को हानि पहुँचाते हैं ? तुम उनके हानिकारक दशाओं से रोकने के लिए कौन कौन से उपाय काम में लाओगे ?

१०. भिन्न भिन्न प्रकार के कीटाणुओं का नाम लिखो। प्रत्येक वर्ग के एक उदाहरण का वर्णन करो जो बीमारी फैलाती है।

अध्याय १३

पैरासाइट्स और रोग पैदा करनेवाले कीटाणुओं की वृद्धि की रोक इत्यादि

(Control of Parasites and disease-Producing Organisms etc.)

इस संसार में इतने अधिक परासाइट्स और रोग उत्पन्न करनेवाली वस्तुएँ हैं और इनका बढ़ना इतनी तेजी के साथ होता है कि उनकी तीव्रता को रोकना आवश्यक है अन्यथा ये किसी भी दूसरे जीवों को रहने नहीं दे सकते। यह रोक तीन रीतियों से होता रहता है। (१) भौतिक (Physical), (२) रासायनिक (Chemical) और (६) प्राकृतिक (Natural)।

भौतिक—यह गर्म करने या सुखाने से होता है अर्थात् यदि किसी वस्तु पर भुकड़ी या दूसरा फंजाई या बक्टीरिया लग जाय तो उस वस्तु को खूब गर्म कर देने से ये नष्ट हो जाते हैं। अथवा इन कीटाणुओं के आक्रमण करने के पहले ही यदि वस्तुओं को गर्म अथवा सूखा रक्खें तो उनपर इनका आक्रमण न हो सकेगा। बहुत ठंडी रहने पर भी इनसे बचाव हो सकता है; जैसे बर्फ से चारों ओर ढंक देने से। यही कारण है कि माँस अरजेंटाइनर (Argentine) ऐसे दूर प्रान्त से बर्फ या ठंडा करने वाले (Refrigerators) यंत्र से घेर कर विलायत अथवा अन्य देशों में भेजा जाता है। मछलियाँ भी इसी प्रकार दूर दूर भेजी जाती हैं।

रसायनिक—यह रीति तीन प्रकार के होते हैं (१) गैस वाले, (२) तरल और (३) ठोस। इस तरह के गैसें, जैसे नीम की पत्ती, लोहबान, या गंधक जलानेसे पैदा होते हैं। ये कमरों या घरों में रहने वाले बक्टीरिया को मार डालते हैं। इनके अतिरिक्त और भी गैसें, जैसे फारमेलीन गैस से भी ऐसा ही प्रभाव पड़ता है। तरल पदार्थों में फेनाइल (Phenyle) और पोटैशियम परमैंगनेट (Potassium permaganate) बहुधा काम में लाया जाता है।

फेनाइल नाबदान, पाखाना इत्यादि धोने के काम में आती है और पोटैशियम परमैंगनेट के पतले घोल से फोड़े, जख्म या दांतों को धोया जाता है। कुएँ के पानी को साफ रखने के लिए भी इसे काम में लाते हैं। इसमें आक्सीजन की मात्रा इतनी अधिक होती है कि बैक्टीरिया या रोग उत्पन्न करनेवाली वस्तुओं का अन्त हो जाता है। कुछ ठोस पदार्थ भी इस तरह के हैं जिनसे ऐसा ही काम लिया जाता है, जैसे तूतिया, बेरियम सल्फेट इत्यादि।

टीका लेना (Vaccination etc)—मनुष्य ने कुछ ऐसे भी उपाय निकाल रक्खे हैं जिनसे यदि बैक्टीरिया शरीर में पहुँच भी जायँ तो उनका प्रभाव रोका जा सके और उनका अन्त भी हो जाय। इन उपायों में से टीका भी एक है। हानिकारक बैक्टीरिया को रासायनिक रीति से पालते हैं और उनमें कुछ रसायन मिलाकर उसका वैक्सीन (Vaccine) तैयार करते हैं अथवा दूसरे किसी पशु में इन बैक्टीरिया को प्रवेश करा देते हैं जिस पर यह हानि नहीं पहुँचाते ; फिर उसके रक्त को लेकर वैक्सीन तैयार कर लेते हैं जैसे चेचक का वैक्सीन गाय के थनों में उसमें चेचक का बैक्टीरिया प्रवेश करा कर बनाते हैं।

ऐसे कारखानों को जहाँ वैक्सीन बनाया जाता है पैस्तूर इन्स्टिट्यूट (Pasteur Institute) कहते हैं। इस उपाय को सबसे पहले एक फ्रांसीसी ने जिसका नाम लुई पैस्तूर (Louis Pasteur) था, निकाला था। आसपास किसी बीमारी के उत्पन्न होने पर उस तरह का वैक्सीन मनुष्य के शरीर में सूई द्वारा प्रवेश करा दिया जाता है या चर्म पर थोड़ा जख्म करके लगा दिया जाता है, जैसे चेचक में। वैक्सीन के पहुँचने पर बहुधा थोड़ी हरारत आती है। अब यदि उस तरह के कीटाणु का आक्रमण हुआ तो पहले वैक्सीन द्वारा पहुँचाये गये विपरीत प्रभाव से वे नष्ट हो जाते हैं या उनके बनाये हुए विष को दबा देते हैं।

प्राकृतिक (Natural)—हम लोगों के तथा अन्य प्राणिमात्र के शरीर में रक्त की नालियों की तरह एक सफेद नालियों का जाल है जो बहुत सूक्ष्म होता है। इसको लिम्फैटिक सिस्टम (Lymphatic system) कहते

हैं। यह तो पहले ही बतलाया जा चुका है कि हम लोगों के शरीर पर यदि किसी कीटाणु का आक्रमण होता है तो रक्त में रहनेवाले सफेद अणु उनको निगल जाते हैं या मार डालने का प्रयत्न करते हैं। लेकिन बहुधा वे विजय प्राप्त नहीं कर पाते। इसलिए लिम्फैटिक सिस्टम सफेद अणु को पैदा करने और बँट जाने में सहायता पहुँचाते हैं ताकि कीटाणु से भलीभाँति सामना हो सके। बहुधा इससे भी पूरा काम नहीं चलता। इसलिए लिम्फैटिक सिस्टम में रहने वाले सफेद तरल पदार्थ लिम्फ (Lymph) से कीटाणु के शरीर में उत्पन्न किये हुए विष (Toxin) का विपरीत विष (Anti-toxin) उत्पन्न होता है जिसमें विष दब जाय। लिम्फ में किसी भी विष के विपरीत विष उत्पन्न करने की शक्ति है। यदि ऐसा न होता तो मनुष्य का जीवन इस संसार में असम्भव हो जाता।

अभ्यास

१. कीटाणुओं के वृद्धि को रोकने के लिए तुम कौन कौन से उपाय करोगे। उनका वर्णन करो।

२. नोट लिखोः—लुई पास्तूर; रिफ्रीजरेटर्स; टीका लेना; फेनाईल।

३. बीमारी पैदा करने वाले कीटाणु की वृद्धि कैसे रोकी जा सकती है? मनुष्य के शरीर में प्रकृति ने इस शक्ति को किस सीमा तक दी है?

कुछ साधारण प्रश्न

१. प्राणीमात्र और वनस्पतिमात्र के भोजन की तुलना करो और बतलाओ वे अपने भोजन को कैसे प्राप्त करते हैं।

२. साँस लेने और फोटो-सिन्थेसिस में कौन कौन से अन्तर हैं? उनसे पौधों पर क्या शारीरिक प्रभाव पड़ता है? प्रयोग द्वारा समझाओ।

३. जिन तालाबों में जल के पौधे (जैसे सिंघाड़ा, सेवार, लेदार इत्यादि) रहते हैं उनमें से किसी गैस के छोटे छोटे बुलबुले निकला करते हैं? ये बुलबुले क्या हैं और इनके निकलने का क्या कारण है! क्या रात में भी ऐसे बुलबुले निकलते हैं? कारण सहित उत्तर दो।

४. निम्नलिखित पर लेख लिखो:—'पौधों का भोजन एकत्रित करना'।

५. 'मैटामारफोसिस' क्या है? मच्छर में यह किस प्रकार होता है? यह मच्छर कौन सी बीमारी फैलाते हैं? क्या सभी प्रकार के मच्छर और नर, मादा दोनों उस बीमारी को फैलाते हैं? ठीक ठीक समझाओ।

६. मनुष्य के रक्त में पाये जाने वाले जीवाणु की जीवनी का वर्णन करो। वह जीवाणु मनुष्य के रक्त में कैसे प्रवेश कर पाता है?

७. निम्नलिखित पर लेख लिखो:—मनुष्य को पौधों से लाभ।

८. निम्नलिखित में क्या अन्तर है—(१) मनुष्य और मेंढक के अग्रबाहुओं में (२) टैडपोल और छोटी मछली में (३) मनुष्य और मेंढक के रक्त में (४) तना और जड़ में

९. मनुष्य के लगभग सभी बीमारियों में यकृत का ही दोष बतलाया जाता है। क्या तुम इसका कारण बता सकते हो?

१०. मनुष्य और मेंढक के हृदय की बनावट में क्या अन्तर है?

११. 'एक्सक्रीशन' क्या है? यह 'सेक्रीशन' से किस भाँति भिन्न है? प्रत्येक के दो उदाहरण दो।

१२. नोट लिखो:—मेंढक में गाँठदार अंग; मनुष्य में रेलफेक्स क्रिया; पौधों में इन्द्रिय विशिष्टता ; कीटाणुओं की वृद्धि।

१३. निम्नलिखित से क्या लाभ होता है:—(१) रीढ़ की हड्डी में बहुत से टुकड़ों का होना (२) जड़ों में छोटे छोटे बालों का होना (३) साँस लेने के विपरीत कार्बन-एसिमिलेशन से।

१४. निम्नांकित स्थानों पर रक्त में क्या परिवर्तन होता है:—(१) फेफड़े में (२) केशिकाओं में (३) शरीर में।

१५. मनुष्य के चर्म की बनावट को सुन्दर चित्र द्वारा दर्शाओ। यह मेंढक के चर्म से कहाँ तक अन्तर रखता है ?

१६. कीड़े-मकोड़े-भक्षक पौधे क्या हैं ? कोई दो उदाहरण दो। उनके भोजन प्राप्त की रीति का संक्षिप्त विवरण दो ?

१७. 'ट्रान्सपिरेशन' क्या है ? पौधों में इससे क्या लाभ होता है ?

१८. उदाहरण सहित वर्णन करो कि पत्तियाँ किन किन रीतियों से ट्रान्सपिरेशन की अधिकता को रोक पाती हैं।

१९. कीटाणु बहुधा हानिकारक ही कहे जाते हैं। यह विचार कहाँतक ठीक है ? दो लाभदायक और दो हानिकारक कीटाणुओं का वर्णन करो।

२०. संक्षेप में लिखो कि निम्नलिखित वैज्ञानिक जीव-विज्ञान के क्षेत्र में क्या कार्य किये हैं:—(१) श्रीजगदीश चन्द्र बोस (२) श्री चार्लस डारविन (३) श्रीलुई पास्तूर।

२१. वर्तमान समय में मनुष्य ने कहाँ तक नये पौधों की प्राप्ति की है और स्वयम् पौधों में वर्ण-सेंचन की क्रिया की है।

२२. मेंढक के टैडपोल की अवस्था में साँस लेने की क्रिया और भोजन प्राप्त करने की विधि में क्या परिवर्तन होते हैं ?

२३. पौधों में दूषित पदार्थों का विकास कैसे होता है ? इस क्षति की पूर्ति कैसे होती है।

२४. निम्नलिखित पर संक्षिप्त लेख लिखो:—(१) जीवन का जाल (२) जीवित रहने का संघर्ष। ये क्रियाएँ जीवित पदार्थों में किस प्रकार हाती हैं ?

२५. उन मुख्य पौधे और जानवरों का नाम लिखो जिन्हें तुमने अपने स्कूल के जीव-संग्रहालय के लिए एकत्रित किया हो। उन के एकत्रित

करने से तुम्हें और विद्यालय को क्या लाभ पहुँचा है ? अपने एकत्रित किए हुए जीवों में किसी एक पौधा और एक जानवर का वर्णन करो।

२६. मेंढक के पाचन अंगों का एक चित्र बनाओ और बतलाओ किस प्रकार भोजन का पाचन होता है ।

२७. कुत्ते पर साधारणतया आक्रमण करने वाले तीन जीव पैरासाइट्स का वर्णन करो ।

२८. संक्षिप्त टिप्पणी लिखो:—फफूँदी; दीमक (Jermites); ईस्ट; जोंक; अपेण्डिसाइटीज; मनुष्य के आँख की बीमारियाँ; विटामिन्स; वैक्सिन; बहु-मुत्र रोग; पात-जड़ें; हारमोन्स; रस-सुत्र-रहित गाढे (Ductless glands); प्लीहा; हीमोग्लोबिन ।

२९. कुछ ऐसे कीड़े-मकोड़े का नाम बताओ जो मनुष्य में बीमारी फैलाते हैं । इन कीड़े-मकोड़ो की वृद्धि किस भाँति रोकी जा सकती है ।

३०. हरे पौधों के भोजन के बारे में तुम क्या जानते हो ? वे भिन्न भिन्न वस्तुओं को जिनसे पौधों का भोजन बनता है कहाँ से प्राप्त करते हैं ?

३१. किस प्रकार के पौधे मनुष्य को लाभप्रद हैं और वे किस प्रकार से लाभ पहुँचाते हैं ? किस प्रकार के पौधे मनुष्य को हानि पहुँचाते हैं और वे किस रीति से हानि पहुंचाते हैं ?

३२. उन भिन्न भिन्न प्रकार के भोजनों का नाम लिखो जिन्हें हम लोग ग्रहण करते हैं । भोजन करने के पश्चात् उनमें क्या परिवर्तन होता है और फिर अन्त में शरीर उनसे किस भाँति लाभ उठाती है ?

३३. मेंढक में रक्त प्रवाह को दर्शाने के हेतु उचित चित्रों को बनाओ ।

३४. मनुष्य अथवा मेंढक के अन्न-प्रणाली से निकले हुए भिन्न-भिन्न रसों के प्रभाव का प्रयोग द्वारा वर्णन करो ।

३५. निम्नलिखित पर सुन्दर लेख लिखो:—

(१) मनुष्य का घरेलू जानवरों से सम्बन्ध ।

(२) कीटाणुओं से हानि और लाभ ।

(३) जीवन की भिन्न भिन्न दशाओं के अनुसार पौधों के अंगों की बनावट ।

हाई स्कूल परीक्षा

यू० पी० बोर्ड

१९४३

१. जीवधारी और निर्जिव में क्या अन्तर है ? निम्नलिखित को दोनों वर्गों में वर्गीकरण करो:—

आलू; घोंघा, इंजन; बाल; चिलगोजा; फफूंदी,

२. रेंडी अथवा चने के बीज के उगने की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं को नाम-करण किए हुए चित्रों के द्वारा स्पष्ट करो।

३. हरे पौधों में स्टार्च बनाने के लिए रोशनी और कार्बन डाइ आक्साइड की आवश्यकता को विदित करने के हेतसाधारण प्रयोगों का वर्णन करो।

४. मेंढक के धमनी-प्रणाली का चित्र की सहायता से संक्षेप में वर्णन करो।

५. उन कीड़े-मकोड़ों का संक्षिप्त विवरण लिखो जो बीमारियाँ फैलाते हैं।

६. किसी साधारण फूल का वर्णन लिखो जिसे तुमने पढ़ा है। फूलों को अपने सुगंध और चमकीले रंग से क्या लाभ होता है ?

७. निम्नलिखित का क्या कारण है:—

(क) मेंढक के शरीर में गर्दन नहीं है।

(ख) मेंढक के मुख में जिह्वा आगे की ओर जुटी रहती है और पीछे स्वतन्त्र

(ग) मेंढक के पैर की पिछली उँगलियाँ जुटी रहती हैं।

(घ) मेंढक की आँखें उभड़ी हुई होती हैं।

१९४४

१. उन वर्गों के क्या क्या मुख्य गुण हैं जिनका उदाहरण 'मेंढक' और 'मनुष्य' हैं। निम्नलिखित प्राणिमात्रों का वर्गीकरण करो:—

चमगादड़; जोंक; गिलहरी; बिच्छू; ह्वेल; मकड़ी; घड़ियाल ; केचुआ; छिपकिली; तितली ।

२. निम्नलिखित में से किन्हीं दो का उत्तर दो:—

(क) जीवधारी को भोजन से क्या लाभ है ?

(ख) नाखून और रीढ़ की हड्डी से क्या क्या मूख्य लाभ हैं ?

(ग) मेंढक की पिछली टाँगे क्यों लम्बी होती हैं और उनके शरीर का ऊपरी भाग निचले भाग से क्यों अधिक काला होता है ।

३. मेंढक के आँख का सुन्दर और नामकरण किआ हुओ चित्र बनाओ । आँख का कार्य किस भाँति होता है ?

४. फलों और बीजों का बिखरना क्यों आवश्यक है ? किन्हीं दो फलों का नामकरण किया हुआ चित्र बनाओ और प्रत्येक के बिखरने की विधि का वर्णन करो ।

५. बीज के उगने के लिए किन किन बातों का होना आवश्यक है ? कन्हीं दो आवश्यकताओं को सिद्ध करने के हेतु प्रयोगों का वर्णन करो ।

६. निम्नलिखित में से किन्हीं पाँच पर टिप्पणी लिखो:—

(क) हैज़ा; (ख) हाइबरनेशन; (ग) लार; (घ) शब्द-कोष्ट; (च) टेंड्रिल्स; (छ) अतरिया बुखार;

७. नये पौधों को प्राप्त करने के लिए भिन्न भिन्न रीतियों का चित्रों की सहायता से वर्णन करो । प्रत्येक का दो उदाहरण दो ।

८. एक चित्र बनाओ जिसमें मेंढक के निम्नलिखित भाग ठीक ठीक स्थानों पर दर्शाए हुए हों—ओवरीज़; प्लीहा; पित्त की थैली; यकृत; हृदय; वृक्क ।

१९४५

१. मनुष्य के पाचन प्रणाली का नामकरण किया हुआ चित्र बनाओ । किस भाँति चर्बी और पोटीन पचते हैं ?

२. साँस लेने और फोटो सिन्थिसिस में क्या अन्तर है ? चित्र की सहायता से एक प्रयोग का वर्णन करो कि पौधे साँस लेते हैं ।

३. 'रेफलेक्स कार्य' से तुम क्या समझते हो ? एक चित्र की सहायता से इसे दर्शाओ। जीवधारियों में रेफलेक्स कार्य से क्या लाभ है ?

४. निम्नलिखित में से किन्हीं पाँच पर नोट लिखोः—

सेंचन क्रिया; आइरिस; आसमोसिस; जड़-दबाव; थाइरॉयड ग्लाण्ड; शब्दकोष्ट (Vocal sacs); और आँख की झिल्ली।

५. 'बैक्टीरिया, हमारे मित्र' पर एक संक्षिप्त लेख लिखो।

६. निम्नलिखित में से किन्हीं चार को संक्षेप में वर्णन करो कि वे कहाँ पाये जाते हैं और उनका क्या कार्य है:—

कार्क; दालियाँ; स्टोमेटा; रक्त की श्वेत अणुएँ; थूक अथवा लार; टेन्ड्रिल्स।

७. मेंढक के अण्डों की प्राप्ति और उनके वृद्धि के विधि का संक्षेप में वर्णन करो।

१९५६

१. वनस्पतिमात्र और प्राणिमात्र को पहचानने के कौन कौन से गुण हैं ? निम्नलिखित का दोनों वर्गों में वर्गीकरण करो :—

चींटी ; अमरबेलि ; केंचुआ ; घोंघा ; कीटाणु ; बिच्छू ; काई ; टैडपोल ; फर्न ; टोडस्टूल ; टिड्डी ; केटरपीलर।

२. मेंढ़क के हृदय का एक चित्र बनाओ और सभी भागों का नामकरण करो। रक्त के मार्ग को तीर की सहायता से चित्र में दिखलाओ और उसका वर्णन भी करो।

३. पौधे में कौन कौन से मुख्य भोजन-पदार्थ एकत्रित किये जाते हैं ? उनकी उपस्थिति को तुम किस रासायनिक रीति से ज्ञात करोगे ? वे पौधे के किस भाग में एकत्रित किये जाते हैं और उनसे पौधों को क्या लाभ है ? उदाहरण दो।

४. मनुष्य में श्वाँस लेने की विधि का ठीक वर्णन लिखो। अपने उत्तर को दर्शाने के हेतु उचित चित्रों को बनाओ।

५. 'ट्रांसपिरेशन' से तुम क्या समझते हो ? प्रयोग द्वारा तुम

कैसे सिद्ध करोगे कि यह क्रिया हरे पौधों में होता है ? पौधों के किस लाभ का यह है ?

६. निम्नलिखित में से किन्हीं चार का कारण लिखो :—

(क) रीढ़ की हड्डी एक ठोस छड़ की भाँति नहीं है बल्कि उसमें बहुत सी छोटी छोटी हड्डियाँ (छल्ले) रहते हैं ।

(ख) किसी कमरे में उगता हुआ पौधा खिड़की की ओर बढ़ने का प्रयत्न करता है ।

(ग) मटर की फसल से भूमि उपजाऊ हो जाती है ।

(घ) प्राणिमात्र को घूमने की आवश्यकता होती है ।

(च) दफ्तर में काम करने से मनुष्य अपने को उतना जल्द भूखा नहीं प्रतीत करता जितना कि पहाड़ पर चढ़ने से ।

७. निम्नलिखित में से किन्हीं चार पर टिप्पणी लिखो :—

आलू की आँखें ; मेटामारफोसिस ; बैक्टीरिया ; प्यूपा ; दालियाँ ; जड़ की बालें ; हाइबरनेशन ।

८. "कीड़े-मकोड़ों के द्वारा बीमारी का फैलना"; इस पर एक लेख लिखो ।

१९४७

१. वर्णन करो कि मेंढ़क अपने जीवनी के भिन्न भिन्न दशाओं में किन किन प्रकार का भोजन करता है ? मेंढ़क के भोजन लेने और निगलने की रीतियों का वर्णन करो ।

२. आसमोसिस के सिद्धान्त को समझाओ और प्रयोग द्वारा दर्शाओ । किन दशाओं में यह पौधों में होता है ? इससे पौधे को क्या लाभ है ?

३. (क) किस रूप का मच्छर मलेरिया फैलाता है और इसे तुम दूसरे से कैसे पहचानोगे ?

(ख) मलेरिया का कीटाणु किस प्रकार स्वस्थ मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर जाता है ?

(ग) इन कीटाणुओं से बचने के लिए कौन कौन सी रीति तुम काम में लाओगे ? कारण लिखो ।

४. सेंचन-उत्पादन और वनस्पति-उत्पादन में क्या अन्तर है ? प्रत्येक से पौधे और माली को क्या लाभ और हानि है ?

५. मादा मेंढ़क के पुत्रोत्पादक अंगों का सुन्दर चित्र बनाओ। प्रत्येक भागों का नामकरण करो और उनके कार्य का वर्णन करो ।

६. वर्णन करो कि किस भाँति जड़ से प्राप्त भोजन पदार्थ पौधे की पत्तियों तक पहुँचता है और पत्तियों से बना हुआ भिन्न भिन्न भोजन-पदार्थ पौधे के भिन्न भिन्न ागों तक पहुँचता है ?

७. निम्नलिखित में से किन्हीं चार का कारण लिखो :—

(क) मेंढ़क क्यों ठण्ढे और नम स्थानों में रहना पसन्द करता है।

(ख) जाड़े के दिनों में बीज सरलता से क्यों नहीं जमते ?

(ग) घास के खेल-मैदान को खर पतवार से रहित करना बहुधा क्यों कठिन हो जाता है ?

(घ) क्यों प्राणिमात्र में बहुधा मस्तिष्क होता है, पर वनस्पति में नहीं होता ?

(च) झाड़ी को काटने पर वह क्यों घने रूप में बढ़ जाती है ?

८. "प्राणिमात्र और वनस्पतिमात्र में पारिजीवक भाव" पर एक लेख लिखो ।